प्रेम में भगवान
तथा अन्य कहानियाँ

प्रेम म भगवान
तथा अन्य कहानियाँ

मूल : लियो टॉल्स्टाय

रूपान्तर · जैनेन्द्र कुमार
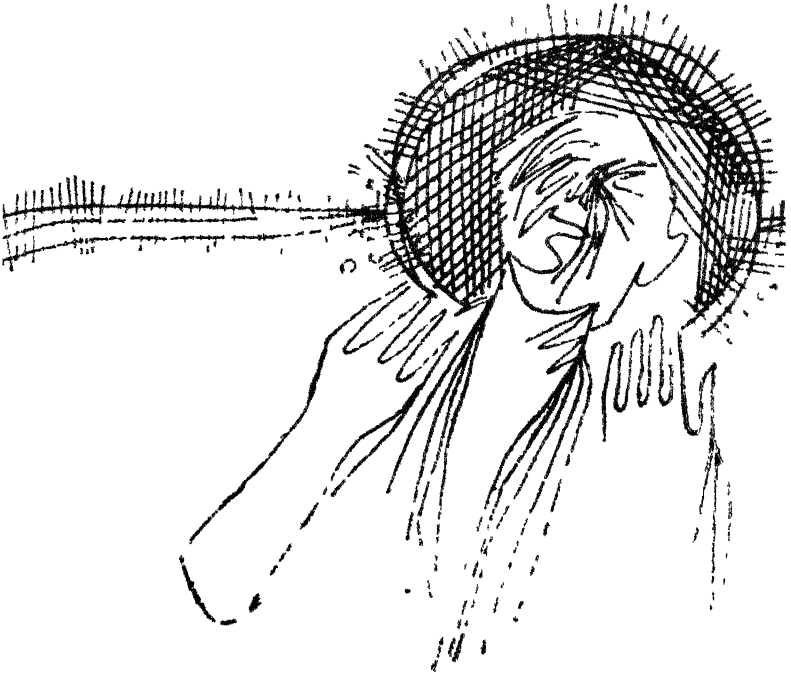
दो शब्द !

घटनाएँ रोज-रोज होती और बीतती रहती है पर उनमे अपने मे सकेत रहता है उसका भी जो व्यतीत नही होता सदा वर्तमान रहता है। उस शाश्वत की दिशा मे ही धर्म और साहित्य के मनीषियो की चेष्टा और साधना चलती रही है। 'काऊट लियो टॉल्स्टाय' उन मनीषियो मे अनुपम माने जा सकते है। उपन्यासकार के रूप मे विश्व मे उन्हे मूर्धन्य माना जाता है पर उनकी कहानियाँ अपने क्रम मे उनसे अलग है। साहित्य की आधुनिक परम्परा के लोग इन कथाओ को साहित्य की कोटि मे रखने से बचना चाहते है। साहित्य यदि जीवन के ध्रुव मूल्यो का निदान और अनुसधान ही नही तो क्या है? इस दृष्टि से इन कथाओ को उनके उपन्यास साहित्य से भी बढकर माना जा सकता है। इनके कारण उनको साहित्यकार से भी ऊपर ऋषि कहा जा सकता है।

मैंने अनुवाद मे कथाओ की आत्मा पर विशेष ध्यान दिया है और अनुवाद को शाब्दिक रखना आवश्यक नही माना है। जहाँ उचित जान पडा वहाँ वातावरण को और पात्रो के नामो को भी स्वदेशी बन जाने दिया है।

सकलन मे कुछ मेरी भी ऐसी रचनाएँ सम्मिलित कर ली गई है जो तनिक उनसे मिलती-जुलती थी। साहस पूर्वक मैंने इसकी अनुमति भी प्रकाशक को दी है इसके लिये शायद मैं अक्षम्य नही समझा जाऊँगा।

२५ दिसम्बर, ७६ जैनेन्द्र कुमार

नई दिल्ली—११०००२

अनुक्रम

: १ :

प्रेम में भगवान

एक नगर मे मार्टिन नाम का एक मोची रहा करता था। नीचे के तल्ले मे एक तग कोठरी उसकी थी। वहाँ से खिडकी के द्वारा सडक नजर आती जहाँ आने-जाने वालो के चेहरे तो नही, पर पैर दिखाई दिया करते थे। मार्टिन लोगो के जूतो से ही उनको पहचानने का आदी हो गया था। क्योकि वहाँ एक मुद्दत से रहता था और बहुतेरे लोगो को जानता था। पास-पडौस मे शायद कोई जोडा जूता होगा जो उसके हाथो से न निकला हो। सो खिडकी की राह वह अपना ही काम देखा करता। कुछ जोडियो मे उसने तला बैठाया था तो कुछ मे और मरम्मत की थी। कुछ ऐसे भी होते कि पूरे के पूरे उसी के बनाये हुए। काम की मार्टिन को कमी नहीं थी, क्योकि काम वह सचाई से करता था। माल अच्छा लगाता और दाम भी वाजिब से ज्यादा नहीं लेता था। बडी बात यह थी कि वह वचन का पक्का था। जिस दिन की माँग होती अगर उस दिन पूरा करके दे सकता तो वह काम ले लेता था, नहीं तो साफ कह देता था। वादे करके झुठलाता नहीं था। इसलिए आस-पास सरनाम था और काम की उसके पास सदा ही भरमार होती।

यो आदमी वह नेक था और नीति की राह उसने कभी छोडी न थी

और उमर ज्यादा होने पर तो वह और भी आत्मा की भलाई की और ईश्वर की बातें सोचने लग गया था। अपना निजी काम शुरू करने का वक्त आने से पहले ही, यानी जब वह दूसरे के यहाँ मजदूरी पर काम किया करता था, तभी उसकी स्त्री का देहान्त हो गया था। पीछे एक तीन बरस का बच्चा वह छोड गई थी। बालक तो और भी हुए थे, पर बचपन मे ही सब जाते रहे थे। पहले तो मार्टिन ने सोचा कि बच्चे को देहात मे बहन के यहाँ भेज दूँ। पर फिर बालक को पास से हटाने को उसका जी नही हुआ। 'वहाँ दूसरे के घर बालक को जाने क्या भुगतना पडे क्या नही! इससे चलो अपने पास ही जो रहने दूँ।'

सो मार्टिन नौकरी छोड, घर किराये ले, बच्चे के साथ वही रहने और अपना काम करने लगा। पर बालक का सुख उसकी किस्मत मे न लिखा था। बालक बारह बरस का हो चला था और उम्मीद बँधने लगी थी कि बाप के काम मे अब कुछ सहाई होने लगेगा कि तभी आया बुखार, हफ्ते भर रहा होगा और बालक उसमे चल बसा! मार्टिन ने बच्चे को दफनाया, लेकिन मन मे उसके ऐसा दु ख समा गया, ऐसा दु ख कि ईश्वर तक को कोसने को जी होता था। दु ख मे बार-बार वह कहता कि हे भगवान! मुझे भी उठालो। तुम कैसे हो? मेरा इकलौता, नन्ही-सी उमर का, जो मेरे प्यार का बच्चा था, उसे तो तुमने उठा लिया और मुझ बूढे को छोड दिया! सो इस करनी पर जैसे उसने हठ ठान कर परमात्मा को अपने से बिसार दिया।

एक दिन उसी के गाँव के एक बुजुर्ग, जो घर छोड पिछले आठ बरस मे तीरथ-तीरथ घूम रहे थे, यात्रा की राह मे मार्टिन के पास आये। मार्टिन ने अपने दिल का भाव उनके आगे खोल दिया और सब दु ख कह सुनाया। बोला—"अब भाई मुझे जीने की चाह नही रह

गई है। बस, भगवान करे मै जल्दी यहाँ से जाऊँ। तुम्ही कहो जग मे अब कौन आस मुझे बाकी है।"

उन वृद्ध बाबा ने कहा—"ऐसी बात मुँह से नही कहने, मार्टिन ! ईश्वर की लीला भला हम क्या जाने ! कोई हमारा चाहा यहाँ थोडा ही होता है। ईश्वर की मर्जी ही चलती है। उनकी ऐसी मर्जी है कि बच्चा चला जाय और तुम जीओ, तो इसी मे कोई भलाई होगी और जो निराशा की बात करते हो तो वजह है कि तुम बस अपने सुख के लिए रहना चाहते हो।'

मार्टिन ने पूछा—'नही तो भला किसके लिए रहना चाहिए ?'

वृद्ध ने कहा—'ईश्वर के लिए, मार्टिन ! उसने हमे जीवन दिया। तो उसी के लिए हमे रहना चाहिये। उसके निमित्त रहना सीख जाओ कि फिर कोई क्लेश भी न रहे। फिर सब सुफल हो जाय।'

सुनकर मार्टिन कुछ देर चुप रहा। फिर बोला—पर ईश्वर के लिए रहना कैसे होगा ?'

वृद्ध ने उत्तर दिया—'सन्त लोगो के चरित से पता लग सकता है कि ईश्वर के लिए जीने का भाव क्या है। अच्छा तुम बाँच तो सकते हो न ? तो इजील की एक पोथी ले आना। उसे पढना। उसमे सब लिखा है। उससे पता लग जायगा कि ईश्वर की मर्जी के अनुसार रहना कैसा होता है।'

ये वचन मार्टिन के मन मे बस गये। उसी दिन वह गया और बड़े छापे की इजील की पोथी ले आया और पढना शुरू कर दिया।

पहले विचार था कि छुट्टी के दिन सातवें रोज पढा करूँगा, लेकिन एक बेर पढना शुरू किया कि उसका मन बडा हल्का मालूम हुआ। सो वह रोज-रोज पढने लगा। कभी तो पढ़ने मे ऐसा दत्त-

चित्त हो जाता कि लालटेन की बत्ती धीमी पडते-पडते बुझ तक जाती, तब कहीं पोथी हाथ से छूटती। देर रात तक पढता रहना और जितना पढता उसे साफ दीखता कि ईश्वर को आदमी से क्या चाहना है और ईश्वर मे होकर आदमी को कैसे जीवन बिताना चाहिए। उसका दिल खूब हल्का हो गया था। पहले रात को जब सोने लेटता तो मन पर बहुत बोझ मालूम हुआ करता था। बच्चे की याद करके वह बडा शोक मानता था। लेकिन अब वह बार-बार हलके चित्त से यहा कहता कि हे भगवान, तू ही जगदाधार है। तेरा ही चाहा हो।

उस समय से मार्टिन की सारी जिन्दगी बदल गई। पहले चाय पिया करता था और कभी-कभी दारू ले लेता था। पहले कभी ऐसा भी हो जाता था कि किसी साथी के साथ जरा ज्यादा ही चढा आये और आकर वाही तबाही बकने लगे और खरी खोटी कहने लगे। लेकिन अब बस सब बात जाती रही। जीवन मे उसके अब शान्ति आ गई और आनन्द रहने लगा। सबेरे वह अपने काम पर बैठ जाता और दिन भर काम करने के बाद साँझ हुई कि दिया लिया और इजील की पोथी खोल बाँचने बैठ गया। जितना पढता उतनी ही उसकी बुद्धि साफ होती और मन खुलकर प्रसन्न होता हुआ मालूम होता।

एक बार ऐसा हुआ कि इजील की पुस्तक लेकर मार्टिन रात बहुत देर तक बैठा रह गया। सन्त ल्यूक की कहानी वह पढ रहा था। छठे अध्याय मे उसने बाँचा—

'जो तुझे एक गाल पर मारे, तू दूसरा भी उसके आगे कर दे। जो कोट उतारना चाहे, कुरता भी उसे सौप दे। जो माँगे सब उसको दे दे। और जो तू चाहता है कि लोग तुझसे ऐसे बरते, वैसे ही तू उनसे बरत।

फिर वह प्रसग उसने पढा, जहाँ प्रभु मसीह कहते है—

"तुम 'प्रभु', 'प्रभु' तो मुझे कहते हो, पर मेरा कहा करते नहीं हो। जो मेरे पास आता है, मेरा कहा सुनता है और सुना करता है, वह उस आदमी के समान है, जिसने गहरे खोद अपने मकान की नीव चट्टान पर जमाई है। बाढ आई और लहरे टकरा-टकरा कर हार गईं, पर मकान नही हिला। क्योकि नीव चट्टान पर खडी थी। पर जो सुनता है और करता नही, वह उस आदमी के समान है जिसने धरती पे मकान खडा किया, पर बुनियाद न दी। आई पानी की बाढ और टकराना था कि मकान ढह पडा। उसका सब डूब गया, कुछ बाकी न रहा।"

मार्टिन ने ये वचन पढे तो मन भीतर से गद्-गद् हो गया। आँख से ऐनक उतार उसने पोथी पर रख दी और माथे पर अँगुली देकर उस कथन पर वह गहरा सोच करने लगा। उन वचनो से वह अपने जीवन की तोल-परख कर रहा था।

अपने से ही वह पूछने लगा कि अब मेरा मकान चट्टान पर है कि रेत पर खडा है। चट्टान पर है तो ठीक है पर यहाँ इकले मे बैठे तो सब सही दुरुस्त ही मालूम होता है। जैसे ईश्वर की मर्जी के मुताबिक ही मै चल रहा हूँ। लेकिन आँख झपकी कि मन मे विकार हो आता है। तो भी जतन मुझे छोडना नही चाहिए, जतन मे ही आनन्द है हे भगवान, तुम्ही मालिक हो।

यह सब विचार कर वह फिर रोने को हुआ। पर पोथी उससे नही छूटती थी। सो फिर वह सातवाँ अध्याय बाँचने लगा। वहाँ जहाँ कि सौ बरस का बूढा प्रभु के पास आता है और विधवा के पुत्र का जिक्र है और सन्त जॉन के शिष्य लोग मिलते है। पढते-पढते फिर वह जगह आई जहाँ एक धनी मानी ईशु मसीह को अपने घर भोजन देते है। फिर वह स्थल कि जहा एक पापिनी आँसुओ से उनके चरण

पखारती और केशों से पोंछती है। उस समय प्रभु उसका पक्ष लेते और उसे आशीष और आशा देते है। पुस्तक का चालीसवाँ बन्द आया और मार्टिन ने पढा—

तब प्रभु उस स्त्री की ओर होकर साइमन से बोले—"इस स्त्री को देखो। मै तुम्हारे घर अतिथि हूँ। पर तुमने मेरे पैरो पर पानी नही दिया। और यह है कि अपने आँसुओ से इसने मेरे पैर धोये है और केशो से उन्हें पोछा है। तुम मुझ से बचे हो और जब से मै आया हूँ, यह मेरे पैरो को ही चूमती रही है। तुमने मेरे सिर पर भी तेल नही दिया और यह है कि मेरे पाँव स्नेह से भिगोती रही है—"

ये शब्द पढते-पढ़ते मार्टिन सोचने लगा—'उसने पैरो पर पानी नही दिया, उन्हे छूने से बचा। सिर को तेल नही दिया ' मार्टिन ने ऐनक उतार वही पोथी पर रख दी और सोच मे डूब गया।

'वह आदमी मेरी तरह का रहा होगा। अपनी ही अपनी सोचता होगा। कैसे खुद अच्छा खा लेना और आराम से रह लेना। बस, अपना ही सोच, मेहनत की चिन्ता नही। कुछ अपना-ही-अपना उसे ख्याल था। मेहमान की तनिक परवाह नही थी। और कौन मेहमान? स्वय भगवान। जो कही वह मेरे यहाँ पधार जाये तो क्या मै भी वैसा ही करूँ?'

उस समय दोनो बाँह चौकी पर डाल उसी पर मार्टिन ने अपना सिर टेक दिया। ऐसे बैठे-बैठे जाने कब नीद आ गई।

इतने मे जैसे बिल्कुल कान के पास से बड़े सूक्ष्म सुर मे किसी ने कहा—

'मार्टिन!'

मार्टिन मानो नीद से चौंक कर उठा। बोला, 'कौन?' मुड़कर

दरवाजे के बाहर झाँका पर कोई न था। उसने फिर पुकारा, पुकार के जबाब मे उसे साफ-साफ सुनाई दिया, मार्टिन, कल गली पर ध्यान रखना। मैं आऊँगा।'

अब मार्टिन उठा। खडा हो गया, आँखे मली। समझ नही सका कि ये शब्द जगते मे सुने थे कि सपने मे। फिर उसने दिया बुझा दिया और सो गया।

अगले दिन तडका फूटने से पहले ही वह उठा और भजन-प्रार्थना कर आग जला अँगीठी पर खाना चढा दिया। फिर अपनी खिडकी के तले आकर काम मे जुट गया। काम करते-करते रात की बात सोचने लगा। कभी तो उसे मालूम होता कि वह सब सपना था। कभी जान पडता कि सचमुच की ही आवाज उसने सुनी थी। सोचा कि ऐसी बाते पहले भी तो घटती रही है।

खिडकी के तले बैठा, रह-रह कर, वह सडक पर देखने लगता था। काम से ज्यादा उसे किसी के आने का ध्यान था। अनपहचाने जूते गली पर चलते देखता तो झाँक उठता कि उनका पहनने वाला जाने कौन है। इस तरह एक झल्ली वाला नये चमचमाते जूतो मे उधर को निकला। फिर एक कहार गया। इतने मे एक बूढा सिपाही, जिसने पुराने राजा का राज देखा था, उस गली मे आया। हाथ मे उसके फावडा था। जूतो से मार्टिन उसे पहचान गया। पुरानी चाल के घिसे-से जूते थे। पहनने वाले का नाम स्टेपान था। एक पडौसी लाला जी के घर मे वह रहता था और उनका कुछ काम-धाम निबाह दिया करता था—यही झाड सफाई वगैरह कर देना। दया-भाव से लाला ने उसे रखा हुआ था। वही स्टेपान गली मे आकर शहर से बरफ हटाने लग गया था। रात बरफ खूब पडी थी और जमा हो गई थी। मार्टिन ने उसे एक निगाह देखा। कुछ देर देखते रह कर फिर नीचे सिर डाल कर अपने काम मे लग गया।

मन-ही-मन हँस पडा। बोला, 'मैं भी उमर से बूढा हो गया हूँ, नही तो क्या ! देखो कि मै भी कैसा बहकने लगा हूँ ! आया स्टेपान है गली साफ करने, और मुझे सूझा कि मसीह प्रभु ही आ गये है ! है न बात कि मैं सठिया गया हूँ।

लेकिन कुछ टाँके भरे होगे। खिडकी की राह वह फिर बाहर देख उठा। देखा कि फावडा जरा टेक कर दीवार का सहारा ले स्टेपान या सुस्ता रहा है, या फिर गरम होने के लिए साँस ले रहा है। स्टेपान की उमर काफी थी। कमर झुक चली थी और देह मे कस बहुत नही रहा था। बरफ हटाने के लायक भी दम नही था। वह हाँफ-सा रहा था।

मार्टिन ने सोचा—'बुलाकर मै उसे चाय को पूछूँ तो कैसे, चाय बनी हुई है ही नही।'

सो आरी वही जूते मे उडसी छोड, खडे होकर झटपट चाय की सब तैयारी कर डालने लगा। फिर खिडकी के पास आकर थपथपा-कर स्टेपान को इशारा किया। स्टेपान सुनकर खिडकी पर आया। मार्टिन ने उसे अन्दर बुलाया और आगे बढकर दरवाजा खोल दिया। बोला—'आओ, थोडा गरम हो लो। तुम्हे ठण्ड लग रही मालूम होती है।'

स्टेपान बोला—'भगवान तुम्हारा भला करे। हाँ, मेरी देह मे सरदी बैठ गई है और जोड दर्द करते हैं।

यह कहकर स्टेपान अन्दर आया और देह की बरफ द्वार के बाहर ही झाड दी। फिर यह सोचकर कि कही फर्श पर निशान न पडे, वह बाहर ही पैर पोछने लगा। इसमे देह उसकी मुश्किल से सँभली रह सकी और गिरते-गिरते बचा।

मार्टिन बोला—"रहने दो, रहने भी दो। फर्श झड जायेगा। सफाई तो रोज होती ही है। कोई बात नही भाई, आ जाओ, बैठो,

लो चाय पीओ।"

दो गिलास भर कर एक मार्टिन ने स्टेपान के आगे सरका दिया और रकाबी मे डालकर दूसरे मे खुद पीने लगा।

स्टेपान ने अपना गिलास खत्म कर औधा रख दिया। वह चाय के लिए बहुत धन्यवाद देने लगा। लेकिन प्रकट था कि और भी एक गिलास मिल जाय तो बुरी बात न होगी।

मार्टिन ने गिलास भरते हुए कहा—'एक गिलास और लो, अरे, लो भी।'

कहकर साथ ही उसने अपना भी गिलास भर दिया। पर पीता जाता था और रह रहकर मार्टिन सडक की तरफ देखता जाता था।

स्टेपान ने पूछा—'क्या किसी की बाट जोहते हो?'

'बाट? भई, क्या बताऊँ? कहते लाज आती है। सच पूछो तो इन्तजार तो नही है, पर रात एक आवाज सुनी थी, जो मन से दूर नही होती है। वह सचमुच कोई था, या सपना था, कह नही सकता। कल रात की बात कि मैं धर्म पुस्तक इजील बाँच रहा था। उसमे प्रभु ईसा का वर्णन है न! कि कैसे उन्होने दु ख उठाये और किस भाँति वह धरती पर प्रेम और भक्ति से रहे। सो तुमने भी जरूर सुना होगा?'

स्टेपान ने कहा—'सुना तो मैने है। पर मै अपढ आदमी हूँ और समझता बूझता कम हूँ।'

'तो सुनो भाई। उनके जीवन के विषय की बात है। मै पढ रहा था। पढते-पढते वह प्रसग आया, जहाँ मसीह एक धनवान आदमी के यहाँ जाते है। वह धनी आदमी मन से उनकी आव-भगत नही करता। अब तुम्हे मैं क्या कहूँ! मैं सोचने लगा कि उस आदमी ने उनका पूरा आदर कैसे नही किया! मैने सोचा कि कही मैं होता

तो जाने क्या करता ? पर देखो कि उस आदमी ने मामूली भी कुछ नही किया। इसी तरह की बात सोचते-सोचते मुझे नीद आ गई। फिर एकाएक जो जागकर उठा तो ऐसा लगा कि कोई मुझे नाम लेकर धीमे से कह रहा है कि देखना इन्तजार मे रहना, मैं कल आऊँगा। ऐसा लगा कि कोई मुझे नाम लेकर धीमे से कह रहा है कि देखना इन्तजार मे रहना, मै कल आऊँगा। ऐसा दो बार हुआ। सच कहूँ तो भाई, वह बात मेरे मन मे बैठ गई। यो तो मुझे खुद शरम आ रही है, पर क्या बताऊँ, मन मे आस लगी है कि वह भगवान कही आते न हो।'

स्टेपान सुनकर चुप रहा और सिर हिला दिया। फिर गिलास की चाय खत्म कर गिलास को अलग रख दिया। लेकिन मार्टिन ने सीधा कर फिर उसे चाय से भर दिया।

'लो, लो भाई। पीओ भी। हाँ, मैं सोच रहा था कि इस पृथ्वी पर मसीह प्रभु कैसे रहते थे। नफरत किसी से नही करते थे और मामूली-से-मामूली लोगो के बीच मिल-जुल कर रहते थे। साथी उसके साधारण जन थे और हम-जैसे अधर्म और पापी लोगो को उन्होने शरण देकर उठाया था। उन्होने कहा कि जो तनेगा उसका सिर नीचा होगा। सो जो झुकेगा, वही उठेगा। उन्होने कहा, तुम मुझे बडा कहते हो, और मै हू कि तुम्हारे पैर धोऊँगा। कहा, कि सब से आगे वही समझा जायेगा जो सबसे पीछे रह कर सेवा करेगा। क्योकि जो दीन है और दयावान है, और प्रीत रखते है, वही धनी है।"

स्टेपान सुनते-सुनते अपनी चाय भूल गया। बुड्ढा आदमी था और जल्दी उसे आँसू आ जाते थे। सो वहाँ बैठे-बैठे भगवद्-वाणी सुनकर उसके दोनो गालो पर आँसू ढुलकने लगे।

मार्टिन ने कहा—"लो, लो। बस एक और।"

लेकिन स्टेपान ने माफी माँगी, धन्यवाद दिया, और गिलास को अलग कर उठ खडा हुआ।

'तुम्हारा मुझ पर बडा अहसान हुआ, मार्टिन। तुमने मेरे तन और मन दोनो को खुराक दी और सुख पहुँचाया है।

मार्टिन बोला—'कब तो अतिथि मिलते है। भाई, फिर भी इधर आया करना। मुझे बडी खुशी होगी।'

स्टेपान चला गया। उसके बाद बाकी बची चाय मार्टिन ने निबटाई, फैला सामान मंगवाया और काम पर आ बैठा।

बैठकर वही आरी से जूते के तले की सीवन ठीक करने लगा। तला सीता जाता था और खिडकी से बाहर देखता जाता था। ईशु की तसवीर उसके मन मे थी और उन्ही की करनी और कथनी की याद से उसका अन्त करण भरा था।

इतने मे दो सिपाही उधर से निकले। एक सरकारी जोडी पहने था। दूसरे के पैरो मे देशी जूते थे। फिर पडौस के एक मकान मालिक निकले, जिन का बढिया कामदार जोडा था। फिर एक झाबा लिए नानबाई उधर से गुजरा। ऐसे बहुत से लोग चलते हुए गये। बाद मे एक स्त्री आई जिसके पैरो मे देहाती जूतियाँ थी। वह खिडकी के सामने से गुजरी लेकिन आगे दीवार के पास जाते-जाते रुक गई। मार्टिन ने खिडकी मे से उसे देखा। वह इधर के लिए अनजान मालूम होती थी। कपडे मामूली थे और गोद मे बच्चा था। दीवार के पास वह हवा को पीठ देकर खडी हो गई थी। बच्चे को हवा की शीत से बचाने को यह उसे बार-बार ढकने का जतन करने लगी। लेकिन उढाने को कपडा उसके पास नही के बराबर था। इन जाडो के दिनो मे गरमी के-से कपडे वह पहने थी। वे भी झीने और फटे थे। खिडकी मे से मार्टिन ने बच्चे का रोना सुना। स्त्री उसे मना-मना कर चुप

करना चाहती थी और वह चुप नहीं होता था। मार्टिन उठा और द्वार से बाहर जाकर बोला—'सुनना भाई। इधर सुनो।'

स्त्री सुनकर मुडी।

'वहाँ सर्दी मे खुले मे बच्चे को लेकर क्यो खडी हो? अन्दर आ जाओ, यहाँ बच्चे को ठीक तरह उढा भी लेना। इधर आओ इधर।'

एक बुड्ढा आदमी, नाक पर ऐनक चढाये इस तरह उसे बुला रहा है, यह देखकर स्त्री को अचरज हुआ। लेकिन वह चलती चली आई।

साथ-साथ दोनो अन्दर आये और कमरे मे पहुँचे। वहाँ मार्टिन ने हाथ से बता कर कहा—'वह खाट है, वहाँ बैठ जाओ। आग है ही, जरा गरमा लो और बच्चे को दूध भी पिला लो।'

'दूध मेरे कहाँ है। सबेरे से मैंने कुछ खाया ही नही है।' यह कहने पर भी बच्चे को उसने छाती से लगा ही लिया।

मार्टिन ने सिर खुजलाया। फिर रोटी निकाली और एक तश्तरी। फिर अँगीठी से उतार कर कुछ शोरबा रकाबी मे दे दिया। दलिये की पतीली भी उतारी, लेकिन वह अभी हुआ ही नही था। सो बस रोटी-रसा ही उसने सामने कर दिया।

'लो, बैठ जाओ और शुरू करो। बच्चा लाओ मुझे दो। देखती क्या हो, बच्चे क्या मुझे हुए नही? देख लेना मै बच्चे को खूब मना लेता हूँ।'

स्त्री बैठ कर खाने लगी। मार्टिन ने बच्चे को बिछौने पर लिटा लिया और खुद बैठ गया। वह तरह-तरह से बच्चे को बहलाने लगा कभी कैसी आवाज निकालता और कभी कुछ बोली बोलता। लेकिन दाँत थे नही और आवाज उससे ठीक नही निकलती थी, सो बच्चे का

रोना जारी रहा। तब उँगली दे-देकर वह बच्चे को गुदगुदाने लगा। फिर एक खेल किया। उँगली सीधी बच्चे के मुँह तक ले जाता, फिर चट से खीच लेता। यह उसने बार-बार किया पर उँगली बालकको मुँह मे नही लेने दी। क्योकि उसकी उँगली काम से तमाम काली हो रही थी। कौन जाने क्या उसमे लगा था। बच्चा पहले तो इस उँगली के खेल को ध्यान से देखने लगा और चुप हो गया। फिर तो एकदम वह हँस पडा, मार्टिन यह देखकर बडा ही खुश हुआ।

स्त्री बैठी खाती जाती और बतलाती जाती थी कि कौन हूँ और क्यो ऐसी हालत मे हूँ।

बोली—'मेरे आदमी की सिपाही की नौकरी थी। फिर कोई आठ महीने हुए जाने उन्हे कहाँ भेजा गया। तब से कुछ खबर उनकी नही मिली। उनके बाद मैने रोटी पकाने की नौकरी कर ली। रोटी बनाती थी। लेकिन यह बालक होने को हुआ तो मुझे काम से हटा दिया। तीन महीने से मैं भटक रही हूँ कि कोई नौकरी मिल जाये जो पास था, पेट की खातिर सब बेच चुकी। अब कौडी नही रह गई है। सोचा मैं धाय बन जाऊँ। लेकिन कोई मुझे रखने को राजी नही हुआ। कहते थे कि मैं बहुत दुबली और दुखिया दीखती हूँ, सो दूध क्या उतरेगा मै वहाँ एक ललाइन की बात पर आई थी। वहाँ हमारे गाँव की एक नौकरानी है। उन्होने मुझे रखने को कहा था। मै समझती थी सब ठीक-ठाक है। पर वहाँ गई तो कहा कि अगले हफ्ते तक हमे फुरसत नही है, फिर आना। वह दूर जगह थी और आते जाते मेरा दम हार गया है। बच्चा बिचारा भूखा है, देखो कैसी आँखे हो गई है। भाग्य की बात है कि वह तो मकान की मालकिन दयालु है, भाडा नही लेती। नही तो, मेरा ठौर ठिकाना न था।"

मार्टिन ने सुनकर साँस भरी। पूछा—"कोई गर्म कपडा पास नही है।"

बोली—"गर्म कपडा कहाँ से हो ? अभी कल ही छ आने में अपनी चादर गिरवी रख चुकी हूँ ।"

इतना कहकर स्त्री बढ़ी और बच्चे को गोद मे ले लिया । मार्टिन खडा हो गया और अपने कपडो मे खोज-छान करने लगा । आखिर एक बडा गर्म चोगा उसने निकाला और कहा—"यह लो चीज तो आ ही जायगी ।"

स्त्री ने उस चोगे को देखा । फिर दयावान बूढ़े की तरफ आँख उठाई, फिर चोगे को हाथ मे लेते-लेते वह रो पडी ।

मार्टिन ने मुडकर खाट के नीचे झुककर वहाँ से एक छोटा-सा बक्स निकाला । उसने इधर-उधर कुछ खोजा और फिर नीचे सरका कर बैठ गया ।

स्त्री बोली—"भगवान तुम्हारा भला करे, बाबा । सचमुच ईश्वर ने ही मुझे इधर भेज दिया । नही तो बच्चा ठिठुर कर मर चुका होता । मै चली तब सर्दी इतनी नही थी । अब तो कैसी गजब की ठण्डी बयार चल रही है । जरूर यह ईश्वर की करनी है कि तुमने खिडकी से बाहर झाँका और मुझ गरीबिनी पर दया की ।"

मार्टिन मुस्कराया । बोला—'यह सच बात है । उसी ने मुझे आज इधर देखने को कहा था । कोई यह सयोग ही नही है कि मैने तुम्हे देखा ।'

कहकर मार्टिन ने उसे अपने सपने की बात सुनाई । बताया कि ईश्वर की वाणी हुई थी कि इन्तजार करना, मैं आऊँगा ।

स्त्री बोली—'कौन जाने ? ईश्वर क्या नही कर सकता ।' वह उठी और अपने बच्चे को चारो ओर से ढकते हुए चारो ओर से चोगा कन्धो पर डाल लिया । तब झुककर मार्टिन को फिर एक बार धन्यवाद दिया ।

'प्रभु के नाम पर—यह लो।'

मार्टिन ने कहा और चादर गिरवी से छुडाने के लिए छ आने स्त्री के हाथ मे थमा दिये। स्त्री ने ईशु प्रभु को स्मरण किया। मार्टिन ने प्रभु का नाम लिया और उसे बाहर पहुँचा आया।

स्त्री के चले जाने पर मार्टिन ने डेगची उतार कुछ खाया-पिया, बासन-वस्त्र सँभाल कर रख दिये और फिर काम करने बैठ गया। वह बैठा रहा, बैठा रहा और काम करता रहा। लेकिन खिड़की को नही भूला। छाया कोई खिडकी पर पडती कि वह तुरन्त निगाह करता कि देखूँ, कौन जा रहा है। उनमे कुछ जान के लोग निकले तो कुछ अनपहचाने भी, पर कोई खास नजर नही आया।

थोडी देर बाद एक सेब वाली स्त्री को मार्टिन ने ठीक अपनी खिडकी के सामने रुकते देखा। वह एक बडी टोकरी लिए थी, लेकिन सेब उसमे बहुत नही रह गये दीखते थे। साफ था कि वह बहुत कुछ उसमे से बेच चुकी है। उसकी कमर पर एक बोरा था जिसमे छिपटियाँ भरी थी। उसे वह घर ले जा रही थी। कही इमारत की मदद लगी होगी, सो वही से बटोर कर लाई होगी। बोरा उसे चुभ आया था और एक कन्धे से दूसरे पर उसे बदलना चाहती थी। सो बोरे को उसने रास्ते के एक ओर रख दिया और टोकरी को किसी खम्भे से टिका दिया फिर बोरे की चिपटियो को हलहलाने लगी। लेकिन तभी फटी-सी टोपी ओढे एक लडका उधर दौडा और टोकरी से एक सेब ले भागने को हुआ। पर बुढिया ने देख लिया और मुड-कर चट से उसकी बाँह पकड ली। लडके ने बहुतेरी खीचातानी की कि छूट जाय, लेकिन बुढिया ने अपने हाथ जमाये रक्खे। टोपी बालक की उतार कर फेक दी और उसे बालो से पकड कर झँझोटने लगी। लड़का चिल्लाया जिस पर बुढ़िया और धिक्कार उठी।

यह देखकर मार्टिन ने हाथ की आरी उठसी भी नहीं कि हाथ से उसे वहीं डाल झटके से दरवाजे के बाहर आ गया। जल्दी मे ऐनक भी छूटी। लडखडाते पैरो वह सीढी उतर और दौड सडक पर आ खडा हुआ। बुढिया लडके के बाल झॉझोट रही थी। कहती थी—'तुझे पुलिस मे दूँगी।' लडका छूटने का प्रयत्न कर रहा था। चिल्ला रहा था कि कुछ नही लिया, मुझे क्यो मार रही हो? मुझे छोड दो।'

मार्टिन ने आकर उन्हे अलग कर दिया। लडके को हाथो मे लेकर कहा—'जाने दो, माई। भगवान के लिए उसे अब माफ कर दो।

"अजी मैं उसे दिखा दूँगी। जिससे साल-एक याद तो रक्खे। बदमाश को थाने ले जाऊँगी?"

मार्टिन बुढिया को निहारने लगा।

'जाने दो, माई। फिर ऐसा नही करेगा। भगवान के लिए उसे जाने दो।'

बुढिया ने लडके को छोड दिया। लडका भाग जाने को हुआ। लेकिन मार्टिन ने उसे रोक लिया।

लडका रो उठा और माफी माँगने लगा।

'ठीक, और यह लो अब अपने लिए एक सेब!' कहते हुए मार्टिन ने टोकरी से एक सेब लिया और लडके को दे दिया। फिर बोला—'इसके पैसे मै दूँगा तुम्हे माई।'

'इस तरह इन छोकरो को तुम बिगाड दोगे।' बुढिया बोली, 'इसे कोड़े लगने चाहिए थे कि हफ्ते भर तो याद रखता।'

'ओह, माई' मार्टिन कह उठा, 'छोडो-छोडो, यह तरीका। हम लोगों का हो, ईश्वर का यह तरीका नही है। यदि एक सेब की चोरी के लिए उसे कोड़े लगने चाहिये तो हमे अपने पापो के लिए क्या मिलना चाहिए, सोचो तो?'

बुढिया चुप रह गई।

तब मार्टिन ने उस कथा की याद दिलाई जहाँ प्रभु तो अपने सेवक पर सारा ऋग छोड देते है, पर वह दास जरा से के लिए अपने कर्जदार का गला जा दबोचता है। बुढिया ने यह सब सुना और लडका भी पास खडा सुनता रहा।

'सो प्रभु की वाणी है कि हम माफ करें।' मार्टिन ने कहा, 'नही तो हम भी माफी नही पायेगे। हर किसी को माफ करो। अन-जान बालक को तो और भी पहले माफी मिलनी चाहिए।'

बुढिया ने सिर डुलाया और साँस भरी।

बोली—'यह तो सच है। लेकिन वे इतने बिगडे जो जा रहे हैं।'

मार्टिन बोला—'यह तो हम बडो पर है न, कि अपने उदाहरण से उन्हे हम अच्छी राह दिखाये।'

'यही तो मै कहती हूँ', बुढिया बोली, 'मेरे खुद सात हो चुके हैं। उनमे सिर्फ अब एक लडकी है।' बुढिया बताने लगी कि कैसे और कहाँ वह अपनी बेटी के साथ रहा करती थी और कितने धेवते-धेवती उसके थे। बोली—'यह देखो, अब मुझ मे अगर्चे कुछ कस नही रह गया है, फिर भी उनके लिए मै काम मे जुटी ही रहती हूँ। और बच्चे भी वे भले है। उन्हे छोड और कोई भी तो मेरे पास नही लगता। नन्ही ऐनी तो अब मुझे छोड किसी के पास जायगी ही नही। कहेगी, 'हमारी नानी, हमारी प्यारी अच्छी नानी।' ·· ····और ऐनी की यह याद आते ही बुढिया की आँखे एक दम भीग गई।

लडके के लिए बोली—'सच तो है। बिचारे का बचपन था, और क्या? ईश्वर उसका सहाई हो।'

यह कह कर जैसे ही वह बोरा उठाकर अपनी कमर पर रखने

को हुई कि लड़का कूदकर उसके सामने आ खडा हुआ और बोला—'लाओ यह मैं ले चलूं, माँ। मैं उसी तरफ जा रहा हूँ।'

बुढिया ने 'हाँ' मे सिर हिलाया और बोरा लडके की कमर पर रख दिया फिर दोनों साथ-साथ गली से चलते चले। मार्टिन से सेव के पैसे माँगना बुढिया बिल्कुल भूल गई। दोनो आपस में बोलते-चालते वहाँ से गये, और मार्टिन खड-खडा उन्हे देखता रहा।

आँख से वे ओझल हो गये तो मार्टिन घर वापस आया। जीने पर उसे अपनी ऐनक पडी मिली जो कि टूटी नही थी। उसे उठा और आरी हाथ मे ले वह फिर काम पर बैठ गया। थोडा-सा काम किया था कि चमडे के सूराखों से सूआ निकालना उसकी आँखों को मुश्किल होने लगा तभी बाहर क्या देखता है कि लैम्प वाला गली के लैम्प जलाने गली से निकला जा रहा है।

सोचा—रोशनी का समय हो गया दीखता है। सो उसने भी लैम्प ठीक किया, उसे टाँगा और फिर अपने काम पर बैठ गया। एक जूता उसने पूरा कर लिया। फिर अदल-बदल कर उसे जाँचने लगा। सब दुरुस्त था। सो उसने अपने औजारो को समेटा, कटनी-छँटनी को बुहार दिया और मोम-धागा और सब चीज-बस्त को ठीक-ठाक रख दिया। फिर लैंप उतार मेज पर रख और आले से इजील की पोथी ली। चाहता था कि वहीं से खोलूं जहाँ पहले दिन निशानी लगाई थी, लेकिन किताब दूसरी जगह से खुल गई। उसे खोलना था कि कल का सपना फिर मार्टिन के सामने आ गया। साथ ही उसे पैरो की आहट-सी सुनाई दी, मानो उसके पीछे कोई चल-फिर रहा हो। मार्टिन मुडा। उसे लगा जैसे अंधेरे कोने मे कोई आदमी खडे हो। लेकिन वह चीन्ह न सका कि कौन है। उसी समय एक आवाज फुस-फुसाकर मानो कान मे बोली—'मार्टिन, मार्टिन, क्या तुम मुझे नही पहचानते?'

मार्टिन सन्देह के सुर में बोला—'कौन ?'

आवाज बोली—'यह मैं ।'

कहने के साथ अँधियारे कोने से निकल स्टेपान आ आगे हुआ । वह मुस्कराया ! और बादल की भाँति फिर अन्तर्धान हो गया ।

फिर आवाज हुई—'और यह मैं ।'

और इस अँधेरे मे से वह स्त्री गोद मे बच्चा लिए आ निकली । वह मुस्कराई, बच्चा हँसा और वे दोनो भी अन्तर्धान हो गये ।

फिर तीसरी आवाज आई—'और यह मैं ।'

और कहने के साथ ही वह बुढिया और सेव लिए वह लड़का आ सामने हुये, दोनो मुस्कराये और अन्तर्धान हो गये ।

इस पर मार्टिन का हृदय आनन्द से भर आया । उसने प्रभु को स्मरण किया, ऐनक आँखो पर रक्खी और ठीक जहाँ इंजील खुली थी पढने लगा । सफ्हे के ऊपर ही पढा ।

'मैं भूखा था और तूने मुझे खाना दिया । मैं प्यासा था तूने मुझे पानी दिया । मै अजनबी था और तूने मुझे ग्रहण किया ।'

और सफे के अन्त मे पढ़ा—

'इन भाइयो मे से एक के लिए, अदना-से-अदना के लिए, जो तूने किया वह मुझको किया समझ । जो दिया मुझे दिया समझ ।'

उस समय मार्टिन को प्रत्यक्ष हुआ कि उसका सपना सच्चा हुआ है । उसको प्रतीति हुई कि रक्षक प्रभु सचमुच ही उसके घर पधारे थे और उन्होने उनका आतिथ्य पाया था ।

●

: १ :

मूरखराज

एक समय किसी देश में एक किसान रहता था। खासी-खाती पीती हालत थी और तीन उसके बेटे थे। बलजीतसिंह, धनवीरसिंह और प्यारासिंह। बलजीत फौजी निकला, धनवीर कुशल कारबारी बना, पर प्यारासिंह मूरख था। लोग उसे मूरखराज कहते थे। एक लडकी भी थी, पीतमकौर। वह गूंगी और बहरी थी। सो वह बिन ब्याही ही रही। बलजीत तो राजा की तरफ से फौज मे लडाई लडने गया, धनवीर शहर जाकर एक सौदागर के साथ व्यापार मे लग गया और मूरखराज लडकी के साथ घर ही रहा। वहाँ धरती के काम मे जुट कर रहता और कुनबे का गुजारा चलाता था। इससे मेहनत उसे इतनी पडती थी कि कमर झुक चली।

बलजीत ओहदे-पर, ओहदा पाता गया। सो एक अपना इलाका उसने खडा कर लिया और एक सरदार की बेटी से ब्याह किया। अच्छी उसे तनख्वाह मिलती थी, ऊपर से भत्ता। और पास का इलाका भी कम नही था, फिर भी खर्च के वक्त हाथ तङ्ग ही पाता था। असल मे पति जो लाता, श्रीमती सब उड़ा देती थी। इससे हाथ मे कभी पैसा नही बचता था।

सो बलजीत एक बार अपने इलाके की जमीन मे तहसील करने गया, पर वहाँ क रिंदा बोला कि अजी, आमदनी हो कहाँ से और पैसा कैसे जमा हो ? पास हमारे न हल-बैल है, न औजार है, गाडी भी नही।' पहले सामान हो, तब तो आमदनी हो।

इस पर बलजीत अपने पिता के पास गया। बोला—'पिताजी, तुम्हारे पास जमीन है, जायदाद है और माल है। लेकिन मुझे कुछ हिस्सा नही मिला। ऐसा करो कि सब तीन हिस्सों मे बाँट दो और मेरा हिस्सा मुझे दे दो। मैं उससे फिर अपने इलाके को बढा भी सकूँगा।'

बूढे पिता ने कहा—'तुमने घर मे कुछ लाकर रक्खा है जो तीसरा हिस्सा तुम्हे दे दूँ ? और बेचारे मूरखराज और पीतमकौर के हित मे यह अन्याय होगा।'

बलजीत बोला, 'मूरख तो मूरख है और पीतम गूँगी-बहरी है। और उमर की काफी हो गयी है। इलाके-जायदाद का वे भला करेंगे भी क्या ?'

बूढे ने कहा—'खैर मूरख से इस बाबत पूछ तो ले।'

मूरख आया। पिता के पूछने पर बोला—'पिताजी, जो ये चाहे, इनको दे दीजिए।'

सो बलजीन बाप के माल मे से अपना तिहाई हिस्सा ले वहाँ से चल दिया। उसके बाद फिर वह राजा की फौज मे लडाई के लिए जा पहुँचा।

उधर धनवीर ने भी खासा धन पैदा किया और एक बडे व्यापारी की लडकी से शादी की। पर तबियत और पाने को भी होती थी। सो वह भी बूढे बाप के पास आया और बोला—'मेरा भी हिस्सा मुझे दे दो।'

लेकिन धनवीर को भी हिस्सा देने की मर्जी बूढ़े बाप की नहीं थी। बोले—तुम क्या घर मे कुछ ले आये हो जो माँगते हो? घर मे अब जो है मूरख की कमाई है। सो उस पर और बेचारी लडकी पर अन्याय मैं किस भाँति करूँ?'

धनवीर बोला—'मूरख को क्या जरूरत है। वह ठहरा मूरख। शादी उसकी हो ही नही सकती। कौन उसे अपनी लडकी देने बैठा है? और न गूँगी पीतम के काम का कुछ है।'

यह कहकर धनवीर मूरखराज से बोला कि सुन मूरख, आधा गल्ला मेरे हवाले कर दे। तुम्हारे हल-औजारो मे से मुझे कुछ नही चाहिए। और डगरो मे से कुछ नही चाहिए। लेकिन वह जो बादामी रग की घोडी है, बस वह मैं ले लूँगा। वह तुम्हारे तो किसी खास काम की है भी नही।

मूरख हँसा, बोला—'जो चाहो, भाई ले लो। और कुछ मुझे चाहिएगा तो मैं मेहनत कर ही लूँगा,

सो धनवीर को भी अपना हिस्सा मिल गया। नाज-माल ढोकर वह अपने शहर चलता बना और बादामी घोडी भी ले गया। बस एक जोड़ी बैल और हल लेकर अपने माँ-बाप और बहन का भरण-पोषण करने और गुजर बसर चलाने के लिए मूरखराज घर रह गया।

[२]

लेकिन पाताल में रहता था एक शैतान। उसको बडी झुँझलाहट हुई कि देखो, तीनो भाइयो मे बँटवारे का झगडा भी नही हुआ। सब काम अमन-सुलह से हो गया। सो उसने अपने तीन चरो को बुलाया।

बोला—'देखो जी, ये है तीन भाई। बलजीत फौजी, धनवीर व्यापारी और प्यारा मूरख। उन तीनो मे कलह होनी चाहिए!

उनमें कलह नहीं हुई और तीनों हेल-मेल से रहते है। असल में खराबी सब उस मूरख की है। उसी ने मेरा काम बिगाड रक्खा है। देखो, तुम तीनो जाओ और एक-एक करके उन तीनो भाइयो को कब्जे मे लो। ऐसी तदवीर करो कि तीनो आपस मे नोच-खसोट करने लगें और जान के गाहक हो जाये। बोलो, कर सकोगे ?'

तीनो बोले, 'जी, कर लेंगे ?'

'भला, कैसे करोगे ?'

वे बोले—पहले तो हम उनका धन-माल बरबाद कर देंगे। जब पास उनके खाने को न रहेगा तो तीनो को इकट्ठे एक जगह कर देंगे। बस फिर आपस मे वे ऐसे लडेगे कि आप देखिएगा। यह पक्की बात है।'

'वाह, खूब ठीक, तुम लोग काम समझते हो और होशियार हो। अब जाओ और लौटना तब जब वे एक-दूसरे की जान के गाहक हो चलें। नहीं तो तुम जानते हो तुम्हारी जीती खाल मैं खिचवा लूँगा।

वे तीनों चर वहाँ से चले और एक गढे मे आकर सलाह करने लगे कि काम कैसे शुरू करें। खूब सोचा और खूब बहस की। असल मे अपने लिए हलका काम दूसरो के लिए भारी काम चाहते थे। आखिर पक्का हुआ कि परची डालकर तय कर लिया जाय कि किस के जिम्मे कौन भाई आता है। यह कि अगर एक का काम पहले निबट जाय तो वह आकर दूसरो की मदद मे लगे। सो चरो ने परचियाँ डाली और दिन नियत किया कि उस रोज सब जने फिर उसी गढे मे आकर जमा हो। तब देखा जायगा कि किसका काम पूरा हुआ और किसको मदद की जरूरत है।

आखिर वह दिन आया और निश्चय के मुताबिक तीनो चर गढे मे आकर जमा हुए। हरेक फिर अपनी बीती सुनाने लगा। पहला,

जिसने बलजीत फौजी का जिम्मा लिया था, बोला—'भाई, मेरा भी काम चल रहा है। कल ही बलजीत अपने बाप के घर पहुँच जायगा।'

औरो ने पूछा—'यह तुमने किया कैसे ?'

बोला—'पहले तो बलजीत के अन्दर मैंने हिम्मत भरी. हिम्मत के साथ-साथ घमण्ड। आखिर इतना बूता उसमे हो आया कि अपने राजा से बोला कि आपको मैं सारी दुनिया फतह करके दे सकता हूँ। राजा ने इस पर उसे सिपहसालार बना दिया। कहा—'अच्छा, हिन्दुस्तान का मोरचा लो और जाकर वहा के राजा को शिकस्त दो।' सो दोनो की फौजे मोरचे पर मिली। पर इधर मैंने क्या किया कि बलजीत की छावनी की तमाम बारूद नम कर दी और हिन्दुस्तानी फौज के लिए रात-ही-रात मे फूँस के इतने सिपाही बना दिये कि गिनती से बाहर।

'सो सबेरे बलजीत की फौज ने उन फूसी सिपाहियो को अपना घेरा डाले देखा तो वह घबरा गई। बलजीत ने गोली चलाने का हुक्म दिया। लेकिन तोप और बन्दूक चल कहाँ से सकती थी। सो बलजीत के सिपाही मारे डर के भेडो की तरह भाग निकले। भागने मे उन्हे पकड-पकड कर हिन्दुस्तान के राजा ने बहुतो को जम के घाट उतार दिया। बलजीत की बडी ख्वारी हुई। सो उसका सब इलाका छिन गया और कल फाँसी चढा देने की बात है। बस अब मुझे एक दिन का काम बाकी रह गया है। जाकर उसे बस जेल से छुडा देना है कि भाग कर वह अपने घर जा पहुँचे। तुममे से जिसे मदद की जरूरत हो, कल मै मदद को पहुँच सकता हूँ।

उसके बाद दूसरा चर जिसने धनवीर को हाथ मे लिया था, अपनी बीती सुनाने लगा। बोला—"मुझे तो भाई, किसी मदद की जरूरत है नही। मेरा भी काम खासी कामयाबी से बढ रहा है।

धनवीर को काबू में लाने मे एक हफ्ता भी नहीं लगा। पहले तो खूब आराम दे मैने उसे फुलाकर मोटा कर दिया। फिर तो उसका लोभ इतना बढ गया कि जो चीज़े उसी को रुपये से खरीद लेने की तबियत होने लगी। अब दुनिया भर का माल खरीद कर उसने भर लिया है। रुपया सारा उसमे गला जा रहा है, पर खरीद अब भी जारी है। अभी कर्ज का रुपया वह लगाने लगा है। कर्जा उसके गले मे पत्थर की तरह बँध गया है। ऐसा वह उसमे उलझता जा रहा है कि छुटकारा हो नही सकता। हफ्ते भर मे रुपया चुकती का दिन आने वाला है। उससे पहले ही जो माल उसने जमा किया है सो सब मै सत्यानाश करके रक्खे देता हूँ। कर्ज वह फिर चुका नही सकेगा और लाचार बाप के घर भागा आयेगा।'

इसके बाद वे दोनो प्यारे मूरख वाले चर से उसकी कहानी पूछने लगे—'क्यो दोस्त, अब तुम बताओ, तुम्हारा क्या हाल है ?

यह बोला—'भाई, मेरा मामला तो ठीक रास्ते पर नही आ रहा है। बात कुछ बन ही नही रही है। पहले तो मैंने उसके दूध के कटोरे मे कुछ मिला दिया कि पेट मे उसके पीर हो जाये। इसके बाद जाकर पीट-पीटकर खेत की धरती को ऐसा कर दिया कि पत्थर। जोतो तो वह जुते ही नही। मैने सोचा था कि अब इसे क्या जोतेगा। पर मूरख तो अजब ठहरा। देखता क्या हूँ कि वह तो हल लिये चला आ रहा है। आकर जमीन को गोडना उसने शुरू कर दिया। पेट की पीर से कराह-कराह पडता था, पर बन्दा हल नही छोडता था। मैंने फिर क्या किया कि हल तोड कर रख दिया। पर वह मूरख घुस गया और घर जाकर दूसरा हल निकाल लाया और लगा फिर धरतीको गोडने। मै फिर धरती के अन्दर गया और हलकी पैंड को पकड लिया। पर पकडे रहता कैसे ? हल पर अपना सारा बोझ देकर वह चलाने लगा, पैंड की धार पैनी थी और मेरा हाथ भी जख्मी हो गया था। सो

उसने सारा खेत जोत डाला है, बस जरा किनारी बची रह गई है। भाई, आकर मेरी मदद करो। क्योंकि उस पर क़ाबू नही चला तो हमारी सारी मेहनत अकारथ जायगी। वह मूरख बाज न आया और ऐसे ही धरती के साथ कामयाब होता चला आया तो उसके भाइयो को भूख की नौबत नही आएगी और सबके लायक यह अकेला ही पैदा कर लेगा।'

बलजीत वाले चर ने कहा—अच्छी बात है। मै कल तुम्हारी मदद को आये जाता हूँ।'

इसके बाद तीनो चर अपने-अपने काम पर चले गये।

[३]

प्यारे ने खेती की सारी धरती गोड डाली। कुल एक नन्हीं किनार बची रह गई थी। उसी को पूरा करने वह आ जुटा। पेट पिरा रहा था, पर खेत का काम तो होना ही चाहिए। सो जोता बैल, घुमाया हल और गुडाई शुरू कर दी। एक लीक उसने पूरी कर दी। दूसरे पर लौट रहा था तो हल फिसटता सा मालूम हुआ, जैसे अन्दर किसी जड से अटक गया हो। पर असल मे धरती मे दुबक कर बैठा था वह चर। उसने ही हल की पैड पर टाँगे अपनी कस कर लिपटा ली थी और उसे चलने से रोक रहा था।

प्यारे ने सोचा कि यह क्या अजब बात है। कल तो यहाँ कोई जड़-वड थी नही। फिर भी यह जड यहाँ आई तो कहाँ से आई।

सो झुककर गहरे हाथ देकर धरती के अन्दर उसने टटोला। अन्दर कुछ गीली-गीली और चिकनी चीज उसे छुई। प्यारे ने उस चीज को पकड कर बाहर खीच लिया। जड की तरह की कोई काली वस्तु थी और कुलबुला रही थी। असल मे वह उस चर की ही काया थी।

देखकर प्यारे बोला—'छि, क्या गन्ध है।' कह कर हाथ ऊपर उठाया कि उस चीज को हल से दे मारे।

पर यह होता देखकर वह चर चीख पडा। बोला—'मुझे मत मारो। जो बताओ मै वही तुम्हारे लिए करूँगा।'

'तुम क्या कर सकते हो?'

'जो कहो वही।'

प्यारे ने सिर खुजलाया, बोला—'मेरे पेट मे दर्द है। उसे अच्छा कर सकते हो?'

'जरूर कर मकता हूँ।'

तो करो अच्छा।

सुनकर वह चर वही अन्दर धरती मे घुस गया वहाँ पजो से खरोच-खरोच आस-पास टटोल, आखिर एक जडी खीचकर बाहर लाया। जड मे से उसकी तीन शाख निकल रही थी। लाकर प्यारे के हाथ मे दे दी।

बोला—'यह देखिये, इनमे से जो कोई एक खायेगा उसके सब रोग दूर हो जायेंगे।'

प्यारे ने जडी को लिया। तीनो को अलग-अलग किया और एक उनमे से उसने खा ली। सो पेट का दर्द उसका खाते ही अच्छा हो गया।

इसके बाद चर ने कहा—'मुझे अब छोड दीजिए। मैं अब धरती मे होकर मीधा पाताल चला जाऊँगा और फिर नही लौटूँगा।'

प्यारे ने कहा—'अच्छी बात है, जाओ। और भगवान तुम्हारा भला करे।'

भगवान का नाम प्यारे के मुँह से निकलना था कि जैसे जल मे ककड गिर कर गायब हो जाय वैसे ही वह चर धरती मे गिरकर लोप हो गया। वहाँ निशानी मे बस एक सूराख रह गया।

प्यारे ने बाकी बची दोनों जडी टोपी मे खोंस ली और अपने हल मे लग गया। खेत की बची किनार उसने पू-ी कर दी। फिर हल उलटाकर अपने घर लौट चला। बैलो को खोलकर बाँध दिया और घर के अन्दर आया। वहाँ देखता है कि बडा भाई बलजीत और उसकी बीबी जीमने थाली पर बैठे हैं। बलजीत का इलाका जायदाद सब जब्त हो गया था और जैसे-तैसे वह जेलखाने से निकल भागकर यहाँ बाप के घर दिन गुजारने आया था।

प्यारे को देखकर बलजीत ने कहा प्यारे, हम तुम लोगो के यहाँ रहने आये है। दूसरा बन्दोबस्त हो तब तक मै और मेरी बीबी तुम्हारे ऊपर है। ख्याल रखना।'

प्यारे बोला— अच्छी बात है। खुशी के साथ यहाँ रहिये।'

पर हाथ-मुँह धोकर प्यारे जो आखिर खाने बैठने लगा तो बलजीत की श्रीमती को अच्छा नही लगा। प्यारे के कपडो से उसे बास आती मालूम हुई अपने पति से बोली—'ऐसे गँवार देहाती के साथ बैठ कर मुझसे नहीं खाया जाता।'

सो बलजीत ने कहा—'प्यारे तुम्हारी भाभी कहती है कि तुममें से बास आती है। सो बाहर जाकर खा सकते हो।'

प्यारे बोला—'अच्छी बात है। यो भी रात मुझे बैलो की सानी-पानी को बाहर रहना था।'

सो रोटी ली और दोहर कन्धे पर डाल बाहर ढोरो की सानी-पानी के काम मे वह लग गया।

[४]

अपना काम निबटाकर वचन मुताबिक उस रात तो बलजीत का चर मूरख वाले अपने साथी की तालाश मे आया। वह मूरख-प्यारे

को बस मे लाने मे साथी की मदद करने आया था। पर प्यारे के खेत पर आकर उसने बहुतेरी खोज ढूँढ की। पर साथी तो मिला नही, मिला वह धरती का सूराख।

सोचा—'जरूर कोई मेरे साथी पर विपत पडी है। सो मुझे इसकी जगह भरनी चाहिए। खेत तो खैर उसने पूरा खोद दिया है। सो चलकर चराई की जगह उस मूरख की खबर लेता हूँ।'

सो जाकर शैतान के बच्चे ने मूरख की जमीन को पानी-ही-पानी से भर दिया जिससे घास कीच से लथपथ हो गई।

मूरख सबेरे के वक्त बाहर चला। हँसिया उसने पैना किया कि जाकर घास काटना है। कटाई उसने शुरू की। पर दो-एक हाथ मारना था कि क्या देखता है कि हँसिया मुड-मुड जाता है और घास कटती नही है। कही और धार पैनी की तो जरूरत नही आ गई। कुछ देर तो प्यारे कोशिश करता रहा। फिर बोला—'ऐसे नही, घर चलकर कुछ लाऊँ कि हँसिया सीधा हो जाय। चलो शाम की रोटी भी लिए आता हूँ। देखा जायगा जो होगा। हफ्ता भर चाहे क्यो न लगे। मुझे भी घास काटकर ही छोडनी है।

चर ने यह सुना तो सोचा—'यह मूरख तो लोहे का चना मालूम होता है। ऐसे यह बस मे नही आयेगा। कोई दूसरी तरकीब चलनी चाहिए।

प्यारे लौटा। हँसिया सीधा किया और फिर घास काटने पर आ भिडा। पर चर इस बार धरती मे घुस कर क्या करता कि हँसिये को बार-बार बेंटे मे पकड ऐसे घुमाता कि नोक उसकी धरती मे आकर लगती। सो प्यारे को काम मे बडी कठिनाई पडी। वह भी लगा ही रहा और दल-दल की जरासी जगह को छोड आखिर सब घास उसने काट ही डाली। तब चर आकर उस दल-दल की धरती मे बैठ

गया। बोला—'चाहे मेरे पजे कट जाये, घास मै उसे नही काटने दूँगा।'

मूरख अन्त मे उस दल-दल की जमीन मे पहुँचा। घास वहाँ ऐसी घनी तो नही थी, फिर भी हँसिया के बस न आती दीखती थी। प्यारे को गुस्सा चढ आया और हँसिये को पूरे जोर से घुमाकर मारने लगा। वह चर तब हार रहा। हँसिये का हाथ पकडे रहना उसे दूभर होता था। आखिर देखा कि यह बात भी ठीक नही बनी। सो एक झाडी मे वह घुस बैठा। होते-होते प्यारे भी उधर बढ आया। झाडी को हाथ से पकड हँसिया जो उसने चलाया तो चर की आधी पूँछ कट कर अलग हो गई। खैर, घास की कटाई खतम कर उसने बहन को बताया कि इस की दबिया कर डालो। फिर खुद जई के खेत पर पहुँचा। हँसिया साथ ले गया। बेपूँछ का चर वहाँ पहले जा पहुँचा था। उसने जई की बालो को ऐसा उलझा दिया था कि हँसिया उनकी कटाई के लिए बेकाम पड गया। सो मूरख घर गया और दाँते-दार दरात ले आया। उससे सारी जई उसने काट ली।

फिर बोला— 'अब चलो, कल मकई शुरू करेगे।'

पूँछ कटे चर ने यह सुना और मन मे कहने लगा कि खैर, यहाँ काबू मे नही आया तो क्या। चलकर मकई मे देखेगे। सबेरे तक की ही तो बात है।

सबेरे जल्दी ही वह चर खेत पर पहुँच गया। पर वहाँ देखता क्या है कि मकई तो सब कटी बिछी है। प्यारे ने रात-ही-रात मे सब काट डाली थी। सोचा था कि ऐसे मे दाने कम बिखरेगे और सोफते मे काम हो जायेगा। यह देख चर को बडा गुस्सा हुआ।

'देखो न कि कमबख्त ने मुझे लहूलुहान कर दिया है और थका मारा है। लड़ाई न हुई, यह तो आफत हो गई। क्या मूरख से पाला

पडा है कि रात को भी नही सोता। पार पाना उससे मुश्किल हो रहा है। खैर, मैं भी उसके पूलो मे घुसा हूँ और सब अन्दर से सडा दूँगा।'

सो वह चर जई के पूलो मे दाखिल हो गया और सडाद फैलाना शुरू किया। पहले तो वहाँ गरमी पहुचाई। पर इससे खुद को भी उसे आराम मिला और सरदी मे गरमी पाकर वह चैन से सो गया।

प्यारे गाडी लेकर बहन के साथ जई ढोने आ पहुँचा। पूलो के ढेरो पर आ एक-एक कर उन पूलों को उसने गाडी मे फेकना शुरू किया। ऐसे दो एक फेके होगे कि जेली लेकर उसने ढेर को सहलाया। यह करना था कि जेली की नोक जाकर ऐन चर के बदन पर पडी और चर उसकी नोक मे छिद गया। जेली को उठाया तो क्या देखता है कि उसकी नोक पर पुछकटा कोई जन्तु-सा लिपटा हुआ है, कुलबुला रहा है और छूटने की कोशिश कर रहा है।

'क्यो रे, गन्दगी के कीडे, तू फिर यहाँ ?'

चर बोला—'जी नही, मैं दूसरा हूँ। पहला मेरा साथी था और मै तब तुम्हारे भाई बलजीत पर लगा हुआ था।'

प्यारे बोला—'खैर, जो भी हो तुम्हारी भी वही गति होगी।'

कहकर गाडी के पहिये की हाल से वह उसे दे मारने वाला ही था कि चर बोला—'मुझे छोड दीजिये। मै फिर आपको नही सताऊँगा। बल्कि जो मुझे कहेगे वही कर दूँगा।'

'तुम क्या कर सकते हो ?'

'चाहे जितने मैं आपको सिपाही बना दे सकता हूँ।'

'और सिपाही वे करेगे क्या ?'

'जो चाहे काम आप उनसे ले। जो कहेगे वही कर सकेगे।'

'गा बजा भी सकेगे ?'

'हाँ।'

'अच्छी बात है। तो बना दो मुझे कुछ सिपाही।'

'चर बोला—'यह देखिये, ऐसे जई का एक पूला ले लीजिये। उसे धरती पर जमा दीजिये और यह मन्तर पढिये—

पूले-पूले सुन और मान,
मेरी तुझको यही जुबान।
जहाँ-जहाँ हो तेरी सीक,
वही हो उठे एक जवान॥

प्यारे ने पूला लिया, धरती पर जमाया और चर का बताया मन्तर पढा। पूला देखते-देखते बिनस गया और उसकी एक-एक बाल की जगह वर्दी से लैस सिपाही खडा दिखाई दिया। एक के पास ढोल था, दूसरे के पास तुरही–ऐसे पूरे बैंड का सर अञ्जाम था।

देखकर प्यारे खुश हुआ और खूब हँसा। बोला—'यह तो बढिया बात रही। देखकर लडकियाँ कैसी खुश होगी!'

चर बोला—'अब मुझे जाने दीजिए।'

प्यारे ने कहा—' नही जी, सिपाही खाली पुआल के बनाऊँगा। कोई मै भला उसके लिए नाज वाली बाल खराब करने वाला थोडे ही हूँ। सो बताओ कि सिपाही फिर पहले पूले की हालत मे कैसे आ सकते है? सोचो, मुझे उनमे से नाज निकालना है कि नही?'

चर बोला—तो यह मन्तर पढिये—

'सुनता है तू ओरे ज्वान,
मेरी है बस एक जुबान।
सीक-सीक था जैसे पहले
वैसा ही तू हो जा, मान।

प्यारे का यह मन्तर कहना था कि सिपाही अन्तर्धान हो गये और जैसा का तैसा वहाँ पूला हो आया।

चर फिर हाथ जोडकर कहने लगा कि अब मुझे जाने दीजिए ।

सुनकर जेली की नोक से उसे छुडाया और कहा कि अच्छी बात है, जाओ भगवान तुम्हारा भला करें ।

भगवान का नाम मुँह से निकलना था कि ककड पानी मे गिरे, वैसे वह धरती पर छूटकर गायब हो गया और वहाँ निशानी मे एक सूराख रह गया ।

प्यारे लौटकर घर पहुँचा कि वहाँ देखा कि उसका मँझला भाई धनवीर आया हुआ है । साथ बीबी भी है और दोनो जने खाने पर बैठे हैं ।

धनवीर अपना देना चुकता नही कर सकता था । सो साहूकारों से बचकर वहाँ भाग आया था और बाप के घर मे शरण ली थी । प्यारे को देखकर धनवीर ने कहा—'सुनो भाई मूरख, दूसरा काम लगे तब तक मै और मेरी बीबी यही है और हमको कोई कष्ट न हो, यह तुम्हारा काम है ।'

प्यारे बोला—'अच्छी बात है । आप चाहे तब तक यहाँ रहिए ।'

प्यारे दोहर रख, मुँह धो । आकर खाने पर बैठने लगा ।

पर धनवीर की बीबी बोली—'मैं उस गँवार के साथ खाना खा नही सकती । सारे बदन मे तो उसके पसीने की बू आ रही है ।'

इस पर धनवीर बोला—'प्यारे, तुम्हारे बदन से गन्ध आती है । जाओ बाहर जाकर खालो ।'

प्यारे बोला—'अच्छी बात है । मुझे तो वैसे भी इस वक्त बाहर जाना था ।' कहकर रोटी ले मूरख ओसारे मे बाहर चला आया ।

[५]

धनवीर का चर भी खाली हो गया था । सो ठहरे मुताबिक मूरख को बस मे लाने मे अपने साथियो को मदद करने वह भी उस रात आ पहुँचा । पर खेत मे घूम-फिर कर बहुतेरा देखा । वहाँ कोई

नही था। मिला तो वहाँ सूराख मिला। वह फिर चरो की धरती मे आया वहाँ दल-दली धरती मे देखा तो उसके साथी की पूँछ कटी पडी है और जई वाले खेत मे दूसरा एक सूराख मिला।

सोचा कि मेरे साथियो पर कोई विपत पडी है। सो उनका काम अब मुझे सँभालना चाहिए और उस मूरखराज को काबू मे लाना चाहिए।

यह सोच वह चर मूरखराज प्यारे की तलाश मे गया। प्यारे ने नाज खलिहान मे रख दिया था और अब जगल मे पेड गिरा रहा था। बात यह थी कि दोनो भाई बोले—'यहाँ तो घर मे जगह कम है और गिचपिच मालूम होती है। इससे जाओ प्यारे, पेड गिराकर कुछ जगह साफ कर डालो और वहाँ हमारे लिए नये मकान बनवाकर खडे करो।'

चर दौडा जगल मे पहुँचा। वहाँ दरख्तों की टहनियों से लुक कर प्यारे के काम मे अडचन डालने लगा। प्यारे ने उन दरख्तो को जड़ से काट लिया था और ऐसे था कि वह कुल साफ धरती पर आ जायँ। पर देखता क्या है कि दरख्त गिरा तो नही, बल्कि दूसरे पेड की शाखो से उलझ कर रह गया।

प्यारे ने इस पर बल्ली की मदद से उसे जड से कुछ सरकाया। तब कही पेड धरती पर आकर गिरा। और पेडो के गिराने मे भी ऐसे ही बीती। बहुतेरा करता, पर दरख्त सीधा साफ धरती पर न गिरता। तीसरा पेड़ काटा और वही बात हुई।

उम्मीद थी कि छोटे-मोटे पचास पेड तो आज काट ही गिराऊँगा। पर दस-एक भी नहीं हुए कि साँझ हो चली और वह थककर चूर हो गया। सरदी के मारे बदन से निकली पसीने की भाप जगल मे धुएँ की मानिन्द फैली दीखती थी। पर उस बन्दे ने काम नही छोडा, चिपटा ही रहा, एक और दरख्त उसने काट लिया। लेकिन अब कमर

इतनी दुखने लगी कि खडे रहना मुश्किल था। आखिर कुल्हाड़ी पेड़ मे लगी छोड धरती पर बैठकर वह दम लेने लगा।

चर ने देखा कि प्यारे काम से हार बैठा है। इस पर वह बडा खुश हुआ। सोचा, आखिर अब आकर थका तो। अब आगे भला क्या काम उठायेगा। सो चलो, मुझे भी सुस्ताने का मौका मिल गया।

यह सोचकर पेड की शाख पर फैलकर आराम से सो गया। चैन की साँस ली। पर थोडी ही देर मे प्यारे तो उठ खडा हुआ और कुल्हाडी खीच सिर के ऊपर से घुमाकर परली तरफ जोर से जो मारी कि एकदम पेड ढहता हुआ आ गिरा। चर को यह आस न थी। उसे सँभलने का समय नही मिल पाया और पेड गिरा तो उसके पजे उसमे फँसे रह गये। प्यारे एक-एक कर पेड की टहनियाँ काटने लगा। इतने मे देखता क्या है कि दरख्त से चिपटे यह हजरत जीते-जागते वहाँ लटके हुए है। प्यारे को अचम्भा हुआ। 'क्यो जी, फिर तुम यहाँ आ पहुँचे।'

चर बोला—'जी, मैं वह नही, दूसरा हूँ। अब तक तुम्हारे भाई धनवीर के साथ था।'

'जो हो। चलो, तुम्हे अपने कर्मों का फल मिला।'

यह कह कर कुल्हाडी घुमा मूठ उसकी उसके सिर पर दे मारने वाला ही था कि वह चर दया के लिए गिडगिडाने लगा।

बोला—'मुझे मारो नही। जो कहोगे मैं वही तुम्हारे लिए करूँगा।'

'तुम क्या कर सकते हो?'

'मै अशर्फी बना सकता हूँ। जितनी कहो उतनी'

'अच्छी बात है, बनाकर दिखाओ।'

वह चर अशर्फी बनाने की तरकीब बताने लगा। बोला—'उस बड के कुछ पत्ते हाथ मे ले लीजिए और फिर मसलिए। धरती पर गिरकर बस अशर्फियाँ ही अशर्फियाँ हो जायेगी।'

प्यारे ने कुछ पत्ते लिए और हाथो से मला। देखता है कि हाथों से अशर्फियो की धार की धार गिर रही है।

बोला—'यह तो खूब बात है। चलो, बाल-बच्चो के मन-बहलाव का यह तो अच्छा सामान हो गया।'

चर बोला—'अब मुझे जाने दीजिए।'

प्यारे ने उसको पेड से छुडा दिया। बोला—'अच्छी बात है, जाओ भगवान तुम्हारा भला करे।'

और भगवान का नाम आना था कि पानी मे पत्थर की तरह वह चर धरती मे गिरकर अन्तर्धान हो गया। बस एक सूराख रह गया।

[६]

सो दोनो भाइयो के लिए हवेलियाँ खडी हो गईं और वे अलग-अलग मकान मे रहने लगे। प्यारे ने कटाई-खुनाई निबटाकर तैयारी की और एक त्यौहार के रोज भाइयो को अपने घर खाने का निमन्त्रण दिया पर दोनो भाई उसके घर आने को राजी नही हुए।

बोले—'बडी आई कही की दावत! जो इन गँवारो को खाने का सलीका भी हो! सो भला हमी उस मे जाने को रह गये है?

भाई लोग नही आये तो प्यारे ने गाँव के और स्त्री-पुरुषो को ही जिमाया लुटाया। बडी हँसी-खुशी रही। दावत के बाद बाहर के चौक मे प्यारे आया। वहाँ स्त्रियाँ मग्न होकर गरबा नाच रही थी। प्यारे आकर उनसे बोला कि वाह-वाह, एक नाच, भाई, हमारे नाम का हो जाय। उसके बाद मैं ऐसी चीज, तुम्हे बाँटूं कि पहले जिन्दगी मे तुमने न देखी हो।

स्त्रियां और भी हँसी और खुश-खुश प्यारे की तारीफ मे गाना गाती नाचने लगी। उसके बाद बोली—'लाओ देखे, तुम्हारी वह क्या चीज है।'

प्यारे ने कहा—'अभी लो।'

कह कर उसने नाज भरी एक डलिया ली और चला जगल की तरफ। स्त्रियाँ हँमने लगी। बोली—'है असल मूरख।' उसके बाद फिर अपने इधर-उधर की चर्चा करने लगी।

इतने मे देखती क्या है कि प्यारे डलिया लिए जगल की तरफ से भागा चला आ रहा है। डलिया भारी मालूम होती है और किसी चीज से भरी हुई है।

आकर बोला—'बोलो, दूँ तुम्हे ?'

'हाँ-हाँ, दो न।'

प्यारे ने मुट्ठी भर अशर्फियाँ ली और बीच मे बखेर दी। बस अनुमान कर लीजिए कि कैसी भगदड वहाँ मची होगी। सब जनी उन्हे बीनने और छीनने झपटने लगी। आस-पास के लोग भी टूट पडे। एक बिचारी बुढिया की तो जान जाते-जाते बची।

प्यारे बहुत हँसा। बोला—'अरे मूरखो, बुढिया बेचारी को क्यो कुचले डाल रही हो ? जरा सबर कर लो, मै और बखेरता हूँ ?'

कह कर उसने एक पल सोना और बिखरा दिया तब तो और भी लोग आ जुटे और प्यारे ने जितनी थी सब मुहरे वहाँ फेक बखेरी। उसके बाद लोग फिर और माँगने लगे।

पर प्यारे बोला—'अब तो मेरे पास और रही नही। फिर किसी वक्त और सही। आओ, नाँचें, कूदे और अजी, तुम लोग रुक क्यो गई ? गाना अपना जारी रक्खो न।'

स्त्रियाँ पहले की भाँति गाने लगी।
बोला—'नही जी, ये तो तुम्हारे गीत कुछ बढिया नही हैं।'
स्त्रियाँ बोली—'खूब! बढिया गीत भला हम कहाँ से लाये ?'
बोला—'देखो, मै बताता हूँ।'

कहकर प्यारे खलिहान की तरफ बढा। एक पूला लिया, नाज के दाने उसके अलग किये और फिर सकेर कर उसे धरती पर जमा कर रख दिया।

बोला—अब देखो—

'पूले-पूले सुन और मान
मेरी तुझको यही जुबान।
जहाँ-जहाँ हो तेरी सीक
वही हो उठे एक जवान।'

उसका यह कहना है कि पूला विलीन हो गया और हर एक सीक की जगह एक सिपाही लैस खडा हो गया। ढोल-ताशे बजने लगे और तुरही बोलने लगी। प्यारे ने सिपाहियो को हुक्म दिया कि हाँ, ऐसे ही गा-बजाकर सब को खुश करो। इसके बाद आगे-आगे वह और पीछे बैण्ड-पार्टी, ऐसे गली-गली जुलूस घूमा। लोगो को बडा विनोद मालूम हुआ। सिपाही खूब गाते बजाते थे। अन्त मे प्यारे ने कहा, 'अब कोई साथ मत आना।' कह कर सिपाहियो को अलग एक तरफ ले गया और फिर सब को सीक बनाकर पूले मे बाँध अपनी जगह डाल दिया।

ऐसे सब दिन हँसी-खुशी बीता। उसके बाद रात हुई और प्यारे घर जाकर तबेले मे धरती पर अपना कम्बल डाल चैन से सो गया।

[७]

अगले दिन फौजी बलजीत के कान मे इस बात की खबर पडी। सुबह भाई के पास आया। बोला—'प्यारे, यह बताओ कि वह सिपाही तुमने कैसे बनाये थे और फिर उन्हे वहाँ ले जाकर क्या किया?'

प्यारे ने पूछा—'उससे तुम्हे भला मतलब क्या?

'मतलब क्या है? क्यो? सिपाही हो तो कोई कुछ भी कर सकता है। उनसे राज का राज जो जीता जा सकता है।'

प्यारे अचरज मे बोला—'अच्छा, सचमुच? पहले से तुमने क्यो नही बताया? लो, जितने कहो उतने सिपाही बनाकर मैं तुम्हे

दिये देता हूँ। बहन और मैने दोनो ने मिलकर कितना ही भूसा छोडा है। सो सिपाहियो की क्या कमी !'

प्यारे अपने भाई को खलिहान के पास ले गया, बोला, 'देखो, मैं सिपाही बना तो देता हूँ, लेकिन सब को अपने साथ ही तुम ले जाना। जो कही उन्हे घर से खिलाना पड गया तब तो एक दिन मे वे गाँव खा जायेगे।

बलजीत ने कहा—'हाँ' सिपाही सब मैं साथ ले जाऊँगा।'

इस पर प्यारे सिपाही बनाने लगा। एक पूला धरती पर जमा के रक्खा—कि फौज का एक दस्ता तैयार हो गया। दूसरा रक्खा, तो दूसरी टुकडी तैयार सो इतने सिपाही बना दिये कि वह मैदान तो कुल उनसे भर गया।

फिर पूछा—'क्यो भाई, इतने काफी होगे ?'

बलजीत की प्रसन्नता का ठिकाना नही था। बोला—'हाँ, इतने बहुत होगे। मैं तुम्हारा एहसान मानता हूँ प्यारे।'

प्यारे बोला—'एहसान क्या। और चाहिए तो आ जाना, मैं बना दूँगा। इस मौसम मे अपने यहाँ भूसे की कोई कमी तो है नही।'

फौजी बलजीत ने फौरन उन सब टुकडियो का कमान सँभाला, उन्हे जमा किया तरतीब दी और सब को साथ ले जङ्ग का मोर्चा लेने चल दिया।

जङ्गी बलजीत का जाना था कि वैश्य धनवीर आ पहुँचा। उसे भी कल की बात की खबर लगी थी। सो जाकर भाई से बोला—'भाई, बताओ, सोने की मोहरे तुमने कहाँ और कैसे पाईं ? मेरे पास जरा शुरू करने को भी कुछ धन हो जाता तो उससे मै तमाम दुनिया का पैसा खीचकर दिखा देता।'

प्यारे अचरज मे भरकर बोला—'अरे, सचमुच ही तुमने पहले से मुझे क्यो नही बताया। लो, जितनी कहो उतनी अशर्फियाँ मैं तुम्हे बनाये देता हूँ।'

धनवीर बडा खुश हुआ। बोला—'शुरू मे तीन टोकरी भर अशर्फियाँ बस हो जायेगी।'

प्यारे बोला—'अच्छी बात है। चलो मेरे साथ जङ्गल की तरफ चलो। या बेहतर हो घोडा साथ ले लो और गाडी। क्योंकि वह सब बोझा तुमसे उठेगा कैसे ?

सो दोनो जगल मे आये। वहाँ प्यारे ने बड के पत्ते हाथ मे लिए और मल कर सोने की धार धरती पर छोड दी। सो देखते-देखते अशर्फियो का अम्बार लग गया।

पूछा—'भाई क्यो, इतनी काफी होगी ?'

धनवीर का मन बाँसो उछल रहा था। बोला—'हाँ, हाल तो इतनी काफी होगी। तुम्हारा एहसान मानता हूँ, प्यारे।'

'वह कोई बात नहीं', प्यारे बोला, 'और जरूरत हो तो आ जाना, मै और बना दूंगा। बड के पेड मे अनगिनत पत्ते बाकी हैं।'

धनवीर व्यापारी ने वह सारा गाडी भर धन बटोरा, भरा और व्यापार करने चल दिया।

ऐसे दोनो भाई चले गये। बलजीत युद्ध जीतने गया, धनवीर लेने देने से धन बढाने। सो जगी बलजीत ने तो एक राज्य जीत लिया और धनवीर ने व्यापार मे खूब धन कमा लिया।

फिर दोनो भाई मिले तो अपनी-अपनी कहानी सुनाने लगे। बलजीत ने बताया कि कैसे मुझे सिपाही मिले और धनवीर ने अपनी अशर्फियाँ मिलने की बात बताई।

बलजीत अपने भाई से बोला, 'धनवीर, राज्य तो मैंने जीत लिया है और ठाठ, बाट से रहता हूँ। पर मुश्किल यह है कि उसकी रखवाली के लिए काफी पैसा मेरे पास नही है।'

इस पर व्यापारी धनवीर ने कहा—"धन तो मेरे पास अकूत है। पर मुश्किल यह है कि उसकी रखवाली के लिए तुम्हे वह कुछ

सिपाही बनाकर दे दे। और तुम कहना कि मेरे सिपाहियो के गुजारे के लिए धन की जरूरत है, सो मुझे मोहरे बना दे।'

आपस मे यह ठहराकर दोनो प्यारे के पास आये।

बलजीत बोला—'भाई प्यारे, मेरे पास सिपाही काफी नही है। सो दो-एक टुकडी उनकी मुझे और चाहिए। बना दो।'

प्यारे ने सिर हिला दिया। बोला—

'नही, अब मै और सिपाही नही बनाकर दूँगा।'

'लेकिन तुमने वचन दिया था कि बना देगे।'

'हाँ' दिया था। लेकिन अब और नही बनाऊँगा।'

'बडे मूरख हो! क्यो नही बनाओगे?'

तुम्हारे सिपाहियो ने एक आदमी की जान ले ली, मैने सुना है। उस दिन सडक के किनारे का खेत मैं जोत रहा था, तभी एक औरत गाडी मे बैठी जा रही थी। मैंने कहा, क्या बात है, कोई मर गया है? बोली कि मेरे पति को लडाई मे बलजीत के सिपाहियो ने मार डाला है। मैं तो समझता था, सिपाही अपना गाना-बजाना किया करेंगे और लोगो का मन बहलायेंगे, पर उन्होने तो आदमी की हत्या कर डाली है! अब मैं और सिपाही बनाकर नही दूंगा।'

फिर उस अपनी बात से प्यारे डिगा नही और सिपाही नही बनाये।

धनी धनवीर ने भी प्यारे को कुछ और सोना बना देने को कहा। लेकिन उस पर प्यारे ने सिर हिला दिया। कहा—

'नही, मै अब सोना भी नही बनाऊँगा।'

'और जो तुमने वायदा किया था?'

'किया था, लेकिन अब मै नही बनाता।'

'भला क्यो, मूरख?'

क्योकि तुम्हारी सोने की मुहरो ने हमारे हरिया की बेटी की दुधार गाय हर ली है।'

'सो कैसे ?'

'कैसे क्या, हर ही जो ली है। उसके पास एक गाय थी। बाल-बच्चे उसका दूध पिया करते थे। पर उस दिन हरीचन्द की धेवती हमारे घर दूध माँगने आई। मैने कहा—'क्यो, तुम्हारी गाय क्या हुई ?' बोली—'महाजन धनवीर का कारिंदा आया था। उसने सोने के तीन सिक्के अम्मा को दिये, सो अम्मा ने गाय उसे दे दी। अब कहाँ घर मे दूध रक्खा है ?' मै तो समझता था कि सोने की मुहरे लेकर तुम अपना और लोगो का जी-बहलाव करोगे। पर उनसे तो तुम बच्चो का दूध छीनने लगे हो। नही, मैं और मुहर तुम्हे बनाकर नही दूँगा।'

और इस पर प्यारे अचल होकर अड गया और मोहरे बनाकर नही ही दी। सो दोनो भाई अपने मुँह लौटकर चले गये। जाते-जाते आपस मे सलाह मशवरा करने लगे कि कैसे अपनी मुश्किल हल करनी चाहिए।

बलजीत ने कहा--'सुनो, मैं बताता हूँ। एक काम करो। तुम तो सिपाहियो के लिए मुझे धन दो और मै तुम्हे अपना आधा राज्य दिये देता हूँ। बस, फिर धन की रक्षा के लिये काफी सिपाही भी तुम्हारे पास हो जायेगे।'

धनवीर इसमे राजी हो गया।

सो दोनो भाइयो ने आपस मे बँटवारा कर लिया। इस तरह वे दोनो ही राजा बन गये। दोनो के पास रियासत हो गई और किसी के पास धन की कमी नही रही।

[८]

प्यारे अपने देहात के घर ही रहा। गूँगी बहिन के साथ खेत मे काम करता और माता-पिता को पालता था।

एक दिन ऐसा हुआ कि उनके पालतू कुत्ते को कही से खाज लग

गईं। वह ऐसा क्षीण होने लगा कि जीने की आस ही नही रही। बिलकुल मराऊ हो आया। प्यारे को उस पर दया आई। बहन से कुछ रोटी माँग टोपी मे रख कुत्ते को डालने वह बाहर आया। टोपी फटी थी, सो टुकडा जो कुत्ते को फेका तो उसके साथ उस जडी की एक जड भी आ गिरी। कुत्ते ने रोटी खाई और साथ वह जड भी खा गया। खाना था कि वह तो एक दम चङ्गा हो गया। सब रोग जाता रहा और वह उछल-कूद मचाने लगा। कभी भौकता और दुम हिलाता और किलोले करता। यानी बिलकुल पहले की भाँति चुस्त-तन्दुरुस्त हो गया।

माँ-बाप को यह देख बडा अचम्भा हुआ। पूछने लगे, 'कुत्ते का रोग तुमने कैसे छिन मे हर लिया ?'

प्यारे बोला—'मेरे पास एक जडी की दो जड थी। उनमे से कोई एक खा ले तो सब रोग मिट जायँ। सो उनमे से एक इस कुत्ते ने खा ली है।'

उसी समय की बात है कि राजा की बेटी बीमार पडी। राजा ने गाँव-शहर सर्वत्र ऐलान कर दिया कि जो बेटी को आराम कर देगा उसे खूब इनाम मिलेगा। और वह कुँवारा हुआ तो राजा की बेटी भी उसे ब्याह दी जायगी। दूसरे गाँवो की तरह प्यारे के गाँव मे भी यह ऐलान हुआ।

माँ-बाप ने यह खबर सुनकर प्यारे को बुलाया। बोले—'तुमने राजा की ड्योढी की बात सुन तो ली है न ? तुम कहते थे कि जडी है जिससे सब रोग कट जाते है। सो जाओ और उससे राजकुमारी को आराम कर देना। बस जनमजीते को फिर चैन हो जायगा।'

प्यारे बोला—'अच्छी बात है।'

कहकर वह चलने को उद्यत हुआ। हाथ मुँह धोया, कपडे पहने, पर द्वार से बाहर होना था कि वहाँ एक भिखारिन मिली। उसका हाथ गल रहा था और वह लूली हुई जा रही थी। बोली—'अजी,

मैंने सुना है कि तुम रोगो को आराम कर देते हो। बडी दया हो कि मेरी इस बाँह को आराम कर दो। मुझ से इसके मारे कुछ भी करते-धरते नही बनता है।'

'अच्छी बात है।'

कहकर बाकी बची जडी उसने निकाली और भिखारिन को दे दी। कहा—'लो, इसे खा लो।'

जडी को मुँह के नीचे उतारना था कि भिखारिन अच्छी-भली हो गई। अब वह पहले की भाँति चल-फिर सकती थी और सब काम के लायक थी।

इतने मे अन्दर से प्यारे के माँ-बाप भी राजा के यहाँ साथ चलने के लिए आये। उन्होने सुना कि जडी तो इस मूरख ने गँवा डाली है, अब राजा की बेटी को कहाँ से आराम होगा? सुनकर दोनो प्यारे को खूब झिडकने लगे। बोले—'एक भिखारिन पर दया करते हो? भला राजा की बेटी का तुम्हे ख्याल नही है?'

पर राजा की बेटी के लिए भी प्यारे के मन मे दुःख था। सो बैल गाडी मे जोत पुआल से उसकी बैठक मुलायम बना, उस पर सवार हो, प्यारे आगे बढ लिया।

माँ-बाप बोले—'अरे, मूरख' अब कहाँ जा रहा है?'

प्यारे बोला—'क्यो, राजा की बेटी का औगुन हरने जा रहा हूँ?'

'बडा जा रहा है! अरे, तेरे पास अब जडी कहाँ रह गई है, बेवकूफ?'

बोला—'कोई बात नही। देखा जायगा।'

कहकर वह गाडी हाँके चला! चलता-चलता राजा के महल आया। पर महल की देहली पर उसका पाँव रखना था कि राजकन्या को एकदम आराम हो गया।

राजा उस पर बडा खुश और विस्मित हुआ। प्यारे का आदर-सत्कार किया और कीमती कपडे दिये।

बोला—'अब तुम ही मेरे जमाई हो।'

प्यारे बोला—'अच्छी बात है।'

और राजकुमारी का प्यारे मूरख के साथ विवाह हो गया। उसके थोडे अरसे के बाद राजा का देहान्त हो गया और मूरख ही राजा बना।

इस तरह अब तीनो भाई राजा हो गये।

[६]

तीनो अपने-अपने राज्य मे राज करने लगे। जेठा बलजीत खूब कामयाब हुआ। उसने अपने राज्य का विस्तार बढा लिया। जादू के सिपाही तो थे ही, अलावा भी उसने भर्ती किये। सारे राज्य मे दस घर पीछे एक सिपाही देने का हुक्म था। उसका अच्छा कद हो और बदन मे हट्टा-कट्टा भी। ऐसे जवानो की बहुत बडी फौज उसने खडी की और सबको कवायद सिखाई। कोई विरोध मे चूँ भी करता तो झट बलजीत अपनी फौज भेज देता। सो उसका मन चाहा हो जाता था। इस तरह आस-पास के सब राजा उसका डर मानते। इस तरह बलजीत की खूब आराम और वैभव मे गुजर होती थी। जिस पर नजर पडती, और जो भी चाहता, वही उसका था। क्योकि सिपाही थे और वह मन चाही चीज जीतकर उसको ला सकते थे।

धनवीर वैश्य भी अपने आनन्द से रहता था। प्यारे सिंह से जो रकम पाई थी, उसमे से उसने रत्ती भी नही खोया था, बल्कि उस दौलत को खूब बढा चढा लिया था। अपने राज्य मे अमन और आईन का उसने दौर डाल दिया था। पैसा खज़ाने मे जमा रखता था। ऊपर से लोगो से कर उघाता था। चुँगी-कर एक उसने जारी किया था और सडक पर चलने या गाडो ले जाने का भी टैक्स डाला था। कपड़ा लत्ता और रसद इस तरह की चीजो पर भी टैक्स था।

जो वह चाहता, उसे सुलभ था। पैसे की खातिर लोग सब उसे ला देते थे और खुद गुलामी को राजी थे। क्योकि हर किसी को पैसे की चाह थी।

उधर उम मूरख प्यारे की भी हालत बुरी नही थी। ससुर के क्रिया, कर्म के अनन्तर उसने क्या किया कि राज की सब पोशाक ली और बीबी से कहा कि इसे बक्सो मे बन्द करके रख दो। खुद वही अपने गाढे का कुर्ता तन पर ले लिया और काम पर चल पडा। बोला—'ठाली तो मेरा जी नही लगता है। देखो, बदन पर चर्बी भी जमती जा रही है। भूख नही लगती और नीद भी खोई मालूम होती है।'

सो वह माँ-बाप को और अपनी गूँगी-बहन को भी पास ही ले आया और पहले की तरह खेत पर काम करने लगा।

लोग बोले—'लेकिन आप तो राजा है।'

प्यारे बोला—'हाँ, पर राजा भी तो खाने को चाहता है न ?'

एक दिन राजा का मन्त्री आया। बोला—'तनख्वाह देने के लिए खजाने मे पैसा नही है।'

प्यारे—'अच्छी बात है। तो मत तनख्वाह दो।'

'ऐसे कोई नौकरी नही करेगा।'

'अच्छी बात है। मत नौकरी करने दो। ऐसे उन्हे काम का और भी वक्त निकल आएगा। चलो, सब खाद ढोये। कितना तो घूरा जगह-जगह पडा है। यह सब खाद है कि नही।'

और लोग राजा के पास अपने मुकदमे लेकर आये। एक बोला—'अजी, इसने मेरा धन चुराया है।'

प्यारे ने कहा—'अच्छी बात है। चुराने से तो मालूम होता है कि उसके पास कुछ था नही।'

सो एक तरह सब लोग जानते गये कि प्यारेसिह राजा मूरख है।

बीबी उसकी बोली—'लोग कहते है, तुम मूरख हो ?'

प्यारे ने कहा—'ठीक तो कहते है ।'

पति की बात सुनकर वह सोच मे रह रई । पर असल मे वह भी मूरख ही थी । मन मे बोली कि पति के खिलाफ मै भला कैसे जा सकती हूँ । सुई कही जाय, धागे को भी तो वही जाना है न । यह कहकर उसने भी अपनी राजसी पोशाक उतार कर बक्स मे बन्द कर दी और अपनी गूँगी ननद से काम सीखने चली । सीख कर होशियार हो गई और अपने पति को खूब सहाय देने लगी ।

इसका नतीजा यह हुआ कि चतुर सयाने जितने जन थे, सब प्यारे का राज छोडकर चले गये । बस मूरख-मूरख रह गये ।

जिसके पास कोई पैसा सिक्का नही था । सब रहते थे और काम करते थे । भर पेट खाते और दूसरो को खिलाकर खुश रहते थे ।

[१०]

और उधर पाताल लोक मे शैतान बाबा इन्तजार मे थे कि अब कुछ खबर मिले, अब मिले । तीनो भाइयो की बरबादी को तीन चर गये थे । पर गये मुद्दत हुई, खबर उनकी कोई नही आई । सो पता लगाने वह बाबा खुदबखुद मर्त्य लोक आये । वहाँ बहुत खोज छान की । पर वे तीन चर तो नही मिले । मिले तो उनकी जगह तीन सूराख मिले ।

सोचा कि मालूम होता है कि तीनो नाकाम रहे और विपत के शिकार हुए । सो चलो, अब मै उन तीनो को खुद ही भुगतता हूँ ।

यह मन मे धार वह उन तीनो की तालाश मे चला । पर अपनी पहली जगह तो कोई उन मे से था नही और देखता क्या है कि तीनो अपने अलग-अलग राजधानी मे राज्य करते है । इससे उस शैतान बाबा को बडी खीझ हुई । बोला—'खैर, अब मै उन पर अपना हाथ आजमा कर देखता हूँ ।'

सो पहले तो वह राजा बलजीत के यहाँ गया । पर ऐसे नही

गया भेष बदल कर गया। एक फौजी सरदार का बाना उसने बनाया और घोडा गाडी पर सवार होकर महल पर पहुँचा। वहाँ जाकर बोला—'हे राजा बलजीत, सुना है कि तुम बडे बहादुर, पराक्रमी हो। मैने भी कई युद्ध देखे है। जगी मैदान का मुझे अनुभव है और मैं तुम्हारी सेवा मे काम आना चाहता हूँ'

राजा बलजीत ने उससे पूछताछ की और सवाल किये। देखा कि आदमी होशियार है। सो उसे नौकरी मे रख लिया और सिपहसालार बना दिया।

इस नये सेनापति ने राजा बलजीत को बताया कि कैसे एक मजबूत सेना तैयार करनी चाहिए, ऐसी कि कोई न हरा सके। इसके लिए तो हमे भरती करनी चाहिए। राज मे बहुत लोग बेकार है। जवानो को तो फौज मे आना लाजमी बना देना चाहिए। इस तरह फौज की ताकत अब से पाँच गुनी हो जायगी फिर तोप और बन्दूक भी नये बनाने और मँगाने चाहिए। ऐसी बन्दूक मै ईजाद करूँगा कि एक बार मे सौ छर्रे छोडेगी। और तोप ऐसी कि क्या आदमी और क्या घोडा क्या तलवार और क्या दीवार जो सामने पडे सब उसकी मार से भस्म हो जाये। जिसके ध्वस के आगे कुछ नही ठहर सकेगा।

राजा बलजीत ने सेनापति की बात पर गौर किया। हुक्म हो गया कि अच्छा, जवान लोगो को सब को फौज मे भर्ती होना लाजमी है। और कारखाने बनवाये जहाँ नई तरह की बन्दूक और तोपे बडी तादाद मे तैयार हो सके। यह होते ही पडौस के राजा से लडाई ठान दी गई। आमने-सामने दोनो फौजो का मिलना था कि बलजीत ने सिपाहियो को हुक्म दिया कि जवानो, कसकर छर्रे छोडो और तोपो का जौहर दिखाओ। बस क्या था। एक धावे मे दुश्मन की आधी फौज खेत रही। कुछ कटकटा गये, बहुत ध्वस हो गये और बाकी भाग निकले। दुश्मन राजा ऐसा भयभीत हुआ कि हथियार डाल दिये और

सारा राज्य अपना सौंप दिया। राजा बलजीत अपनी विजय पर खुश हुआ।

बोला—'अच्छा अब हिन्दुस्तान की सल्तनत की बारी आनी चाहिये।'

लेकिन हिन्दुस्तान के राजा ने बलजीत के बारे मे पहले से सब हाल चाल ले रक्खा था। उसने भी वहाँ की ईजादो की नकल कर ली थी और अपनी नई ईजादे भी की थी। इस तरह खूब तैयारी उसने कर रक्खी थी। सारे जवान मर्द ही नही, बल्कि बिन ब्याही औरतो को भी सेना मे भर्ती किया था और फौज उसकी बलजीत से भी बढी-चढी बन गई थी। हू-बहू बलजीत की-सी तोप और बन्दूक उसने ढलवा ली थी। बल्कि हवा मे उडकर ऊपर से आग के बम फेकने का भी तरीका ईजाद कर लिया था।

बलजीत हिन्दुस्तान की सीमा पर चढाई करने आया। खयाल था कि पहले राजा की तरह इसे भी हाथो-हाथ गिराऊंगा। पर पहली धार अब भोथरी हो गई थी हिन्दुस्तान के राजा ने बलजीत की फौज को पास न फटकने दिया। पहले ही हवा के रास्ते अपनी जनाना पल्टन को भेज दिया कि बलजीत फौज पर जा आग के बम बरसाओ जनाना पल्टनने वहाँ जाकर ऐसी आगकी वर्षा की कि पतगोकी तरह बलजीत की फौज के लोग भुनने लगे। यह देख फौज भाग निकली और राजा बलजीत अकेला ही रह गया। सो हिन्दुस्तान के बादशाह ने बलजीत का इलाका भी हथिया लिया और बलजीत ने जैसे-तैसे भागकर जान बचाई।

इस तरह सबसे जेठे को निबटा कर शैतान ने अब राजा धनवीर की राजधानी मे जाकर डेरा डाला। वहाँ अपनी फर्म खोल दी और लगा पैसा लुटाने। हर चीज ऊँचे दाम उसने खरीदनी शुरू की। सो ज्यादा कीमत पाने के लिये दौड-दौड सब लोग उसके पास पहुँचने लगे। बदले मे लोगो के पास इतना सिक्का फैल गया कि सब के सब अपना पूरा टैक्स वक्त पर अदा कर देते और पहला बकाया भी सब चुका दिया था। राजा धनवीर इस पर खूब खुश हुआ। सोचा कि यह

नया व्यापारी तो अच्छा आया है। अब तो और भी धन मेरे पास जुड़ जायगा और जिंदगी ऐश से कटेगी।

सो धनवीर राजा ने नई तामीर के नक्शे बनाये और एक नया महल खडा करने का हुक्म दिया। एलान कर दिया कि लोग लकडी और पत्थर लाकर दे और मजदूरी के लिए भी लोगो की जरूरत है। दर भी जिसकी ऊँची मिलेगी। धनवीर राजा का ख्याल था कि लोग पहले की तरह झुण्ड-के-झुण्ड आयेगे। पर अचरज से देखता क्या है कि पत्थर और लकडी सिर पर ले लेकर सब लोग उस व्यापारी के पास पहुँच रहे है और मजदूर भी उधर ही जाते है। राजा ने दर और भी ऊँची चढा दी। लेकिन व्यापारी ने उससे भी सवाई कर दी। धनवीर के पास बहुत धन था, लेकिन व्यापारी के पास उससे भी अकूत था। सो हर जगह व्यापारी ऊँचे दाम चढा ले जाता था और बाजी उसके हाथ रहती थी।

नतीजा यह कि राजा के महल पर सन्नाटा रहने लगा। नए महल की शुरूआत भी नही हो सकी।

धनवीर के मन मे एक नया बाग तैयार करने की आई। सो बारिश बीतते उसने लोगो को बुलाया कि आये और बाग तैयार करें पर कोई न फटका। सब लोग उस व्यापारी का एक तालाब खोद कर तैयार करने मे लगे थे जाडो के दिन आये और धनवीर को कुछ और मुलायम पशमीनो की जरूरत हुई। आदमी खरीदने बाजार भेजे, लेकिन वे खाली हाथ लौट आये। बोले कि बाजार मे तो ये चीजें मिलती ही नही हैं। सब-की-सब व्यापारी ने ले ली है। बढी-बढी कीमत दे उसने बढिया पशमीने खुद खरीद लिये है और पहनने की जगह उन्हे बिछाने के काम लाता।

धनवीर ने कुछ उम्दा घोडे खरीदने चाहे। भेजा खरीदारो को। लेकिन उन्होने आकर खबर दी कि अच्छे-अच्छे जानवर तो सब व्यापारी ने खरीद लिये हैं और पानी ढो-ढोकर उसका तालाब भरने के काम वे आ रहे है।

इस तरह राजा का सारा कारबार रुकने लगा। कोई उसके लिये काम करने को राजी न होना था, बस सब लोग राजा के आगे वक्त पर अपना टैक्स चुकाने चले जाते थे, क्योकि व्यापारी की कृपा से सिक्के की उनके पास कमी न थी। बाक़ी कोई राजा को नहीं पूछता था।

सो राजा के पास इतना धन जमा हो गया कि समझ न आता था, कहाँ उन सबको भरके रक्खा जाय। जिन्दगी ऐसे दूभर होने लगी। नए मनसूबे बनाने तो उसके छूट ही गये। अब तो गुजारा चल जाता तो बहुत था। लेकिन गुजारे तक की मुसीबत होने लगी। हर चीज की उसके पास कसती हो आई। एक-एक कर रसोईए, कोचवान, नौकर उसे छोड व्यापारी की खिदमत मे जाने लगे। ऐसे उसे लाले पड आये। बाजार से खरीदने को भेजता तो वहाँ कुछ मिलता ही नही। सब व्यापारी ने खरीद लिया था और सब लोग राजा का टैक्स चुका जाते थे, अधिक उन्हे राजा से मतलब नही था।

आखिर राजा धनवीर को इस पर बडी झुँझलाहट हुई। उसने व्यापारी को देश निकाला दे दिया। पर व्यापारी वहाँ से गया तो देश की हद के पार ही एक जगह जाकर जम बैठा। वहाँ भी उसने पहले की तरकीब की। पैसे की खीच थोड़ी नही होती। सो राजा के बजाय सब लोग व्यापारी के पास जा जाकर अपने माल के ऊँचे दाम उठाने लगे।

राजा धनवीर की हालत यो खराब पर खराब होती गई। दिन के दिन हो जाते और खाने को नसीब न होता। अफवाह यहाँ तक उडी कि व्यापारी का कहना है कि ठहरो, अभी मैं खुद राजा को ही जो खरीद लेता हूँ। धनवीर सुनकर बड़ा हैरान था। उसे कुछ समझ न पडता था कि क्या किया जाय।

इसी वक्त बलजीत उसके पास आया। बोला, 'हिन्दुस्तान के राजा ने मुझे हरा दिया है। सो मेरी कुछ सहायता करो।'

लेकिन यहाँ धनवीर ही गले तक अपनी मुसीबतो मे डूबा था। बोला—'यहाँ मुझे ही जो दो दिन से खाने को नही मिला है, भाई। तुम अपनी कहते हो।'

[११]

इस तरह दोनो भाइयो को ठिकाने लगा अब शैतान मूरखराज की तरफ मुडा। उसने फौजी जनरल का वेश बनाया और आकर मूरख को समझाया कि राजा के पास एक फौज जरूर रहनी चाहिए।

बोला—'फौज बिना राजा की भला शोभा क्या है। बस मुझे आप हुक्म दे दीजिये और मैं आपके राज्य की प्रजा मे से ही सिपाही निकाल लूँगा और फौज खडी हो जायगी।'

मूरख प्यारे ने उसकी बात सुनी। बोला—'अच्छी बात है। बनाओ फौज और उन्हे अच्छे-अच्छे गाने सिखाओ। गाती-बजाती फौज बडी भली मालूम होगी।'

सो राजाज्ञा पाकर वह शैतान प्यारे के तमाम राज मे फौज की भरती करता घूमने लगा। कहने लगा कि सिपाही बनोगे तो मौज रहेगी। रोज शराब मिला करेगी और उम्दा लाल पोशाक मिलेगी और भत्ता और ..

लोग सुनकर हँसते थे। कहते थे कि शराब तो घर चाहे जितनी हम खीच सकते हैं। और पोशाक की जो बात है तो हमारी बहन-बीबी जैसी कहो रग-बिरंगी पोशाक हमे तैयार कर दे सकती है। और ..

सो कोई भरती नही होता था।

इस पर शैतान आया और प्यारे राजा से बोला, 'आपकी प्रजा तो बडी मूरख है। अपने मन से कोई भरती नही होता है। सुनिये, कहा जाय तुम्हे भरती होना होगा।'

प्यारे बोला—'अच्छी बात है। करो कोशिश।'

सो उस बूढे ने जाहिर ऐलान कर दिया कि सब को भरती होना

होगा। जो इन्कार करेगा, राजा के यहाँ से उसे मौत की सजा दी जायगी। लोग सुनकर फौजी जनरल के पास आये और बोले—'तुम कहते हो कि भरती नही होगे तो राजा से हमे मौत की सजा मिलेगी। लेकिन भरती होगे तो क्या होगा, यह भी तो बताओ। हम ने सुना है कि सिपाही भरती होकर लडाई मे मारे जाते है ?'

'हाँ, ऐसा कभी होता तो है।'

यह सुना तो लोग और हठ पड गये। बोले—'तब तो हम नही भरती होगे। हर हालत मे मरना ठहरा ही तो बाहर से घर मरना अच्छा है।'

'तुम मूरख हो, जाहिर बेवकूफ हो।' शैतान बोला, 'अरे, सिपाही तो मरे या नही भी मरे। लेकिन भरती नही होगे तो फिर राजा के हाथ तुम्हारी मौत पक्की है।

सुनकर लोग झमेले मे पड गये। मूरखराज के पास पूछ-ताछ करने पहुँचे। बोले—'एक जनरल साहब आये है। कहते है कि सब फौज मे भरती होओ। सिपाही बनकर तुम मर भी सकते हो और बच भी सकते हो। लेकिन भरती को राजी नही हुए तो प्यारे राजा तुम्हे जरूर सजा देकर मार देगे। क्यो जी, यह सच है ?'

प्यारे हँसा। बोला—मैं अकेला तुम सबको कैसे मार दूंगा ? मूरख न होता तो मै तुम्हे सब समझा सकता था पर सच यह है कि मेरी खुद भी समझ मे यह मामला नही आता है।'

लोग बोले—'तो हम भरती नही होगे।'

प्यारे ने कहा— 'अच्छी तो बात है। मत होओ।'

सो लोग जनरल के पास गये और भरती होने से इन्कार कर दिया।

शैतान ने देखा कि यहाँ तो उसकी दाल गलती नही। सो उसने फतेहिस्तान शाह के पास जाकर साठ-गाठ शुरू की।

शाह के पास पहुँच कर बोला—'सुनिए शाह साहब, चलकर

राजा प्यारेसिंह के इलाके पर आप हमला क्यो नहीं करते हैं। धन तो बेशक उस राज्य मे नही है। लेकिन जमीन खूब है और चौपाये है और गल्ला है और हर किस्म के कच्चे माल की इफरात है।'

सो फतेहिस्तान के शाह ने लडाई की तैयारी शुरू कर दी। बडी फौज इकट्ठी की। बारूद और बन्दूक जमा की और दुश्मन के राज्य पर चढाई बोल दी। फौज कूँच करती हुई हद लाँघ उस राज्य के अन्दर दाखिल हो गई।

प्रजा के लोग अपने प्यारे राजा के पास आये। बोले—'फतेहिस्तान के शाह ने हम पर चढाई कर दी है।'

प्यारे बोला—'अच्छी तो बात है। उन्हे आने दो।'

हद के अन्दर आकर फतेहिस्तान के नवाब ने पल्टन की सफर-मैना टुकडी आगे भेजी कि देखो कि दुश्मन की फौज कहाँ छावनी डाले हुए है। पर इधर-उधर देखा-छाना, दुश्मन की फौज का कोई पता-निशान न दीखता था। शाह इन्तजार मे रहे कि अब कही से फौज का सुराग मिले, अब मिले। पर फौज के नाम एक आदमी नजर नही आया कि जिससे लडा जाय। इस पर फतेहिस्तान के राजा ने हुक्म दिया कि जाओ, बढकर गाँवो पर कब्जा कर लो। सिपाही चलते हुए गाँव पर पहुँचे। गाँव के मर्द-औरत सब मिलकर अचरज से सिपाहियो को देखने लगे। सिपाहियो ने उनका गल्ला और चौपाये झपट कर काबू करने शुरू किये। पर उन लोगो ने कोई बाधा न दी। बल्कि खुद बताकर आसानी कर दी। फिर सिपाही दूसरे गाँव गये। वहाँ भी यही हुआ। इसी तरह दिन भर वे बढते गये। फिर अगले दिन भी सब जगह वही बात हुई। लोग सब माल यो ही ले लेने देते थे, कोई विरोध नही करता था। बल्कि सिपाहियो से लोग कहते थे कि बडी खुशी की बात है, आओ न, हमारे साथ तुम भी रहो सहो।

लोग कहते, 'भाई, तुम्हारे यहाँ मुश्किल है और धरती पर खाने

को नाज काफी नहीं तो अच्छी बात है, सब आकर यहां हमारे साथ क्यो नही रहने लगते हो ?'

सिपाही बढते गये। पर फौज कोई नही मिली कि लडाई हो। अमन से रहते लोग मिले जो अपने खुद खाते थे और आवभगत के साथ औरो को खिलाने को तैयार थे। सिपाहियो का उन्होने कोई मुकाबला नही किया। बल्कि स्वागत-सत्कार किया और अपने साथ आकर न्यौता दिया। सो सिपाहियो का जी इस लूट-मार के काम मे लगा नही। वे उकता गये। अपने शाह के पास आकर बोले—'यहाँ नही लडेंगे, कही और हुक्म दीजिये। लडाई तो ठीक है, पर यह भी कोई लडाई है। यह तो दूध मे छुरी भौंकने के समान है। यहाँ हम बिलकुल नही लड सकते है।

शाह सुनकर बडे झल्लाये। बोले—'जाओ सारा राज्य तहस-नहस कर डालो। गाँव लूट लो, मकान जला दो और नाज फूंक डालो। चौपाये मारकर खतम कर दो। अगर हुक्म मेरा न माना तो एक-एक को फाँसी दे दूंगा।'

सिपाही मारे डर के नबाब के हुक्म के मुताबिक करने लगे। मकानो मे आग लगाई और गल्ला फूंक और गायो के गले काटने लगे। उस राजा की मूर्ख प्रजा ने अब भी मुकाबला नही किया। बस, वे आँसू गिराते थे। क्या बुड्ढे-बुजुर्ग, क्या बूढी स्त्रियाँ और क्या जवान आँसू गिराने से ज्यादा कोई कुछ नही करता था।

बोले—'भले लोगो, हमे क्यो सताते हो? नाज ईश्वर की न्यामत है और चौपाये कुदरत को बहाल करते है। इन्हे नाहक बरबाद करते हो? जरूरत हो तो अपने लिए ही तुम उन्हे क्यो नही ले जाते?

आखिर सिपाहियो का मन इस अत्याचार को और नही सहार सका। आगे बढने से उन्होने इन्कार कर दिया। सो फौज इस तरह तितर-बितर हो गई, और भाग गई।

शैतान की यह युक्ति भी काम न आई। सिपाहियो को लेकर प्यारे का कुछ नही बिगाडा जा सका। सो उसने दूसरी राह पकडी। इस बार एक भले सौदागर के वेश मे प्यारेसिह के राज्य मे पहुंचा और वहाँ घर बसाकर बैठ गया। सोचा कि ताकत के जोर से नही तो धनवीर की तरह पैसे के जोर से तो वह काबू मे आ ही जायेगा।

जाकर राजा से बोला—'मैं आपकी भलाई करने आया हूँ। देखिये, एक नफे की और उपकार की बात मै कहता हूँ। असल मे आपको समझदारी सीखनी चाहिए। मेरा इरादा है कि आपके राज्य मे एक बडी फर्म खोलूँ और व्यापार का सगठन करूँ ?'

प्यारे राजा बोला—'अच्छी तो बात है। मरजी हो तो आइये, क्यो नही, आईये और हम लोगो के साथ रहिए।'

अगले दिन वह भला व्यापारी बडे चौक मे पहुँचा सोने की मोहरो का थैला पास मे रख लिया और लिखते जाने को एक कागज खरीदा। वहाँ बीच चौक खडे होकर बोला—ऐ लोगो, सुनो! तुम पशुओ की भाँति रहते हो। मैं तुम्हे सिखाना चाहता हूँ कि कैसे रहना चाहिए। इल्म और अदब मैं तुम्हे बताऊँगा। देखो, इस नक्शे के मुताबिक मेरे लिए एक मकान तैयार किया जाना है। मै बताता जाऊँगा वैसे काम करते जाना। काम के बदले सोने की मोहरे तुम्हे मिलेगी।'

यह कहकर बोरे मे से भरी मोहरे उसने लोगो को दिखाईं।

उस राज्य की प्रजा के मूरख लोग बडे अचरज मे पडे। उनके यहाँ धातु के सिक्के का चलन नही था। अपना माल अदल-बदल लेते थे और मेहनत करके लेना-देना चुकाते थे। सोने की मोहरो को वे अचम्भे से देखते रह गये। बोले—'चीज तो भाई, वह खूबसूरत दीखती है।'

सो अपना माल लाकर वह देने लगे या मेहनत करने को राजी

हुए। ऐवज मे कुछ मोहरें ले लेते थे। धनवीर के राज्य की तरह यहाँ भी शैतान बाबा ने हाथ अपना खोल दिया। आओ और लूटो, लोग आ-आकर अशर्फियाँ ले जाते, बदले मे अपना सामान दे जाते या कुछ मेहनत का काम कर देते।

यह देख वह बडा खुश हुआ। मन-मन मे कहने लगा कि इस बार मामला ठीक चल रहा है। बस, धनवीर की तरह अब इस प्यारे को भी चगुल मे लिया। देखते जाओ। क्या दीन, क्या दुनिया, सोने के मोल कुल-का-कुल उससे खरीदे लेता हूँ।

पर वे लोग थे मूरख। सोने की मोहरे पाईं कि उन्होने अपनी औरतो को दे दी। औरतो ने गहने बनवा लिये। लडकियाँ उसके जेवर गले मे पहनती और भाँति-भाँति के आकार मे बनाकर अपने जूडो मे बाँधती। होते-होते गली, सडक मे बालक उन सोने के टुकडो से खेलने लगे। सबके पास ही ऐसे टुकडे बहुतेरे हो चले थे। और अब किसी को उनकी जरूरत न रह गई थी। सो सब ने उन्हे लेना बन्द कर दिया। लेकिन अभी उन नये महाजन की हवेली आधी भी नही बनी थी और साल भर के लायक भी माल-सामान उनके पास इकट्ठा नही हो पाया था। सो उन्होने ऐलान किया कि अभी काम बहुत बाकी है और लोगो की जरूरत है। अभी बहुत से गाय-बैल भी उसे चाहिए और गल्ला भी चाहिए। हर चीज और हर काम का नकद सोना दूँगा और पहले से ज्यादा।

पर कोई बन्दा काम करने न आया। न कोई कुछ बेचने लगा। हाँ, कभी हुआ तो कोई लडका या कोई नन्ही बच्ची हाथ मे बेर-अमरूद ले उसके बदले मे सोने की मोहरे लेने वहाँ चली जाती तो चली जाती। और तो कोई पास फटकता नही था। सो उस महाजन को खाने के लाले पडने लगे। आखिर मारे भूख के वह भला आदमी गाँव मे घूमने निकला कि कही कुछ सिक्का देकर खाना मिल जाये। एक

अपना काम निबटाने से पहले आकर खाने पर पहुँच जाते थे, उनको खूब पहचानती थी। धोखा उमकी आँखो को देना मुश्किल था। उसने असल मे हाथो की पहचान कर रक्खी थी। जिनकी हयेली खुरदुरी और सख्त होती, उन्हे वह परोमकर देती थी। औरो को अलग और पीछे बैठाया जाता था।

वह बूढा शैतान आकर रसोई मे थाली पर बैठ गया। पर गूँगी लडकी पकडकर उसका हाथ देखने लगी। देखा तो उसकी हथेलियाँ मुलायम और चिकनी थी। नाखून भी घिसे हुए नही थे। हाथो मे खुरदुरा पन बिलकुल नही था। इस पर वह गूँगी बहन गुस्से मे बड-बडाने लगी और खीचकर उसे पटडे से उठा अलग कर दिया।

इम पर प्यारे राजा की स्त्री बोली—'इस बात पर नाराज न होना। मेरी ननदजी ऐसे आदमी को थाली-पटडे पर नही बैठाती, जिसके हाथ काम से खुरदुरे न हो। थोडा सबर कीजिए। लोग जब खा चुकेगे तो पीछे आपको मिलेगा।'

बूढे शैतान को इस पर बडी झुँझलाहट हुई कि राजा के घर में आकर उसका इस तरह अपमान किया गया। वह मूरखराज से बोला—'तुम्हारे राज्य मे यह क्या बेवकूफी का कायदा है कि सबको हाथ से काम करना पडे। तुम मे अकल नही है, तभी तो ऐसा कानून बनाया है। क्या लोग हाथ से ही काम करते है; कुछ जानते हो ?'

प्यारे बोला—'हम लोग मूरख है। कैसे वह सब जानेगे। हम तो अपना ज्यादातर काम हाथ से और जिस्म से करते है।

तभी तो तुम लोग मूरख हो। लेकिन मैं बताऊँगा कि दिमाग से कैसे काम किया जाता है, तब तुम्हे पता चलेगा कि हाथ से काम करने के बजाय सिर से काम करने से ज्यादा फायदा है।

प्यारे अचरज मे रह गया। बोला—'अगर ऐसी बात है तब तो ठीक ही है कि इसको मूरख कहा जाता है।'

पर बूढा शैतान अपनी कहता रहा। बोला—'लेकिन एक बात

है। दिमाग का काम आसान नही होता। मेरे हाथो पर दाग नहीं है सो तुम मुझे थाली पर नही बैठाते हो। लेकिन यह तुमको नही पता कि दिमाग का काम उससे सौगुना कठिन होता है। कभी तो सिर उसमे फटने जैसा हो जाता है।'

प्यारे सुनकर जैसे सोच मे पड गया। बोला—'तो बाबा, इतनी तकलीफ क्यो कोई अपने को दे ? सिर फटने को होता है तो क्या वह कुछ अच्छा लगता है। इससे क्या यह बेहतर न होगा कि हाथ और बदन के सहारे मोटा ही काम कर लिया जावे, जिससे सिर सही रहे ?'

पर शैतान बोला, 'यह सब हमे मूरख लोगो की खातिर करना होता है। अगर अपने सिर पर हम जोर न दें तो तुम लोग हमेशा को मूरख रह जाओ। सिर से काम लेने की वजह से अब मै तुम्हे कुछ सिखा तो सकता हूँ।'

प्यारे अचम्भे मे भरकर बोला, जरूर सिखाइये। जिससे हाथ दुःख आये तो जी-बहलाव के लिए हम अपना सिर भी कभी इस्तेमाल कर लिया करे।'

बूढे बाबा ने वचन दिया कि अच्छा सिखाऊँगा। सो प्यारे ने सारे राज्य मे ड्योढी करवा दी कि एक भले मानस आये है। वह सबको सिर से काम करना सिखायेगे। बतायेगे कि कैसे हाथ से ज्यादा सिर से काम किया जा सकता है। सब लोगो को चाहिए कि आवें और सीखें।

प्यारे की राजधानी के नगर मे एक ऊँचा मीनार था। काफी सीढियाँ चढकर उसकी चोटी पर पहुँचना होता था। वहाँ एक लाल-टेन थी। प्यारे उन भले-मानस को वही चोटी पर ले गया कि सब लोग उनके दर्शन कर सके।

वह बाबा उस ऊँची जगह पर जमकर बैठ गये और बोलने लगे। लोग सुनने के लिए नीचे आये। उनका खयाल था कि उपदेशक महो-दय हाथो को बिना स्तेमाल मे लाये सचमुच सिर से काम करने का

तरीका बतायेंगे। पर असल मे जो उन्होने बताया वह तो यह था कि बिना काम किये कैसे रहा जा सकता है। लोगो को उनका व्याख्यान कुछ ठीक समझ नही आया। सो पहले तो एक दूसरे के मुँह की ओर वह ताकते रह गये और विचार मे पडे रहे। आखिर अपने-अपने काम धन्धे पर चले गये।

उपदेशक बाबा मीनार पर पूरे-के पूरे दिन जमे रहे। उसके बाद दूसरे दिन भी। व्याख्यान उनका बराबर चलता रहा था। पर इतनी देर वहाँ खडे-खडे उन्हे भूख लग आई। पर मूरख लोगो को मीनार पर जाकर उन्हे कुछ खाना देने की सूझ ही न होती थी। सोचते थे कि अगर हाथ के बजाय यह महोदय सिर से और भी बढकर काम कर सकते है तो उस सिर के जोर अपने लिए खाने का इन्तजाम तो आसानी से कर ही सकते होगे।

सो तीसरा दिन हुआ और बाबा उसी जगह थे। बराबर उपदेश देते थे। लोग पास आते, थोडे रुकते और सुनते और फिर राह चले जाते थे।

प्यारे ने लोगो से पूछा—'क्यो भाई, उन महाशय ने सिर से काम करना शुरू अभी किया है कि नही ?'

लोग बोले—'अभी तो नही किया दीखता। अभी तो वह मुँह से ही बोल रहे है।'

ऐसे मीनार की चोटी पर खडे बोलते-बोलते उन्हे एक दिन और बीता। पर कमजोरी बहुत होती जाती थी। सो आखिर वह लड-खडाये और उनका सिर लालटेन के खम्भे मे जाकर लगा! नीचे खडे आदमी ने देखा तो दौडा गया और जाकर प्यारे राजा की रानी को खबर दी। रानी दौडी अपने राजा के पास गई। राजा खेत मे काम कर रहा था।

बोली—'अरे, चलो देखो तो। कहते है उन बाबा ने अब वहाँ सिर से काम करना शुरू कर दिया है।'

प्यारे को अचम्भा हुआ। बोला—'सचमुच ?'

सो हल-बैल छोड मूरखराज मीनार के पास आया। इस वक्त तक वह बूढा बाबा भूख से बेहाल हो गया था और लडखडाकर गिरा जा रहा था। बार-बार खम्भे से आकर सिर उसका टकराता था। प्यारे का वहाँ पहुचना था कि शैतान ढेर होकर ढह पडा और धम-धम झीने की सीढियो पर गिरता लुढकता आने लगा।

मूरखराज बोला—'भाई, इनका कहना था कि सिर के काम से कभी-कभी वह बिलकुल फटने जैसा हो जाता है। छाला-गुमडी तो भला ऐसे मे चीज क्या है। अचरज नही, सिर के ऐसे सख्त काम के बाद मरहम पट्टी की जरूरत हो आवे।'

लुढकती-पुडकती वह काया आई और नीचे की पैडी पर धरती मे धडाम से उसका सिर लगा। प्यारे का पास पहुँचकर देखना ही था कि इन महोदय ने सिर से कितना कुछ कर्तब किया है, लेकिन तभी धरती फटी और उस काया का जीव वही जाने कहाँ पाताल मे समा गया। बस एक सूराख वहाँ बाकी रह गया।

यह देख प्यारे ने अपना सिर खुजलाया। बोला—'छि, यह तो वही नरक की गन्ध है। उसी योनि का कोई जीव मालूम होता है। पर राम-राम, यह तो पहले सब का बाप ही रहा होगा।'

मूरखराज अपने राज्य मे अब भी राज करता है और बहुत लोग उसके राज्य मे जाकर बसने पहुँचते है। उसके दोनो भाई भी वहाँ आ गये और वह उनका भी पालन करता है। जो भी परदेशी कोई पहुँचे सबको प्यारे राजा का कहना है कि आओ भाई, सब आओ। आओ रहो। हमारे यहाँ किसी को कोई कमी नही।

बस राज्य मे एक नियम है वह यह कि जिसके हाथ काम से खुरदरे होगे उसे तो मान की रोटी मिलेगी। बाकी को बचे-खुचे मे से ही मिल सकेगा।

●

: ३ :

जीवन-मूल

[१]

एक रैदास मोची शपने स्त्री-बच्चो के साथ एक किसान की झोपडी मे रहता था। नाम था ननकू। उसके पास अपनी जमीन नही थी, न घर था। रोज जूते गॉठ कर रोजी चलाता था। पर काम का भाव सस्ता था नाज का मँहगा। सो जो कमाता था, खाना जुटाने मे खर्च हो जाता। स्त्री-मर्द के बीच जाडो के लिए बस एक लोई थी। यह भी चिथडे हो चली थी। यह दूसरा साल था कि दोनो सोचते थे कि अब के दोहर-लिहाफ बनवायेगे। सो जाडे के दिनो तक ननकू ने उसके लिए कुछ पैसा बचा भी लिया था। पॉच का एक नोट घर के बक्स की तलहटी मे रक्खा था और कोई इतना ही पैसा बस्ती मे लोगो से उसे लेना निकलता था।

सो एक सवेरे कम्बल-लोई लेने के ख्याल से ननकू बस्ती जाने को तैयार हुआ उसने कुर्ता पहना उस पर बीबी के बदन की मिरजई, और ऊपर एक गाढे की चादर डाल ली। नोट जेब मे रखा, झाड से लकडी का एक डण्डा तोड़ सहारे को हाथ मे लिया और कलेऊ करके राम-नाम ले रवाना हो लिया। सोचा कि जो पॉच रुपये बस्ती मे लेने

निकलते हैं वे भी उगाह लूंगा। सो पांच तो वो, पांच ये-दस रुपये में जाडो के लिए खासे गर्म कपडे हो जायेगे।

बस्ती मे आया और अपने कर्जदार एक किसान के घर आया। लेकिन किसान घर पर मिला नही। स्त्री थी, सो स्त्री ने वचन दिया कि पैसा अगले हफ्ते मिल जायेगा, मैं खुद तो दे कहाँ से सकती हूँ। तब ननकू दूसरे द्वारे पहुँचा। उस आदमी ने भी कसम दिलाकर कहा कि इस वक्त पास पैसा है नही, नही तो मैं मुकरने वाला था ? ये पाँच आने है, चाहो तो ले जाओ। हालत यह देख ननकू ने कोशिश की कि कुछ तो नकद दे दूं, बाकी उधार हो जाय, और ऐसे एक लोई ले ही चलूं। लेकिन दूकानदारो मे से किसी ने भी उसका भरोसा न किया। कहा कि पैसा ले आओ, फिर मन पसन्द कोई छाँट ले जाना। तुम जानो वसूली मे भाई बडी मेहनत लगती है।

नतीजा यह कि बस्ती मे ले-देकर जो ननकू ने कमाई की सो कुल जमा पांच आने। हाँ, एक आदमी ने अपना जोडा भी दिया था कि इसके तले मोटा चमडा लगाकर ठीक कर देना।

ननकू का मन इस बात पर ढीला हो आया। पाँच आने जो मिले, उन्हे दारू मे फेक, बिना कुछ लिये दिये, खाली हाथ वह घर वापिस चल दिया। सवेरे आते उसे सर्दी लगी थी, लेकिन अब दारू चढाने के बाद बे-कपडे भी उसे गरमी मालूम होती थी। हाथ की लकडी को धरती पर पटकता हुआ, दूसरे हाथ मे जूता जोडा लटकाये, अपने आप से बात करता हुआ, ननकू चला जा रहा था।

कबल नही है न लोई तो भी खासी गरमाई आ गई। एक घूंट क्या लिया कि नस-नस की ठड ही भाग गई अजी, क्या जरूरत है लोई की। मजे मे चल रहा है। फिक्र काहे की। मै तो ऐसा ही आदमी हूँ। फिक्र नही पालता। परवाह क्या, बिना लोई के मजे मे कट जायगी। क्या है, अह छोडो भी। पर बीबी झीकेगी, झिड़केगी‥‥ जरूर झिडकेगी। और सच तो है। यह बेशक शर्म की बात है।

आदमी दिन भर काम करे और उसे मजदूरी न मिले। ठहरो, अगर तुम पैसा नहीं देने तो क्या समझा है। मैं चमडी उधेड दूँगा। देख लेना जो न उधेड़ूँ। मेरा नाम ननकू है। क्या ? देने के नाम पाँच आने! पाँच आने का भला बन क्या सकता है ? सिवा इसके कि चुल्लू ताडी पी ली जाय। आये कहने, तगी है। होगी तगी। लेकिन हम ? हमारी तगी को भी कोई पूछता है ? तुम्हारे पास मकान है, बगिया है, सब है। मेरे पास जो पहने खडा हूँ, वही है। तुम्हारे पास अपनी खेती का अनाज है, मुझे एक-एक दाने का पैसा देना होता है। कुछ करूँ, नाज तो चाहिए ही। और खाली रोटी के लिए काम मे पसीना बहाता हूँ तो भी नही जुडता। तीन रुपये की मजदूरी हफ्ते मे बनती होगी। हफ्ते का अन्त आया कि चून खत्म। वह तो जैसे-तैसे रुपया धेली ऊपर बना लेता हूँ तो काम चलता है। नही तो बम राम का नाम। सुनते हो जी, जो हमारा लेना आता है अभी रख दो। हील-हुज्जत न चलेगी।'

वह कहता-सुनता वह सडक के मोड तक आ गया था। वहाँ था एक शिवजी का मन्दिर। देखना क्या है कि शिवालय के पिछवाडे धौला सा कुछ दीखता है। दिन का चाँदना धीमा हो रहा था, उसमे ननकू आँख गडा कर ,देखने लगा कि धौला-धौला क्या है ? पर उसे पहचान कुछ नहीं आया। सोचा कि जाते वक्त तो यहाँ कोई सफेद पत्थर था नहीं। क्या फिर बैल है ? लेकिन बैल भी नहीं है। सिर तो आदमी का-सा मालूम होता है। पर इतना सफेद! और आदमी का इस वक्त यहाँ काम क्या है ?

पास आया तो साफ-साफ दिखाई देने लगा। अचम्भा देखो कि वह सचमुच आदमी था। जीता हो, चाहे मुर्दा, उघाडे बदन मन्दिर की दीवार से सटा बैठा था। हलन-चलन का काम नही। ननकू को डर लग आया। सोचा कि किसी ने उसे मार कर कपड़े खोस लिए है और यहाँ छोड़ दिया है। मैंने कुछ छेडा तो मुसीबत मे पड़ना होगा।

सो वह ननकू देखी, अनदेखी कर आगे बढ लिया। वह उधर से फेर देकर निकला जिससे आदमी फिर उसे दिखायी ही नही दिया। कुछ बढ गया, तब उसने पीछे मुडकर देखा। देखता क्या है कि वह आदमी दीवार से लगा हुआ, अब झुका बैठा है, बल्कि चल-फिर रहा है। कही वह मेरी तरफ तो नही देख रहा है ?

उसको पहले से भी ज्यादा भय हुआ। सोचा कि मैं वापिस उसके पास चलूँ या कि अपनी राह बढता जाऊँ। पास गया तो जाने क्या मामला निकले। उसमे जोखिम भी हो सकती है। जाने कौन बला है। यहाँ सुनसान मे किसी नेक इरादे से तो वह आया न होगा। पास जाने पर हो सकता है कि कूदकर मेरा गला धर दबाये और भागने का भी रास्ता न रहे। यह भी नही, तो ऐसे आदमी का मैं करूँगा क्या। मेरे सिर वह बोझ ही हो जायगा, और क्या! नङ्ग-धडँग, भला उसमे मेरा होगा क्या ? अपने बदन के कपड़े तो उतार कर मैं उसे दे नही सकता। सो अपने राम मैं चला ही चलूँ।

यह सोचकर ननकू बढा ही चला। मन्दिर पीछे छूट गया कि तभी उसके भीतर दूसरा ख्याल आया। बीच सडक रुक कर उसने अपने से कहा कि ननकू तू यह क्या कर रहा है? क्या जाने वह आदमी भूखा मर रहा हो, और तू डर के मारे पास से कतरा निकला जा रहा है! क्या तू भी मालदार हो गया कि चोर डाकू का डर लगे ? ननकू तेरे लिए यह शर्म की बात है।

[२]

पास पहुँच कर जो देखा तो जवान आदमी है, तन्दुरुस्त और शरीर पर कोई चोट-रोग का निशान नही है। पर सर्दी के मारे ठिठुरा जा रहा है और सहमा हुआ है। वहाँ दीवार से कमर टिकाये चुपचाप बैठा है, ननकू की तरफ आँख उठा कर नही देखता। जैसे कि उसमे इतना दम ही नही है। ननकू और पास आ गया तब उस आदमी को चेत होता मालूम हुआ। सिर मोडकर उसने आँखे खोली और ननकू की तरफ देखा। उस एक नजर पर ननकू तो निछावर हो गया। वह

तो जैसे निहाल हो आया और उसके मन को यह आदमी एकदम भा गया। उसने हाथ की जूता-जोडी जमीन पर रख दी। दुपट्टा उतार कर वही रख दिया और मिर्जई भी उतारने लगा। बोला—

'सुनो दोस्त, कहने-सुनने की बात नही है। अब चटपट ये कपड़े पहन डालो।'

कहा और बाँह से पकड कर उसने अजनवी को उठाया। खड़े होने पर ननकू ने देखा कि उसका शरीर साफ और स्वस्थ है। हाथ-पैर का बनाव सुघड और चेहरा भला, भोला और सुन्दर है। ननकू ने अपनी मिर्जई उसके कधे पर डाल दी। लेकिन उस भले आदमी को आस्तीन मे बाँह करना न आया। खैर, ननकू ने खुद मिर्जई पहना दी, दुपट्टा लपेट दिया और जूता पहना दिया।

ननकू ने सिर की टोपी भी उतार उसको दे देनी चाही। लेकिन इसमे उसके अपने सिर को बडी ठडी लगती। उसने सोचा कि ऐंह, मेरा सिर गजा है और उसके बडे-बडे घुंघराले बाल है। इससे टोपी अपने सिर ही रहने दो। बोला—'अच्छा दोस्त, अब जरा चलो-फिरो। ऐसे गरमी आयेगी। बाकी फिर देखेगे। चल सकते हो न ?'

अजनबी खडा हो गया और सदय भाव से ननकू को देखने लगा। लेकिन मुँह खोल कर शब्द वह कुछ भी नही कह सका।

ननकू ने कहा,'भाई बोलते क्यो नही हो ? यहाँ सर्दी बहुत है। ठिठुर जाओगे। चलो, घर चले। यह लो लकडी। चला न जाये तो उसे टेकते चलो। चलो, बढाओ कदम।'

आदमी चल पडा। वह ऐसे चला जैसे कदम तिरते हो। उसके किसी से पीछे रहने की तो बात न थी।

चलते-चलते ननकू ने पूछा, 'भाई, तुम हो कहाँ के ?'

'मै इस तरफ का नही हू।'

'यही मैं सोचता था। इधर के लोगो को मैं पहचानता हू। पर वहाँ तुम शिवाले के पास कैसे आन पहुँचे ?'

'मालूम नही।'

"किसी ने तुम्हे लूटा ठगा तो नही है ?"

'नही, सब ईश्वर का दड है।'

'सो तो है ही। वह सबका मालिक है। तो भी कुछ खाने और कही सिर टेकने को जगह तो पाने की तदबीर करनी ही होगी न। तुम्हे जाना कहाँ है ?

'मुझे सब जगह समान है।'

ननकू को अचरज हुआ। आदमी वह दुष्ट नही मालूम होता था। कैसा मीठा बोलता था। लेकिन उसका अता पता जो न था। तो भी ननकू ने सोचा कि कौन जानता है बेचारे के साथ क्या अनहोनी हुई हो।

यह सोच कर उस अजनबी आदमी से उसने कहा—'अच्छा ऐसा है तो मेरे साथ घर चलो। वहाँ थोडा आराम करना, फिर देखा जायगा।'

यह कह कर ननकू घर की तरफ चल दिया। नया आदमी साथ-साथ था। हवा तेज हो चली थी ननकू को अकेले कुरतेमे सर्दी लग आई नशा छूट रहा था और अब ठड ज्यादा सताती थी। तो भी सीटी बजाता अपने घर चला जाता था। पर रह-रह कर उसे सोच होता था कि घर मे कैसे बीतेगी। चला था कम्बल लेने और आ किस हाल मे रहा हूँ ? खाली हाथ तो हू ही, तिस पर बदन की मिरजई बदन पर नही है। और भी बढकर यह कि साथ एक आदमी लिये हुए जिसका अता न पता और जिसके पास कपडा न लत्ता। मन्नो भी क्या कहेगी ? निश्चय ही बहुत खुश होने वाली वह है नही।

यह सोच-सोच कर उसका मन बैठ जाता था। पर जब वह इस अजनबी आदमी की तरफ देखता और उसकी हालत को और भीगी कृतज्ञ निगाह को याद करता तो उसे खुशी और होसला भी होता था।

[३]

उस दिन सवेरे ही ननकू की बीबी ने सब काम पूरा कर लिया।

पानी ले आयी, बच्चों को खिला-पिला दिया, खुद खा-पीकर निबट चुकी और चौका बासन कर डाला। फिर बैठी सोचने लगी कि शाम को खाना बनाऊँ कि नही। अभी रोटी तो काफी बची है। अगर कही ननकू ने बस्ती मे ही कुछ खा-पी लिया तो फिर यहाँ क्या खायेगें। फिर तो कल के लिये भी यही रोटी चल जायेगी।

यह सोचकर उसने बची रोटियाँ हाथो पर लेकर जैसे तोला। बोली, 'बस, अब आज और नही बनाऊँगी। घर मे आटा भी बहुत नही बचा है। तो भी यह इतवार तो इसमे निकालना ही है।'

सो मानवती ने रोटी अलग ढक रख दी और पति का कुरता ठीक करने बैठ गई। काम करती जाती थी और सोचती जाती थी—'जाड़ो के लिये वह लोई लेने गये है। पर कही दूकानदार उन्हे ठग न ले। वह सीधे बहुत है। छल कपट जानते नही। एक बच्चा भी उन्हे बेवकूफ बना सकता है। दस रुपये पास है—कोई कम रकम नही है। लोई और दोहर उतने मे दोनो हो सकते है। बिना कपडे जाडे मे चलेगा कैसे ? लोई हो गई तो ठीक हो जायगा। नही तो बाहर कही निकलने के लायक भी नही पर देखो जी उनको भी जो था सब कपडा अपने बदन पर वही लेते गये। कुछ नही छोड गये। मेरी मिर्जई भी नही छोड गये, अब आयेगे ? ऐसे बहुत सबेरे तो नही गये, पर वक्त है अब उन्हे आना ही चाहिये। ओ राम, कही बहक न गये हो। ताडी गध ·· ··· ·· '

यह सोच रही थी कि बाहर दरवाजे पर कदमो की आहट हुई। सुई को वही कपडे मे उडस मानवती उठकर दरवाजे की तरफ लपकी। देखती क्या है कि एक छोड दो आदमी हैं। एक तो ननकू है, दूसरा उसके साथ कोई और भी है उसके सिर पर टोपी है नही और ऊँचे जूते चढाये हुए है। मानवतीने फौरन ताड लिया। ताडी की गध आती थी। सोचा कि हजरत ने पी दीखती है। और जब देखा कि बदन पर मिरजई नही है, दुपट्टा नदारद है, लोई-वोई भी कोई साथ नही दीखती है, और आकर सिमटे से चुप खडे है, तो उसका

दिल निराशा से टूट आया। उसने सोचा कि मालूम होता है कि रुपया सब दारू पर उडा डाला है और कही के उठाईगीर इस आदमी के साथ मौज-चैन उडाई गई है और उसे ले आये है मेरे सिर पटकने को!

द्वार की राह छोड उसने दोनो को अन्दर जाने दिया। पीछे खुद आई। देखा कि दूसरा आदमी नाजुक बदन का है, और मेरी मिर्जई उसके बदन पर है। नीचे उसके कुरता न कमीज, न सिर पर टोपी। आकर सींक सा सीधा खडा हो गया है, न हिलता है, न डुलता है न ऊपर देखता है, मानवती ने सोचा कि जरूर कोई बदकार है। नही तो ऐसे डरता क्यो ?

वह गुस्से मे एक तरफ खडी हो गई, कि देखूँ ये क्या करते हैं।

ननकू ने टोपी उतारी और खटिया पर ऐसे आ बैठा जैसे कोई खास बात नही हुई हो, सब ठीक ही ठीक हो।

बोला—'मन्नो, खाना हो तो लाओ कुछ दो न!'

मानवती कुछ बुदबुदा कर रह गई। हिली-डुली तक नहीं। एक को देखा फिर दूसरे को देखा। फिर माथा पकड चुप रह गई। ननकू ने देखा कि पत्नी बिगडी हुई है। उसने इस बात को दरगुजर करना चाहा, जैसे कुछ न हुआ हो। अपने साथी को बाँह से पकड कर कहा—'अरे' बैठो भी। अब कुछ खाओगे नही ?'

सो वह अजनबी आदमा भी पास ही खाट पर बैठ रहा।

ननकू ने कहा—'कुछ हमारे लिए पका रक्खा है ? न हो तो वैसा कहो।' मानवती का गुस्सा उबल पडा। बोली, 'रक्खा है पका कर, पर तुम्हारे लिए नही। मालूम होता है अकल तो दारू के साथ पी आये हो। लेने गये थे लोई-कपड़े, आये तो पास की मिर्जई भी गायब। फिर साथ मे लिए आ रहे है जाने किस उठाईगीर को, पास जिसके तन पर ढकने को चिथडा नही।

'बस, बस करो, मानवती। बेमतलब ज्यादा जबान नही

चलाया करते। भला, पूछ तो लिया होता कि ये कैसे आदमी हैं, कौन है—'

'तो लो, पहले पूछती हूँ कि बताओ तुमने रुपयो का क्या किया है ?'

ननकू ने जेब से पाँच का नोट निकाला और तह खोल कर सामने कर दिया।

'यह पाँच का नोट है। बशी ने कुछ दिया नही। जल्दी देने को कहता है।'

'मानवती का गुस्सा कम नही हुआ ! देखो न, लोई तो लाना कैसा, खुद अपनी मिर्जई जो तन पर रहने दी हो। वह भी इस फकीर को दे डाली। फिर उसी को साथ लेते आये है घर !'

उसने नोट को ननकू के हाथ से झपट लिया और सँभालकर उसे अन्दर रखने चली गई। बोली—'मेरे पास नही है खाना देने को। दुनिया के तमाम नगे बदकारो को खिलाने को कोई मैं ही नही रह गई हूँ।'

'सुनो मन्नो, जरा तो चुप रहो। कुछ दूसरे आदमी की भी सुनो।'

'बडी सुनूँ। नशेबाज से मिल गई बडी अकल। जभी तो मैं तुम्हे ब्याहना नही चाहती थी। शराबी बदखोर ! मेरी माँ ने जो दिया, सब पी डाला। अब लोई लेने गये, उसे भी पी कर खत्म किया।'

ननकू ने बहुतेरा कहना चाहा कि कुल पाँच आने पैसे मैंने खर्चे हैं, और कि कैसे और कहाँ यह आदमी मिला और क्यो साथ है। लेकिन मानवती ने न एक कहने दी, न एक सुनी। वह एक के बदले दस कहती थी। और दसियो बरस पुरानी जाने कहाँ-कहाँ की गढ़ी बाते उखाड कर बीच मे ले आती थी।

बकते-झीकते उसने तेजी मे आकर ननकू को बाँह से पकड खीचा।

कहा कि लाओ, मेरी मिर्जई दो। यह अकेली तो मेरे पास है, उसे भी छीन ले गये, हाँ—तो, और दूसरे को दे डाला। अभी मै उतरवा लूंगी। समझते हो ?—अभी, अभी। सत्यानासी कही के !

ननकू ने कहा—'ले, लो।'

और उसने जोर से झिटककर अपना कुर्ता बदन से खीच उतारा।

मानवती चिल्लाई—'इसका क्या करूँगी मैं, नाश जाय !'

लेकिन तैश मे ननकू ने कुर्ता तन से उतार ही डाला और अलग खीच कर उसे मानवती के सिर पर दे मारा।

मानवती कुर्ते को लेकर झीकने लगी। वह सामने से चली जाना चाहती थी, पर नही भी चाहती थी। असल मे किसी तरह गुस्सा निकाल कर वह खत्म कर देना चाहती थी। गुस्से मे उसे तसल्ली नही थी और यह भी उसे मालूम हो रहा था कि इसमे उस बेचारे दूसरे आदमी का कोई कसूर तो है नही।

[४]

आखिर रुककर बोली—'अगर वह भला मानस होता तो उघाडे बदन न होता। उसकी देह पर कुर्ता तक तो नही है और ठीक-ठिकाना होता तो तुम्ही न बतला देते कि कहाँ और कैसे मिला ?'

ननकू—'यही तो बतला रहा हूँ। सडक का पहला मोड पडता है कि नही, वही शिवाले पर मै पहुचा कि यह आदमी वहाँ बैठा था। बे-कपडे, मारे जाडे के ठिठुरा जा रहा था। भला यह मौसम है बदन उघाडे बैठने का ? यह तो ईश्वर की मर्जी कि मै वहाँ पहुँच गया नही तो यह बचता ही नही। तब मैं क्या करता ? हमे किसी के मन का या करनी का क्या पता है। न जाने क्या किसी के साथ बीती हो। सो मैने उसे ढारस दिया, कपडा दिया और उसे साथ ले आया। इस पर गुस्सा मत करो, मानो गुस्सा पाप है। आखिर एक दिन हम सब को काल के गाल मे चले जाना है कि नही ?'

मानवती के मुँह तक फिर क्रोध भरे बचन आये लेकिन' स नये

आदमी को देखकर चुप रह गई। वह खटिया की पाटी पर बैठा था। हिलना न डुलना, बॉहो मे घुटने पकडे, सिर छाती पर डाले, आँखे बन्द ऐसा बैठा कि शिथिल। माथे पर भौहो क बीच जैसे उसके डर की सिकुडन थी। सो देख मानवती चुप रह गई।

ननकू ने कहा—'बताओ, तुम्हे बिल्कुल ईश्वर का ख्याल नही।'

मानवती ने ये वचन सुने। फिर नये आदमी को देखा तो यकायक उसका जी उसकी तरफ से कोमल हो आया। वह अन्दर गई और चौके मे से खाने को ले आई। वही खाट पर थाली रख दी और पानी के गिलास भी रख दिये।

बोली—'लो, भूख हो तो यह लो। अब खाते क्यो नही ?'

ननकू ने अपने साथी को कहा— सुनते हो, भाई, लो शुरू करो।'

रोटी तोडी और मट्ठे के साथ मिलाकर दोनो जने खाने लगे। मानो ऑगन मे बोरी डाल, अलग बैठ गई और हथेली पर सिर रक्खे वह इस अजनबी को देखने लगी। देखते-देखते इस आदमी के लिए उसके मन मे करुणा भर आई। जैसे उस पर प्यार हो आने लगा। इसी समय उस आदमी का चेहरा खिल आया। भौहे पहले की तरह सिकुडी न रही, आँखे उठा कर उसने मानो की तरफ देखा और मुस्करा दिया।

मानो का जी हल्का हो गया। खाने के बरतन उसने हटा दिये और फिर उस नये आदमी से बात-चीत करने लगी।

पूछा—'कहॉ के रहने वाले हो ?'

'यहॉ का नही हूँ।'

'फिर इस राह कैसे आ लगे ?'

'कुछ कह नही सकता।'

'ऐसा हाल तुम्हारा क्यो है ? किसी ने लूटा-लाटा तो नही ?'

'जी, सब दण्ड परमात्मा का है।'

'और वहाँ तुम नगे पडे थे ?'

'जो कपडे बिना ठिठुरा जाता था। उन्होंने मुझे देखा और मदद की। अपने कपडे उतार कर मुझे दे दिये यहाँ घर मे ले आये और आपने मुझे यहाँ भोजन दिया और मुझ पर कृपा की। ईश्वर आपकी बढवारी करेगा।'

मानवती उठी और जो ननकू का कुर्ता सँभाल रही थी, लाकर इस आदमी को दे दिया। साथ कही से धोती-जोडा भी निकाल लायी।

बोली, 'यह लो, भाई। पहन लो। अच्छा सोओगे कहाँ? खैर, जगह पडी है, पुआल है ही। सो, जी चाहे जहाँ सोओ।'

उसने कपडे पहन लिए और जाकर भीतर कोठरी मे पुआल पर लेट गया। मानो ने फिर घर की चीज-बस्त सँभाली, और दीया बुझा वह भी खटिया पर पहुँच गई।

उसी चीथडा रजाई को पति-पत्नी दोनो जने ऊपर ले लेट रहे। लेकिन मानवती को नीद न आई। वह आदमी उसके मन से बाहर ही नही होता था। सोचती थी कि घर मे सब रोटी खतम हो गयी है,कल को चून भी नही बचा है और ले दे के जो कपडे बचे थे सो उसको दे देने पडे है इस पर थोडा उसका मन मन्द होता था। लेकिन जब उस आदमी की मुस्कराहट की याद आती थी, तो मन खुशी से खिलने को होता था।

सो देर तक मानवती जागी रही। देखा कि ननकू भी जाग रहा है। रजाई उसने उसकी तरफ करके कहा—

'ननकू!'

'हाँ!'

'रोटी तो सब चुक गयी। चून दो-एक मुट्ठी बचा होगा। अब कैसे होगा? झुनिया मौसी से आटा उधार लेना होगा, और क्या?'

'अरे जो जिलाता है वह पेट भरने को भी देता है।'

स्त्री फिर कुछ देर सोचती पडी रही। अनन्तर बोली–'आदमी वह भला मालूम होता है। फिर बताता क्यो नही कि है कौन ?'

'कोई बात होगी।'

'ननकू !'

'हाँ।'

'क्यो जी, हम देते है, तो फिर हमे कोई कुछ क्यो नही देता ?'

ननकू को इसका कोई जवाब नही जुडा। इससे बोला–'उँह, छोडो भी, सोओ सोओ।' और करवट ले वह सो चला।

सवेरे ननकू उठा। बच्चे अभी सोये थे। स्त्री कही पडोस मे आटे का बन्दोबस्त करने गयी थी। साथ का आदमी अकेला ओसारे मे उन्ही कपडो मे बैठा आसमान को देख रहा था। चेहरा उसका कल से खुला हुआ और खुश था।

ननकू ने कहा—'सुनो दोस्त, पेट को खाना चाहिए और तन को कपडा। इसके लिए उपाय है, मेहनत। सो काम से रोजी चला करती है। बोलो, कुछ काम-धाम जानते हो ?'

'जानता तो मै कुछ नही हूँ।'

ननकू को यह सुनकर अचरज हुआ। लेकिन बोला—'कोई सीखने वाला हो तो सब सीख सकता है।'

'अच्छी बात है। सब काम करने है, मैं भी करूँगा।'

'तुम्हारा नाम क्या है ?'

'नाम ! मङ्गल।'

'अच्छा मङ्गल, तुम अपने बाबत कुछ नही बताते हो तो जाने दो। तुम जानो तुम्हारा काम ! लेकिन गुजारे के लिए उद्यम तो कुछ करना होगा न। जैसे मैं बताऊँ करते चलो तो तुम्हारे रहने और खाने-पीने के बन्दोबस्त मे कोई अडचन नही होगी।'

'परमात्मा की दया हुई तो मै काम सीखता जाऊँगा भगवान आपका भला करे। मुझे बताते जाइये।'

ननकू ने सूत लिया और पैर के अगूंठे से बाँधा और उसे बँटने लगा। बोला—

'देखते हो न ? कुछ भी तो मुश्किल नही है।'

मङ्गल गौर से देखता रहा। फिर उसी तरह अँगूठे मे सूत बाँध यह भी बटने लगा। न कुछ देर मे यह उसे आ गया और सूत उसने अच्छा बट लिया।

फिर ननकू ने बताया कि कैसे मोम से इसे चिकना करते है। यह भी मगल सीख गया, फिर बताया कि कैसे फन्दा डालते है, कैसे सीते है। यह भी मगल आसानी से सीखता चला गया।

ननकू जो बताता, मगल झट समझ जाता। तीन दिन के बाद तो मगल ऐसा काम करने लगा मानो जिन्दगी भर यही करता रहा हो। लगन से सब दिन यही किया करता और थोडा खाता। काम के बाद अपने चुपचाप आसमान की तरफ देखने लगता। वह शायद ही कही इधर-उधर जाता था। बस काम जितनी बात करता था। न हँसी न मजाक, न कुछ। पहले दिन जब मानवती ने उसे खाने को दिया था, उस वक्त को छोड फिर वैसी मुस्कराहट भी उसके चेहरे पर नहीं दीखी।

[६]

दिन पर दिन चलते गये, इस तरह साल निकल गया। मंगल ननकू के साथ रहता और काम करता। उसका नाम सरनाम हो चला था। लोगो मे हो गया था कि ननकू का आदमी यह मगल जैसे जूते सीता है, वैसे आस-पास क्या दूर-दूर तक भी कोई नही सी सकता। काम ऐसा खूबसूरत और मजबूत और सुबुक कि क्या वात। सो ननकू के यहाँ दूर के लोग जूते बनवाने आने लगे। इससे ननकू की हालत सुधर आई और खुशहाली बढने लगी।

एक बार जाडों के दिन थे। ननकू और मगल क़ाम करने बैठे थे। तभी दो घोड़ो की बग्गी टनन-टनन करती हुई उनके गाँव मे

आई उन्होंने झाँककर देखा। देखते क्या है कि बग्घी उनके द्वार पर आकर रुक गयी है और वर्दीदार कोचवान ने गाडी के रुकते ही चट नीचे कूदकर दरवाजा खोल दिया है। दरवाजे मे से कीमती कपड़े पहने कोई रईस आदमी उतरे और उसी घर की तरफ बढे। मानवती ने झट-पट आकर अपने घर के दरवाजे चौपट खोल दिये। सज्जन को अन्दर आने के लिए दरवाजे मे झुकना पडा। फिर आकर जो खडे हुए तो सर उनका छत को छूता-सा मालूम होता था और जैसे वह सारी जगह उनसे भर गयी थी।

ननकू ने उठकर सलाम किया। वह अचम्भे मे इन्हे निहार रहा था। इनके जैसा आदमी उसने नसीब मे नही देखा था वह खुद दुबला था। मगल की देह भी इकहरी थी और मानवती के तो हाड निकल रहे थे। पर वह सज्जन जैसे दूसरी दुनिया के थे। चेहरा सुर्ख, दोहरी देह, गर्दन ऐसी कि क्या पूछिए। पूरे देव मालूम होते थे।

सज्जन ने ऊपर का चोगा उतारा नही कि उसे पास खडे नौकर ने हाथो हाथ सँभाल लिया। वह बोले—'तुम मे कौन है जिसका जूता मशहूर है ?'

ननकू ने आगे बढकर और झुककर कहा, 'जी, हाजिर हूँ।'

तब सज्जन ने पुकारा, कहा—'ऐ छोकरे, वह चमडा इधर लाओ।'

नौकर चमडे का बण्डल लेकर दौडा आया।'

'खोलो।'

नौकर ने खोला। सज्जन ने छडी से चमडे को दिखाते हुए कहा—देखते हो, यह चमडा।'

'जी।'

'जी नही, जानते हो यह कैसा चमडा है ?'

ननकू ने हाथ से टटोल कर चमड़े को देखा। बोला—'अच्छा चमड़ा है।'

'अच्छा है !' बेवकूफ, ऐसा कभी तुमने अपने जन्म मे देखा भी है ? असल जर्मनी का है और अकेला यह टुकडा बीस रुपये का है।

ननकू सहम कर बोला—'जी, ऐसा चमडा हमे कहाँ देखने को मिलता है, हुजूर !'

हाँ, सो ही तो। अच्छा इसके जूते तैयार कर सकोगे ?'

'जी हुजूर, कर सकूँगा।'

वह सज्जन जोर से बोला—'कह दिया, सकूँगा ! अरे, कर भी सकोगे ? याद रखना कौन कह रहा है और क्या चमडा है। समझे ? ऐसा जूता बनाना होगा कि साल भर पूरा चले। न उधडे, न बिगडे। कर सकते हो, तो लो चमडा और शुरू करो। नही कर सको तो सीधे कहो। समझते हो न ? अगर साल भर के अन्दर जूते मे उधडन आ गई या उनकी शकल बिगड चली तो तुम हो और जेलखाना ! क्या समझे ? और जो वह फटे नही और शकल भी कायम रही, तो काम के तुम्हे दस रुपये मिलेगे। सुना ?'

ननकू तो रोब के मारे डर गया था। उससे जवाब नही दिया गया। उसने मगल को देखा और धीमे से कोहनी मार कर मानो उसने पूछा—क्या कहते हो ? यह काम ले लूँ।'

मगल ने सिर हिला दिया, जैसे कहा कि हाँ, ले लो।

मगल की कही मानकर ननकू ने काम ले लिया। वादा किया कि जूते तैयार कर दूँगा कि साल मे न एक उनकी सीवन जायगी, न शकल मे फरक आयगा।

तब नौकर को बुलाकर सज्जन ने कहा—'ए, हमारे पैर पर यह जूता उतारो तो।' यह कह कर बाँई टाँग उन्होंने आगे बढा दी। फिर ननकू से कहा—देखते क्या हो ? लो अपना नाप लो।'

ननकू ने कागज लिया। उसे धरती पर हाथ से बार-बार चपटा किया, झुका, अपने कुर्ते से अच्छी तरह हाथ पोछे कि सज्जन के मोजे मैले न हो जाये और नाप लेना शुरू किया। तली नापी, टखना नापा

और पिंडली का नाप देखने लगा। पर कागज उसका छोटा निकला। पिंडली की मोटाई इतनी थी कि कागज ओछा रहा।

'देखना, नाप कही इस जगह सख्त न हो जाय !'

ननकू ने उसमे फिर दूसरा कागज जोडा। सज्जन मोजे मे से अपना अँगूठा, चला रहे थे और वहाँ खडे लीको को देख रहे थे। इसी दरमियान उनकी नजर मगल पर पडी।

'ऐ, यह कौन है ?'

'हुजूर यह मेरा आदमी है। यही जूते सियेगा।

सज्जन ने मगल से कहा—'यह ! अच्छा' सुनते हो जी तुम, देखो, भूलना नही कि जूते पूरे साल भर चले। नही तो ...'

ननकू ने अचरज से मगल को देखा। देखा कि मगल उस रईस को जैसे देख ही नही रहा है, बल्कि उसके पार न जाने कहाँ देख रहा है। जैसे पार पीछे कुछ सचमुच हो। उधर देखते-देखते मगल एका-एक मुस्करा आया और उसके चेहरे पर एक चमक झलक गई।

उस सज्जन ने गरज कर कहा—'दाँत क्या निकालता है ? बेवकूफ ? खयाल करना, वक्त तक जूते तैयार हो जाये। सुना न ?'

मगल ने कहा—'जी, समय पर तैयार लीजिए।' 'हाँ—तैयार।'

यह कहा, जूते पहने, चोगा चढाया और दरवाजे की तरफ बढे। लेकिन झुकने की याद न रही और दरवाजे की चौखट खट् से सिर मे लगी।

झुँझला कर उन्होने गाली दी और सिर मलते हुए गाडी मे बैठ चलते बने।

चले गये तो ननकू ने कहा—'क्या खूब, आदमी हो तो ऐसा हो। डील-डौल ऐसी कि देव ! एक बार घन पडे तो शायद पता न चले, ऐसी देह ! देखो न, सिर लगा तो चौखट टूटते बच गई। पर सिर का कुछ न बिगडा।'

मानवती बोली—'जो खायेगा-पीयेगा वह मजबूत न होगा तो क्या तुम होगे। ऐसी शिला को तो मौत भी छूते बचे ?'

[७]

उनके चले जाने पर ननकू मगल से बोला—'दोस्त, काम ले तो लिया, पर कही मुसीबत मे न फँसना पडे। चमडा कीमती है और आदमी तुम समझो वह मुलायम नही है। सो काम मे कोई नुक्स नही रहना चाहिए। सुना न ? तुम्हारी आँख सही और हाथ सच्चे है। मै तो फूहड हुआ। इससे भाई, इस चमडे की काट-कूट को तुम्ही सम्भालो। मैं इतने तले सिये डालता हूँ।'

मगल ने चमडा ले लिया। उसे बिछाया, मोडा और रापी लेकर काटना शुरू कर दिया।

मानवती आकर देखने लगी। देख रही थी कि उसे अचरज हुआ। उसने बूट बनते देखे थे, लेकिन मगल बूट के ढग पर चमडे को नही काट रहा था, और ही तरीके पर काटने लगा था।

उसने रोककर कहना भी चाहा, लेकिन फिर सोचा कि मैं ज्यादा तो जानती नही, शायद कोई खास बूट इसी तरह से बनते हो। और मगल खुद होशियार है, सो मुझे दखल नही देना चाहिए।

चमडा काट चुका तो मगल ने सीना शुरू किया। लेकिन दोहरी सिलाई नही की, जैसे कि बूट सिये जाते है। बल्कि इकहरी सिलाई शुरू की जैसे कि सुबुक काम के या बचकाने स्लीपर सिये जाते है।

ननकू ने यह देखा तो उसके मनमे बडा पछतावा हुआ। सोचा कि मगल साल भर मेरे साथ रहा है, कभी उसने गलती नही की। अब यह उसको हो क्या गया है ? वह ऊँचे पूरे बूट को कह गये थे और मगल ने इकहरी तली के सुबुक स्लीपर बना डाले है। ऐसे सारा चमडा खराब हो गया। अब उनको मैं क्या जबाव दूँगा। ऐसा दूसरा चमडा कहाँ से लाकर दूँगा।

बोला—'यह कर क्या रहे हो, मगल ! तुमने तो सारा नाश

करके रख दिया। उन्होंने ऊँचे-ऊँचे पूरे बूट के लिए कहा था और यह तुमने क्या बनाकर रख दिया है।'

ऐसा सख्त-सुस्त सुनाकर चुका होगा कि बाहर से किसी के आने की आहट आई। इतने मे तो अपने द्वार पर ही कुण्डे की खटखटाहट सुनाई देने लगी। देखे तो घोडे पर सवार कोई आया है।

किवाड खुले और उन सज्जन के साथ वाला वही आदमी सामने दिखाई दिया। बोला —'जय रामजी की चौधरी।'

'जय रामजी की भाई', ननकू बोला, 'कैसे आना हुआ ?'

'मालकिन ने जूते की बावत मुझे भेजा है।'

'जूते की बावत ! क्या मतलब ?'

'अब बूट की जरूरत नही है, क्योंकि मालिक तो रहे नही, उन्होंने प्राण छोड़ दिये।'

'क्या-आ ?'

'वह यहाँ से घर तक भी नही पहुँच सके, गाडी मे ही मौत ने ले लिया। घर पहुँच कर हम सब ने तो उन्हे उतारना चाहा तो देखते क्या है कि वह बोरो की तरह फडक रहे है। उनमे जान नही रह गई थी। बदन ऐसा अकड गया था कि जैसे-तैसे गाडी से बाहर उन्हे लिया जा सका। मालकिन ने मुझे यहाँ भेजा है कि जूते वाले से कहना कि बूट जिन्होने बनवाये थे, उन्हे अब उनकी जरूरत नही रही। लेकिन अब उनकी जगह मुलायम इकहरी स्लीपर तैयार कर दे। कहा है, जब तक वे तैयार न हो वही रहना और साथ लेकर आना। सो इस वास्ते मैं आया हूँ।'

इस पर मगल ने बचे-खुचे चमडे को समेटा, स्लीपर लिए, कोनो की तह की, आस्तीन से फिर एक बार पोछ कर उन्हे साफ कर दिया, और दोनो चीजे उस आदमी के हवाले की।

'अच्छा जय राम जी चौधरी कहता हुआ वह आदमी चला गया।

[८]

दूसरा साल निकला, फिर तीसरा। इस तरह ननकू के साथ रहते मगल को छः साल हो गये। वह पहले की तरह था। इधर-उधर कही जाता नही था, जरूरत पर बोलता था। उस सब काल मे वह सिर्फ दो बार मुस्कराया था। एक जबकि मानवती ने उसे खाना दिया था, दूसरे जब वह रईस यहाँ आये थे। ननकू उससे बहुत खुश था और अब ज्यादा सवाल उससे नही पूछता था। उसे ख्याल था तो यही कि मगल पास से कही चला न जाये।

एक दिन सब जने घर मे थे। मानवती खाने की तैयारी कर रही थी, बच्चे खेल रहे थे, ननकू एक तरफ बैठा सी रहा था और मगल एक जोडी की एडी नई कर रहा था।

इतने मे एक लडका भागा आया और मगल की कमर पर आ कूदा। बोला—'चाचा, ओ चाचा, देखो कौन आ रही है। छोटी दो लडकियाँ भी है। यही आ रही मालूम होती है। ओ चाचा ओ, एक लडकी लँगडी चलती है।'

लडके के यह कहने पर मगल ने औजार नीचे रक्खे और सब काम छोड द्वार के बाहर देखने लगा।

ननकू को इस पर अचरज हुआ। मगल कभी भी आँख उठाकर बाहर की तरफ नही देखता था। लेकिन अब तो जाने क्यो एक टक देख रहा था। ननकू ने भी उझक कर बाहर देखा। देखता क्या है कि सचमुच एक स्त्री अच्छे कपडे पहने उसी के घर की तरफ चली आ रही है। हाथ पकडे दो लडकियाँ है। ऊनी, गर्म, सलीके के कपडे पहने है और कन्धो पर दुशाला पडा है। लडकियाँ दोनो एक-सी है। एक को दूसरे से पहचानना मुश्किल है। लेकिन दोनो मे एक का बायाँ पैर खराब है और वह लँगडा कर चलती है।

वह स्त्री उन्ही के ओसारे मे आई। आगे-आगे लडकियाँ थी, पीछे वह। आकर स्त्री ने उन लोगो का अभिवादन किया।

ननकू ने कहा 'आइए, आइए। हमारे लायक क्या काम है ?'

स्त्री बेंच पर बैठ गई। दोनो लडकियाँ भी उसके घुटने से चिमट बैठी। वे जैसे यहाँ इन लोगो के बीच डर गई थीं।

'मै इन दोनो बच्चियो के लिए जूते बनवाना चाहती हूँ। जरा मुलायम होनी चाहिये, गरमियो के लायक।'

'जरूर लीजिए, जरूर। ऐसी बचकानी जोडी हमने बनाई तो नही हैं लेकिन बना देगे। रूँयेदार, सादे या फैन्सी, जैसे कहे। मेरे आदमी इस मगल के हाथ मे हुनर है।'

कहकर ननकू ने मगल को देखा। देखता क्या है कि मगल का तो काम-धाम सब छूट गया है और उसकी निगाह उन लडकियो पर जम गयी है ! ननकू को अचम्भा हुआ। लडकियाँ नन्ही-नन्ही बडी सुन्दर थी। काली आँखे, गुलाबी गाल और अच्छे कपडे भी पहने थी। लेकिन ननकू को समझ न आया कि यह मगल उन्हे ऐसे क्यो देख रहा है—मानो पहले से जानता हो। वह उलझन मे पड गया, पर महिला से काम की बात भी चलाता जाता था। कीमत पट गई और ननकू पॉव का नाप लेने बढा। स्त्री ने लँगडी लडकी को गोद मे उठा कर कहा—'इस लडकी के ही दो नाप ले लो। एक लँगड़े पैर के लिए और तीन दूसरे पैर के जूते बना देना। दोनो के एक पाँव है। जुडवाँ बहने जो ठहरी।

ननकू ने नाप लिया और बोला—'जी ! ऐसा हो कैसे गया ? कैसो सयानी सुन्दरी लड़की है। क्या जन्म से पॉव ऐसा है।'

'नही, नही, उसकी मॉ से ही यह टॉग कुचल गई थी।'

इस समय मानवती भी वहॉ आ गई थी। उसे अचरज हुआ कि यह महिला कौन है और यह बच्चियॉ किस की है। पूछने लगी, 'तो क्या तुम इनकी माँ नही ?'

'नही, बीबी, मैं माँ नही हूँ। न नाते मे कुछ लगती हूँ। मैं

इनको पहले जानती भी नहीं थी। लेकिन अब तो दोनो मेरी गोद मे है, मेरी है।'

'तुम्हारी नही हे फिर भी तुम इन्हे इतना लाड-प्यार करती हो!'

'प्यार नही तो और क्या करूँ? दोनो को अपना दूध पिलाकर मैने पाला है। मेरा अपना भी एक बालक था। ईश्वर ने उसे उठा लिया। पर उससे मुझे इतना प्यार नही था जितना इन नन्हियों का मोह मुझे हो गया है।'

'तो फिर ये किसके बालक है?

[६]

इस तरह एक बार शुरू होना था कि स्त्री पूरी ही कहानी कह चली—

'कोई छ साल होते है कि इनके माँ-बाप मर गये। दोनो तीन दिन आगे पीछे इस धरती से उठ गये। मगलवार को पिता की अर्थी उठी तो वृहस्पति को माँ ने ससार को तज दिया। बाप के मरने के बाद इन बेचारे अनाथो ने जन्म लिया। माँ का सहारा तो इनको दिन का भी नही मिला। हम उसी गाँव मे रहते थे। हमारे यहाँ खेती होती थी। दोनो हम पडोसी थे। हमारे घर के घेरे तो मिले हुए थे। बाप इनका अकेला सा आदमी था और पेड काटने का काम करता था। जगल मे पेड काटे जा रहे थे कि एक के नीचे वह आ गया। पेड ठीक उसके ऊपर आकर गिरा। और वह पिच गया, आत बाहर आ गई फिर दम निकलना कै घडी की बात थी। घर तक ला न पाये कि जान जा चुकी थी। उसके तीसरे दिन माँ ने इस जुगल-जोड़ी को जन्म दिया। अब अकेली थी और गरीबनी थी। जवान या बुड्ढा, कोई उसका न था। बेचारी अकेली ने इनको जन्मा और अकेली जाकर मौत से मिल गई।

'अगले सबेरे मैं उसे देखने गई। झोपडी मे घुसती हूँ और देखती हू कि उस बेचारी की देह तो ठण्डी पडी थी और अकड गई

थी। मरते समय दर्द मे करवट ली होगी कि उसमे इस बच्ची की टॉग जाती रही। फिर तो गॉव के लोग आ गये। देह को उठा अर्थी पर रक्खा और क्रिया-कर्म किया। दोनो बेचारे वे नेक आदमी थे। बच्चे उसके बाद अकेले रह गये। तब उनका क्या होता? गॉव मे मैं ही थी कि जिसकी गोद मे दूध पीता बच्चा था। कोई डेढ महीने का मेरा पहलौता मेरी छाती से था। इससे उन दोनो को भी मैने ही ले लिया। गाँव के लोगो ने बहुतेरा सोचा कि क्या हो। आखिर मुझे कहा कि 'भगवती, अभी तो तुम्ही इन्हे पाल सकती हो। पीछे देखेगे कि क्या किया जावे।' सो मैं छाती का दूध पिलाकर एक बच्ची को पालने लगी। दूसरे को पहले-पहल मैने दूध नही दिया। सोचती थी कि वह क्या बचेगी? लेकिन फिर मैंने खुद ही ख्याल किया कि वह बेचारी बेकसूर क्यो दुःख पावे और भूखी रहे। सो मुझे दया आई और मैं उसे दूध पिलाने लगी। इस भॉति मे तीनो को, अपने बालक और इन दोनो को भी, अपनी छाती के दूध से पालने लगी। मेरी भरी उमर थी और मैं तन्दुरुस्त थी और खाना अच्छा खाती थी। सो पर-मात्मा ने दूध दिया कि कभी तो वह अपने आप ही गिरने लगता था। मै दो-दो को एक साथ दूध देती। एक को पूरा हो जाता, तो तीसरे को ले लेती। अब परमात्मा की लीला कि ये दोनो बच्चियाँ तो पन-पती गयी, और मेरा अपना बालक दो बरस का हो न पाया कि जाता रहा। उसके बाद मेरे सन्तान नही हुई, लेकिन हम बराबर खुशहाल होते चले गये। अब मेरा आदमी एक किराने के व्यापारीका एजेण्ट है, तनख्वाह खासी है और हम लोग मजे मे है। हमारे अपना कोई बालक नही और ये नन्ही मुझे न मिल जाती तो जीवन सूना ही मुझे मालूम होता। सो इनको प्यार के सिवा भला मैं क्या कर सकती हू। यही मेरी आँखो की रोशनी है और जीवन का धन है।'

यह कह कर स्त्री ने लँगडी लडकी को एक हाथ से गोद मे चिपटा लिया और दूसरे से उसके गाल के आँसू पोछने लगी।

सुनकर मानवती ने साँस भरी। बोली—'सच है, माँ-बाप के बिना जीना हो सकता है, पर ईश्वर के बिना कोई भी नही जी सकता।'

इस तरह वे आपस मे बाते करने लगे। एकाएक उस जगह जैसे बिजली की रोशनी हो गयी हो, ऐसा लगने लगा। सबको बडा आश्चर्य हुआ। देखते है कि ज्योति उधर से फूट रही है, जहाँ मगल बैठा था। सबकी नजर उधर गई। देखते क्या है कि घुटनो पर हाथ रक्खे मगल बैठा ऊपर की ओर देख रहा है और चेहरे पर उसके मुस्कराहट खेल आई।

[१०]

महिला लडकियो को लेकर चली गई। तब मगल अपनी जगह उठा। औजार नीचे रख दिये और ननकू और उसकी स्त्री के सामने हाथ जोडकर बोला–'अब मुझे विदा दीजिए। ईश्वर ने मेरे अपराध क्षमा कर दिये है। जो भूल हुई हो उसके लिए आप से भी माफी माँगता हूँ।'

सुनकर दोनो जने देखते क्या है कि मगल के चेहरे में एक आभा फूट रही है। यह देख ननकू मगल के आगे आ सिर नवा कर बोला–'मगल, मै देखता हूँ तुम साधारण आदमी नही हो। न मैं तुम्हे रुकने को कहने लायक हूँ, न कुछ पूछने लायक। पर इतना बताओ कि यह क्या बात है कि मुझे मिले और तुम्हे घर लाया तब तुम उदास मालूम होते थे। लेकिन मेरी बीबी ने खाना दिया तो तुम उसकी तरफ देख मुस्करा पडे और चेहरा खिल गया। उसके बाद जब वह रईस बूट बनवाने आये तब तुम दूसरी बार हँसे और पहले से ज्यादा तुम्हारे पर रौनक दीखी। और जब यह श्रीमती अपनी लडकियो के साथ आई तब तुम तीसरी बार हँसे और ऐसे खिल आये जैसे उजली धूप। मगल, मुझे बताओ कि तुम्हारे चेहरे पर ऐसी शोभा उन तीन बार क्यो आई ? तुम मुस्कराये क्यो ?'

मगल ने उत्तर दिया–'शोभा, इसलिए कि मुझे दण्ड मिला था,

सो अब ईश्वर ने माफ कर दिया है। और मैं तीन बार हँसा, क्योंकि ईश्वर ने मुझे तीन सत्य जानने के लिए यहाँ भेजा था, और अब मै उन्हे जान गया हूँ। एक मैने तब जाना जब तुम्हारी स्त्री ने मुझ पर करुणा की। इसलिए पहली बार तो मै तब हँसा। दूसरा सत्य मैंने तब जाना जब वह रईस यहाँ जूते बनवाने आये थे। इससे दूसरी बार मैं उस समय मुस्कराया और इन लडकियो को देखकर मैने तीसरा और अन्तिम सत्य जान लिया। इससे अब मैं तीसरी बार हँसा हूँ और मेरा दु ख कट गया है।'

इस पर ननकू बोला—'मगल, हमे बताओ कि ईश्वर ने तुम्हे दण्ड क्यो दिया था और अब वे तीन सत्य क्या है, कि हम भी उन्हे जान सके।'

मगल ने जवाब दिया–

'भगवान ने मुझे सजा इसलिए दी कि उनकी आज्ञा मैने टाली थी। मैं स्वर्ग मे देवता था, पर मैने ईश्वर की आज्ञा भग की। ईश्वर ने मुझे एक स्त्री की आत्मा लेने भेजा था। मै उडकर धरती पर आया। देखता हूँ कि वह स्त्री अकेली है, बेहाल पडी, और अभी जुडवा बच्चियो को जन्म दे चुकी है। बच्चियाँ माँ के बराबर पडी अपनी नन्ही-सी जान से चिचिया कर रो रही है, पर माँ उन्हे उठाकर छाती तक नही ले सकती। मुझे देखकर वह समझ गई कि मैं ईश्वरका दूत हूँ और उसे लेने के लिए आया हू। सो वह रोने लगी। बोली– 'ओ परमात्मा के दूत! मेरे पति की राख अभी ठण्डी भी नही हुई है। पेड गिरने से उसके असमय प्राण गये। मेरे न बहन है, न चाची है, न माँ। इन अनाथो को पीछे देखने वाला कोई नही है। देखो, मुझे अभी मत ले जाओ। बच्चो को दूध पिलाकर पाल-पोस देने दो कि वे पैरो चल जाये। तब बेखटके ले जाना। तुम्ही सोचो, बच्चे माँ के बिना भला कैसे रहेगे!'

'मैरा जी पसीज आया और माँ की विनती रखी। उठाकर एक बच्ची को मैने उसकी छाती से लगा दिया। दूसरी को उसकी बाहो मे दे दिया। वापिस आया स्वर्ग और ईश्वर के पास पहुँच कर कहा कि मै उस माँ की आत्मा को नही ला सका हू। पति उसका एक पेड गिरने से हाल ही मे मरा है और उसके अभी दो जुडवाँ बच्ची हुई हैं। सो उसका निवेदन है कि अभी मुझे न ले जाओ। कहने लगी कि मुझे बच्चो को पाल-पोस देने दो कि वे चलने लगे, नही तो बच्चे माँ-बाप के बिना कैसे जियेगे ? मैने इसलिए उनसे अपना हाथ नही लगाया।'

ईश्वर ने कहा–'जाओ, उस माँ की आत्मा को लो और तीन सत्य सीखो। सीखो कि आदमियो मे किस तत्व का वास है, आदमी का क्या वश नही है और वह किसका जिलाया जीता है। जब ये तीन बात सीख लोगे तब ही तुम फिर स्वर्ग वापिस आ सकोगे।'

सो मैं उडकर फिर धरती पर आया और माँ को उठाकर चला। बच्चियाँ तब उसकी छाती से गिर गईं और अन्तिम करवट जो ली तो देह उसकी बच्ची पर जा रही। उससे उसकी बच्ची की एक टाँग बेकाम हो गई। मै आत्मा को लेकर उडा कि ईश्वर के पास ले जाऊँ। पर जाने कैसा हवा का चक्कर आया कि मेरे डैने गिरने लगे। मै उडने मे असमर्थ हो गया। माँ की आत्मा फिर अकेली ईश्वर की तरफ उड गई और मैं धरती पर सडक के किनारे आ गिरा।'

[११]

ननकू और मानवती अब समझे कि वह कौन था, जो इन सब दिन उसके साथ घर मे रहा-सहा था, और घर मे खाया-पिया था। वे गर्व और भय से भर आये।'

देवदूत ने आगे कहा—'मैं अकेला पडा था। अनजान, न कपडा था न कुछ। आदमी होने से पहले सर्दी या भूख न जानता था। आदमी की कोई जरूरत नही समझता था। लेकिन वहाँ भूख मालूम

हुई और मैं ठण्ड में ठिठुरा जाने लगा। जानता नहीं था कि क्या करूँ। तभी पास ईश्वर के नाम पर बनाया गया आदमियो का एक मन्दिर मुझे दिखाई दिया। मै वहाँ गया कि शरण मिलेगी। पर मन्दिर मे ताला जडा हुआ था और मे अन्दर जा नही सका। सो हवा की शीत से बचने के लिए मै मन्दिर के पीछे दीवार के सहारे उकडूँ बैठ गया। साँझ हो रही थी। मैं भूखा था। दर्द और ठण्ड से बदन मेरा अकडा जाता था तभी एकाएक सडक पर आते हुए एक आदमी की आहट मुझे मिली। हाथ मे उसके एक जोडी जूते लटके थे और वह अपने आप से बात करता हुआ जा रहा था। खुद आदमी होने के बाद वह पहली बार मैने मनुष्य का चेहरा देखा। वह मुझे बडा भयानक मालूम हुआ और उधर से मैने आँख मोड ली। वह आदमी बात करता जाता था कि कैसे जाडे के लिए मुझे कपडे बनवाने है, और बीबी के लिए क्या करना है,और बच्चे के लिए क्या करना है, मै सोचने लगा कि मै यहाँ पास ही सर्दी और भूख से मरा जा रहा हूँ और एक आदमी यह है कि अपने और अपनी स्त्री के लिए ही खाने पहनने की बात सोचता है। वह मुझे मदद नही कर सकता। मुझे देखकर उस आदमी की भवे तन गई और चेहरा भी भयावह हो आया। वह मुझसे कतराकर दूसरी राह निकल गया। मेरी आस टूट चली। लेकिन एकाएक जान पडा कि लौटा आ रहा है। ऊपर निगाह उठा मैंने देखा तो वह नही दीखता था। पहले उसक चेहरे पर मौत का डर था अब जीवन वहाँ था और ईश्वर की सत्ता का चिह्न मुझे उस मुख पर मिला। वह आदमी मेरे पास आया। कपड़े दिये और मुझे फिर घर भी ले गया। घर आने पर एक स्त्री मिली और मुँह खुलना था कि वह मर्द से भी ज्यादा भयावनी मालूम हुई। वाणी मे उसके मौत विराजमान थी और उसमे चारो ओर जो यम की गन्ध लपटे ले-लेकर फूटती थी उसमे साँस लेना मुझे दूभर हो गया। बाहर चाहे सर्दी मे ठिठुर-मरूँ, लेकिन मुझे वह अपन घर से निकाल बाहर करने को

तैयार थी। मैं जानता था कि अगर ऐसा हुआ तो उसका अनिष्ट है। है। लेकिन पति का उसे ईश्वर की याद दिलाना था कि वह स्त्री एक दम बदल गई। फिर वह मेरे लिए खाने को लाई और मुझे करुणा की आँखो से निहारा तब मौत का वास उसमे नही था, और उसमे विद्यमान ईश्वर की महिमा मुझे दिखाई दे आई। उस समय मुझे सचाई की बात याद आई। ईश्वर ने कहा था कि यह जानो कि आदमी के अन्तर मे किसका वास है। और प्रतीति पाली कि आदमी के अन्तर मे प्रेम का वास है। मुझे हर्ष हुआ कि ईश्वर की कृपा-दृष्टि मुझ पर बनी है और सत्य-दर्शन मे वह मेरे सहाई है। तब महसा मुझ से मुस्कराहट फूट गई। लेकिन अभी सब मैने नही जाना था। जानना शेष था कि क्या आदमी का वश नही है और आदमी किस के जिलाये जीता है।

'मैं फिर आप लोगो के साथ रहने लगा और एक साल बीत गया। तब एक आदमी आया। वह जूते वनबाना चाहता था जो एक साल तक काम दे। न बीच मे कही से उधडे, न बिगडे। मैंने उसकी ओर देखा। एकाएक देखता क्या हूँ कि उस आदमी के ठीक पीछे-पीछे मेरा ही साथी है, जो उसे उठा ले जाने को आया हुआ है। मेरे सिवा उस यमदूत को किसी ने नही देखा। लेकिन मैने उसे पह-चान लिया और जान गया कि आज का सूरज छिपने न पायगा कि उससे पहले ही मेरा वह साथी उस अमीर आदमी की आत्मा को ले उडेगा। यह देख मैंने सोचा कि देखो, यह आदमी साल भर का बन्दोबस्त कर रहा है, लेकिन उसे पता नही कि वह कै घडी का मेह-मान है। उस समय मुझे ईश्वर का दूसरा वचन याद आया कि यह सीखो कि आदमी का वश क्या नही है?

'आदमी के अन्तर मे किसका वास है, यह तो मै जान गया था। अब जाना कि आदमी का वश क्या नही है। आदमी का यह वश नही है कि वह अपनी आगे की जरूरते जाने। इस दूसरी सचाई का दर्शन

पाने पर दूसरी बार फिर मुझे हर्ष की मुस्कराहट आ गई। एक विछोह के बाद अपने स्वर्ग के साथी को देखकर मुझे आनन्द हुआ और परम सन्तोष हुआ कि ईश्वर ने मुझे दूसरे सत्य के दर्शन करा दिये।

'लेकिन अब भी मैं सब नही जानता था। तीसरा सत्य मुझसे ओझल बना था। वह यह कि आदमी किस के स्वॉस से जीता है। फिर कुछ दिन बीते उत्कण्ठा मे रहने लगा कि ईश्वर कब तीसरे सत्य का उद्घाटन करते है कि छठे साल जुड़वा बहनो को लेकर यह महिला आई। देखते ही उन लडकियो को मैन पहचान लिया। फिर कथा सुनी कि कैसे वे बच्ची पली और जीती रही। वह सुनकर मैने सोचा कि माँ ने उन बच्चियो के लिए मुझे रोका था। मैंने उसकी यह बात मान ली थी कि बच्चे माँ-बाप से जीते है। लेकिन देखा कि एक बिल्कुल अनजान औरत ने उन्हे पाला–पोसा और बडा किया। जब वह स्त्री उन बच्चियो को प्यार करती थी, जो उसकी कोख की नही थी, और उस प्यार से उनकी आँख मे आँसू आ रहते थे, तब साक्षात् अशरण-शरण का रूप उनमे मुझे दिखाई दे आता। मैं समझ गया कि लोग किसके जिलाये यहाँ जीते है। उस समय मै धन्य हो गया, क्योकि ईश्वर ने तीनो समाधानो का मुझे दर्शन करा दिया था। मेरे बन्धन कट गये, पाप क्षमा हो गये। और तब मै तीसरी बार मुस्कराया।'

[१२]

अनन्तर उस देवदूत का शरीर दिव्य होकर दसो दिशाओ मे मिल गया। अब प्रकाश ही उसका परिधान था और आँखे उस पर ठहरती न थी। वाणी गम्भीर सुन पड रही थी जैसे कि घन-घोष और आकाश से दिव्य ध्वनि बिखरती हो। इसी वाणी मे देवदूत ने कहा—

'मैं सीख गया हूँ कि लोग अपनी-अपनी चिन्ता करके नही रहते है, बल्कि प्रेम से रहते है।'

'बच्चियो की माँ को नही मालूम था कि उनके जीवन को क्या चाहिए, न उस अमीर आदमी को मालूम था कि उसे क्या चाहिए, न किसी आदमी का वश है कि उसको मालूम हो कि शाम होने तक क्या होने वाला है। कोई क्या जानेगा कि शाम तक भोग भोगना मिलेगा कि राख मे मिलना बदा है!'

'आदमी बनकर मै जिन्दा रहा तो इसलिए नही कि अपनी परवाह की या कर सका! बल्कि इसलिए जिन्दा रहा कि एक राहगीर के दिल मे प्रेम का अश था। उसने और उसकी बीबी न मुझ पर करुणा की और मुझे प्रेम किया। अनाथ बच्चियाँ जीती रही तो माँ की चिन्ता के भरोसे नही लेकिन इसलिए जीती रही कि एक बिल्कुल अनजान स्त्री के हृदय मे प्रेम का अकुर था और उसने उन पर दया की और प्यार किया और सब लोग अगर रहते है तो अपनी-अपनी फिक्र करने के बल पर वे नही रहते, बल्कि इसलिए रहते है कि उनमे प्रेम का आवास है।'

'मै अब तक जान सका कि ईश्वर ने मनुष्य को जीवन दिया कि वे जीये। लेकिन अब मै उससे आगे भी जानता हूँ।'

मैने जाना कि ईश्वर यह नही चाहता कि लोग अलग-अलग जिये। इसलिए यह नही है कि कोई जाने कि किसी की अपनी जरूरते क्या है। ईश्वर तो चाहता है कि सब ऐक्य-भाव से जीये। इसलिए सबको पता हो कि सबकी जरूरते क्या है।'

'अब मै समझ गया हू कि चाहे लोगोको लगता हो कि वह अपनी फिक्र करके जीते है, लेकिन सचाई मे तो प्रेम है जो उन्हे जिन्दा रखता है। जिसमे प्रेम है, वह भगवान मे है और भगवान उसमे है। क्योकि भगवान प्रेममय है।'

इतना कहकर देवदूत ने ईश्वर की स्तुति की, जिसकी गूँज से मानो सारा वाताकाश हिल गया। तभी ऊपर छत खुली और धरती से आसमान तक एक जलती लौ की ज्योति उठती चली गई। ननकू

और उसके स्त्री-पुत्र चमत्कार से सहमे से धरती पर आ रहे। तभी देवदूत मे प्रकाश के पख उगे और वह आकाश मे उडकर अन्तर्धान हो गया।

ननकू को चेत आया तो मकान ज्यो-का-त्यो खडा था और घर मे उसके कुनबे वालो के सिवाय कोई न था। ●

: ४ :

आम बराबर गेहूँ

एक बार एक नदी अमराई मे कुछ बच्चे खेल रहे थे कि उन्होने एक चीज पाई। देखने मे वे गेहू के दाने जैसे मालूम होती थी। अध-बीच मे उसके एक लकीर बनी थी जैसे दो दल जुडे हो। लेकिन दाना वह इतना बडा था जैसे देशी आम।

एक मुसाफिर ने बच्चो के हाथ मे उसे देखा तो दो-एक पैसा देकर उसे ले लिया। वह मुसाफिर फिर उसे ले गया और राजधानी के नगर मे राजा के हाथ अजायबात के नाम पर उसे बेचकर दौलत बनाई।

राजा ने अपगे दरवार के नवरत्न पण्डित बुलाये। कहा कि यह चीज है सो बतावे। पण्डितो ने बहुत सोचा, बहुत विचारा। पर उन्हे इस चीज का कुछ अता-पता नही मिला। आखिर एक दिन वह दाना खिडकी पर रक्खा था कि मुर्गी उडकर आई और उसमे चोच मारने लगी। इस तरह उसमे छेद हो गया। तब पण्डितो ने देखा कि अरे, यह तो गेहू का ही दाना है। इस पर पण्डितो ने राजा स जाकर कहा—'महाराज, यह दाना अन्नराज गेहूँ का है।'

यह सुनकर राजा को बडा विस्मय हुआ। उन्होने पण्डितो से कहा कि कहाँ और कब ऐसा नाज का दाना पैदा हुआ, इसका पता आप लगा कर दे। पण्डित लोग सोच मे पड गये। उन्होने अपनी पोथियाँ टटोली और शास्त्र छाने। लेकिन इस बाबत कोई जानकारी हाथ न आई। आखिर राजा के पास आकर बोले—

'हम कुछ नही बता सकते, महाराज! इस बारे मे हमारी पोथियो मे कोई उल्लेख नही मिला। इसके लिए तो किसानो से पूछना होगा महाराज! शायद कोई उनमे अपने पुरखाओ से जानता हो कि कहाँ और कब गेहूँ का दाना इतना बडा उगा करता था।'

सो राजा ने हुक्म दिया कि बडी-बडी उम्र के किसान लोग उनके सामने लाये जावे। आखिर ऐसा एक आदमी आया जिससे पता चलने की आस बँधी। वह राजा के सामने हुआ। बुड्ढा था और कमर उसकी झुक गई थी। दाँत थे नही। चेहरा मुलतानी मिट्टी-सा पीला था। दो बैसाखियो के सहारे ज्यो-त्यो लडखडाता महाराज की उपस्थिति मे वह लाया गया।

राजा ने यह दाना उसे दिखाया। लेकिन बुड्ढे की आँख मुश्किल से देखने लायक थी। उसने उसे हाथ मे लेकर टटोल कर देखा।

राजा ने पूछा—'बता सकते हो कि ऐसा दाना कहाँ और कब उगा? क्या तुमने ऐसे बडे दानो का नाज कभी खरीदा है, या कभी अपने खेत मे बोया या उगाया है?'

वह बुड्ढा कान का कुछ ऐसा निपट बहरा था कि राजा की बात मुश्किल से सुन सका और काफी देर मे वह उसकी समझ मे आई। आखिर उसने जवाब दिया— 'नही' ऐसा नाज न मैने बोया है, न कभी काटा है, न कभी खरीदा है। जब नाज बेचा-खरीदा करते थे तब भी दाना जैसा आज है उतना ही छोटा होता था। लेकिन मेरे बाप से आप

पूछकर देखे। उन्होने शायद सुना होगा कि ऐसा दाना कहाँ उगता था।'

इस पर राजा ने बाप को लाने का हुक्म दिया। उसकी खोज-खबर हुई आखिर महाराज के सामने उसे लाया गया। वह एक बैसाखी से चलता हुआ आया। राजा ने उसे दाना दिखाया। उस किसान ने दाने को गौर से देखा। वह अपनी आँखो से अब भी भली प्रकार देख सकता था।

राजा ने पूछा—'अब बतला सकते हो, चौधरी कि वह कहाँ से पैदा होता है? क्या इस तरह का नाज कभी तुमने खरीदा-बेचा है, या अपने खेत मे बोया-उगाया है?'

वह आदमी थोडा ऊँचा तो सुनता था, लेकिन अपने लडके जैसा उसका बदहाल न था।

उसने कहा—'नही, मैंने ऐसे दाने का अनाज अपने खेत मे न बोया, न काटा। और बेचने-खरीदने की जो बात आपने कही मैंने नाज कभी खरीदा नही और न बेचा। क्योकि हमारे जमाने मे सिक्के का चलन हो नही था। सब अपना नाज उगा लेते थे और कमी होती या और जरूरत होती तो आपस मे बॉट-बदल लेते थे। मुझे मालूम नही कि यह नाज कहाँ की उपज है। हमारे जमाने का दाना आज के दाने से तो बेशक काफी बडा होता था, और भारी होता था, लेकिन इस जैसा नाज का दाना मैंने आज तक नही देखा। हाँ, मैंने अपने बाप को कहते सुना है कि उनके जमाने मे गेहू बहुत बडा होता था। और एक दाना बहुत चून देता था। आप उनसे पूछे।'

सो राजा ने इन बाप के बाप को भी बुला भेजा। खोज करने पर वह भी मिल गये और राजा के सामने लाये गये। वह बिना किसी लठिया के सहारे सीधे चलते हुए वहाँ आ गय। निगाह उनकी निर्दोष थी। कान ठीक सुनते थे और बोलते भी वह साफ और स्पष्ट थे।

राजा ने उन्हे दाना दिखाया। उन वृद्ध पितामह ने देखा और

हाथ मे लेकर परखा। फिर बोले—'आज कही मुद्दत के बाद ऐसा गेहू देखने को हमे मिला है।' यह कहकर उन्होने जरा सा कतर कर जीभ पर लिया।

बोले—'हाँ, यह वही किस्म है।'

राजा ने कहा—'पितामह, बतलाइये कि कब और कहाँ ऐसा गेहूँ उगा करता था? क्या आपने ऐसा अन्न कभी खुद मोल लिया है या आपने खेत मे लगाया है?'

उन वृद्ध पुरुष ने उत्तर दिया—

'राजन, मेरे जमाने मे ऐसा अन्न सब कही हुआ करता था। मेरी जवानी ऐसे नाज पर ही पली है। औरो को भी ऐसा नाज मैंने खिलाया है। ठीक इसी तरह का दाना हमारे खेत की बालो मे पडा करता था। उसी को सब बोते, काटते और गाहते थे।'

राजा ने पूछा—'पितामह, यह बताइये कि यह दाना आप कही से मोल लाये थे या अपने आप उगा था?'

वृद्ध पुरुष सुनकर मुस्कुराये। बोले—'हमारे जमाने मे अन्न बेचने जैसे पाप की कोई बात भी कभी नही सोच सकता था और सिक्के को हम जानते भी न थे। हरेक के पास अपना काफी रहता था।'

राजा ने कहा—'तो आपके वे खेत कहाँ थे और ऐसा नाज आप कहाँ जाकर उगाते थे?'

पितामह ने उत्तर दिया—'हमारे खेत क्या?' ईश्वर की यही धरती तब थी। जहाँ हल जोता और मेहनत की कि वही हमारा खेत हुआ। जमीन छूटी बिछी थी। मालिक-मिल्कियत की बात न थी। जमीन ऐसी कोई चीज नही थी कि मेरी तेरी होती। हमारे जमाने में एक हाथ की मेहनत ही ऐसी चीज थी जिसमे लोग अपना हक मानते थे, नही तो कोई नही।'

राजा ने कहा—'दो सवालो का और जवाब दीजिए, पितामह! पहला सवाल यह कि धरती पहले ऐसा दाना कैसे देती थी और अब देना

क्यो बन्द हो गया ? दूसरा यह कि आपका पोता तो बैसाखियो से चल कर यहाँ आया, बेटा एक लठिया के सहारे पहुचा और आप बिना किसी सहारे के चलते आ गये। आपकी आँखो की रोशनी भी उजली है, दाँत मजबूत है और बानी साफ और मधुर है, यह कैसे हुआ ?'

उन पुरातन पुरुष ने उत्तर दिया—

'ऐसा इसलिए हुआ कि आदमियो ने आज अपनी मेहनत के भरोसे रहना छोड दिया है और दूसरो की मेहनत का आसरा थामकर रहते है। पुराने जमाने मे लोग नियम पालते थे और वैसे रहते थे। जो उनका था, वही उनका था। दूसरे की मेहनत और उसके फल पर उन्हे लोभ नही होता था।'

●

: ६ :

बदी छले, नेकी फले

पुराने जमाने की बात है कि एक आदमी रहा करता था। वह नेक और दयालु था। धन-माल सब तरह का उसके पास खूब था। और बहुत से गुलाम थे। गुलाम लोगो को भी अपने इन नेक मालिक पर अभिमान था।

वे कहते थे, 'इस धरती पर तो हमारे मालिक जैसे कोई दूसरे होगे नही। हमे अच्छा खाने-पहनने को देते है और काम भी हमारे बस जितना हो उतना ही हमे देते है। मनमे कीना कोई नही रखते। न कभी किसी को सख्त लफ्ज निकालते है। और मालिको की तरह के वह नही है, जो गुलामो से ऐसे बरतते है जैसे जानवर। जो कसूर-बेकसूर उन्हे पीटते रहते है और कभी कोई मीठा बैन मुंह से नही

निकालते। हमारे मालिक हित चाहते है, हमारी भलाई मे रहते हैं और सदा मीठी बानी बोलते हैं। हमे तो सब सुख है। और इससे बढकर इस हालत जिन्दगी मे हमे और चाहना क्या हो सकती है ?'

इस तरह के बचनो से नौकर लोग मालिक की बडाई किया करते थे। पर पाताल-लोकवासी शैतान को इस पर बडी खीज होती थी कि देखो, ये नौकर मालिक दोनो कैसे आपस मे हेल-मेल से रहते है। नौकरो मे से उसने आलिब नाम के एक नौकर को फुसलाया। उसे काबू मे करने के बाद फिर कहा कि अब तुम औरो को भी बहकाओ। सो एक दिन जब वे सब जमा थे और मालिक की बडाई की बाते कर रहे थे, उस समय आलिब ऊंची आवाज से बोला—

'मालिक की नेकी की इतनी बडाई क्यो करते हो, जी ? हमी बेवकूफ है, नही तो और क्या। देखो, सुनो—अगर पाताल-लोकवासी का मब लोग कहा करो तो वह हम पर बडी कृपा करने को कहते है। अब तो हम अपने मालिक की खिदमत मे रहते है और सब काम मे उसकी मरजी निहारा करते है। मन मे उनके कुछ आया नही कि झट दौडकर हम उसे पूरा कर देते है। सो वह हमारी तरफ नेक न होगे तो क्या होगे। बात तो तब देखी जाय कि हम उनका कहा न करे और नुकसान करके रख दे। तब देखना है कि वह क्या करते हैं। उस समय औरो की तरह गाली का बदला गाली से न दे, तब बात है। तब देख लेना कि जैसे बेरहम और मालिक होते है वैसे ही बेरहम हमारे-तुम्हारे मालिक भी निकलेगे।'

पर और नौकरो ने आलिब की बात न मानी। बोले कि नहीं जी, यह झूठी बात है। सो मतभेद पडा और बहस होने लगी। आखिर उनमे एक शर्त ठहरी। आलिब ने कहा कि अच्छी बात है, मै मनमे गुस्सा लाकर दिखला दूंगा, नाकाम रहूँ तो मेरी पोशाक तुम्हारी। और जो जीत गया तो तुम सब को अपनी पोशाक मेरे हवाले करनी होगी। यह भी ठहरा कि जीतने पर सब फिर उसकी हिमायत करेगे

और उसका कुछ बिगड़ने नही देंगे। सजा मिलेगी तो बचा लेंगे। जो कही पॉव मे बेडी डालकर हवालात मे डाल दिया गया तो खोलकर रिहा कर देंगे। शर्त पक्की हो गई और आलिब ने अगले ही दिन मालिक मे अविवेकता दिखाने का वायदा किया।

आलिब के जिम्मे चराई का काम था। भेडे उसके सुपुर्द थी। इनके रेवड मे कुछ बडी ही कीमती जाति की भेडे भी थी। मालिक उन्हे बहुत चाहते थे। उन भेडो पर उन्हे नाज था।

अगले दिन सबेरे के वक्त मालिक के साथ कुछ मेहमान भेडो के बाडे मे आये। असल मे मालिक उन्हे अपनी बेशकीमती ऊन देने वाली भेडे दिखाने को साथ लाये थे। उनके आने पर आलिब ने साथियो की तरफ आँख मटकाकर इशारा किया कि अब देखो, क्या होता है। देखना, मालिक झल्लाते है कि नही।

नौकर-चाकर लोग बाडे मे इधर-उधर घिर कर खडे थे। कोई बाडे के द्वार की जाली मे से देख रहा था, कोई ऊपर से ही उझक कर। और पाताल लोक से शैतान महाराज भी आकर ऊपर पेड पर चढकर बैठ गये थे कि देखे, हमारा सेवक अपना काम कैसा करता है।

मालिक बाडे के अन्दर चलते हुए आये। मेहमानो को मुलायम बालो वाले बचकाने मेमने दिखाते जाते थे। एक उनमे सबसे ही आला किस्म का था, उसे खास तौर से दिखाना चाहते थे।

बोले कि यो तो ये भेडे भी कम कीमती नही हैं लेकिन एक तो बेशकीमती ही है। उसके सीग पास-पास है और ऐसे पेचदार और पैने कि बडे खूबसूरत लगते है। जानवर क्या है, मेरी आँखो का तो रुकन है।

बाडे मे अजनबी सूरत को देखकर भेडे और बच्चे इधर-उधर छूट-छूटकर भागते थे। सो मेहमान गौर जमाकर उस बेशकीमती जानवर को नही देख पाते थे। वह कही एक जगह खडा होता कि आलिब अनजान बना नागहानी रेवड को चल-विचल कर देता था।

सो फिर भेडे आपस मे रल जातीं और किसी खास पर निगाह रखना मुश्किल हो जाता था। ऐसे मेहमान लोग ठीक-ठीक नजर मे नही ला सके कि आला किस्म का जानवर उनमे है कौन सा। आखिर मालिक भी इससे परेशान आ गये। बोले, 'भैया आलिब, मेहरबानी करके उस मेमने को पकड कर तो जरा सामने लाओ। हाँ, वही पेचदार सीग का गौहर। देखो होशियारी से पकडना और छन दो-एक को उसे हाथ मे थाम भी रखना।'

मालिक का कहना मुँह से निकल कर पूरा नही हुआ कि आलिब शेर की तरह उनमे घुसा और जोर से जाकर गरदन पर उस मुलायम मेमने को धर दबाया। उसकी खाल को एक हाथ से जोर से मुट्ठी मे कसकर दूसरे हाथ से पिछली बाई टॉग से पकड कर धरती से अधर मे उठाकर लटका लिया और मालिको की आँखो के आगे ला दिया। ऐसी झोक और झपट के साथ यह किया कि पतली टहनी की तरह उस बेचारे की टॉग मोच खा गई। आलिब ने इस तरह टॉग तोड ही दी और मेमना धरती पर फडफडाता गिरा। बाई टाँग तकलीफ के मारे मुडकर लटक गई थी कि आलिब ने दाई टॉग को पकड लटकाया। मेहमान के आस-पास घिरे नौकर-चाकर उस समय दर्द से और सहानुभूति के मारे जैसे चीख ही पडे। मगर ऊपर पेड पर चढ़कर बैठा हुआ शैतान अपने सेवक आलिब की चतुराई पर प्रसन्न हुआ। मालिक गुस्से के मारे ऐसे काले पड गये जैसे बिजली भरा बादल। भवे उनकी जुड आईं। पर वह सिर लटका कर रह गये और एक शब्द भी नही बोले। मेहमान भी और नौकर-चाकर भी चुप्पी बाँधे रह गये थे। सब शान्त थे कि अब क्या होगा, कुछ देर गुम-सुम रह कर मालिक ने सिर झटका, जैसे कोई बोझ ऊपर से अलग किया हो। फिर सिर को सीधा कर आँखे अपनी आसमान की ओर उठाई, कुछ देर ऐसे आकाश मे मुँह किये वह खडे रहे कि इतने मे चेहरे की सल-

वट विलय हो गई और वहाँ नीचे आलिब की तरफ देखकर मुस्कराहट के साथ बोले—

'ओ आलिब, तुम्हारे मालिक का तुम्हे हुक्म था कि मुझे गुस्सा दिलाओ। पर मेरे भगवान तुम्हारे मालिक से जबरदस्त है। मै तुम पर गुस्सा नही करूँगा, कि उल्टे तुम्हारे मालिक से गुस्सा करना हो जावे। तुम डरते हो कि मैं तुम्हे सजा दूँगा। तुम्हारे मन मे मुझसे छूटने की मर्जी है तो अपने मेहमानो के सामने मैं तुम्हे आजाद करता हूँ। जहाँ चाहे जाओ। और पोशाक और जो पास हो सब साथ ले सकते हो।'

इसके बाद मालिक मेहमानो के साथ घर लौट आये। लेकिन शैतान दाँत पीसता हुआ पेड़ पर से धरती पर आ गिरा और गिर कर पाताल मे समा गया। ●

: ६ :

हम से सयाने बालक

रूस देश की बात है। ईस्टर के शुरू के दिन थे। बरफ यो गल चला था, पर आँगन मे कही-कही अब भी चकत्ते थे। और गल-गल कर बरफ का पानी गाँव की गलियो मे ही बहता था।

एक गली मे आमने-सामने के घरो से दो लडकियाँ निकली। गली मे पानी था। वह पानी पहले खेतो मे चलकर आता था इससे मैला था। बाहर गली के चौडे मे एक जगह एक खाली तलैया-सी बन गई थी। दोनो लडकियो मे एक तो बहुत छोटी थी, एक जरा बड़ी थी। उनकी माँओ ने दोनो को नये फ्राक पहनाये थे। नन्ही का फ्राक नीला था और बड़ी का पीली छींट का। और दोनों के सिर पर

लाल रूमाल थे। अभी गिरजे से लौटी थीं कि आमने-सामने मिल गईं। पहले दोनो ने एक-दूसरे को अपनी फ्राक दिखाई और खेलने लगी। जल्दी ही उनका मन हो उठा कि चले, पानी मे उछालें मारे। सो छोटी लडकी जूतो और फ्राक समेत पानी मे बढ जाना चाहती थी कि बडी ने रोक लिया।

'ऐसे मत जाओ, निनी' वह बोली, 'तुम्हारी माँ नाराज होगी। मैं अपने जूते-मोजे उतार लेती हूँ। तुम भी उतार लो।'

दोनो ने ऐसा ही किया और अपने-अपने फ्राक का पल्ला ऊपर को सँभाल पानी मे एक-दूसरे की ओर चलना शुरू किया। पानी निनी के टखनो तक आ गया और वह बोली, यहाँ तो गहरा है, जीजी, मुझे डर लगता है।'

जीजी का नाम था मिशा। बोली, 'आओ, डरो मत। इससे और ज्यादा गहरा नही होगा।'

जब दोनो पास-पास हुईं तो मिशा बोली—

'खबरदार निनी, पानी न उछालो। जरा देख कर चलो।'

वह कह पाई ही होगी कि निनी का एक पाँव एक गड्ढे मे जाकर पडा और पानी उछल कर मिशा की फ्राक पर आया। फ्राक पर छीटे-छीटे हो गये और ऐसे ही मिशा की आँख और नाक पर भी छीटे पड गये। मिशा ने अपनी फ्राक के धब्बे देखे तो नाराज हो उठी और निनी को मारने दौडी। निनी घबरा गई और मुसीबत देख वह पानी से निकल घर भागने को हुई। लेकिन ठीक तभी मिशा की माँ उधर आ निकली। अपनी लडकी की फ्राक और उसकी आस्तीने छीटे-छीटे गन्दी हुई देख बोली—

'शैतान कही की, गन्दी लडकी, यह क्या कर रही हो?' मिशा बोली—'मैंने नही निनी ने यह खराब किया है।'

सो मिशा की मा ने निनी को पकड़ कर कनपटी पर एक चपत

रख दिया। निनी हो-हल्ला करके रोने लगी! ऐसी कि सारी गली मे आवाज पहुच गई सो उसकी माँ निकल बाहर आ गई।

'तुम क्यो मेरी निनी को मार रही हो जी ?' कह कर वह फिर अपनी पडोसिन को खूब खरी-खोटी कहने लगी। बात पर बात बढी और उन दोनो मे खासा झगडा हो गया। और लोग भी निकल आये। एक भीड ही गली मे इकट्ठी हो गई। हर कोई चिल्लाता था, सुनता कोई किसी की नही था। वे झगडा किये ही गई। यहाँ तक कि धक्कम-धक्का की नौबत आ गई। मामला मार-पीट तक आ लगा था। कि मिशा की बूढी दादी बढकर उन मे आई और समझाने-बुझाने की कोशिश करने लगी।

'अरी, क्या कर रही हो, भली मानसो ? सोचो तो कुछ। भला कुछ ठीक है और आज त्यौहार-परब का दिन है, कि फजीते का !'

पर बुढिया की बात वहाँ कौन सुनता था ? जमघट के धक्कम-धक्के मे वह गिरते-गिरते बची। वह तो निनी और मिशा ने ही मदद न की होती तो बुढिया के बस का कुछ न था। वह भला क्या भीड को शान्त कर पाती ! पर उधर औरते आपस की गाली गलौज मे लगी थी कि इधर मिशा ने कीचड के छीटे पोछ कर फ्राक साफ कर ली थी और फिर पानी की तलैया पर पहुँच गई थी। पहुँच कर क्या किया कि एक पत्थर लिया और तलैया के पास की मिट्टी को खरोच-खरोच कर हटाने लगी, जिससे रास्ता बन जाये और पानी गली मे बहने लगे। यह देख निनी भी झट आकर उसकी कारगुजारी मे हाथ बँटाने लगी। लकडी की एक छिपटी ली और उससे मिट्टी खोदने लगी। सो ठीक स्त्रियाँ हाथा-पाई ही किया चाहती थी कि पानी उन नन्ही लडकियो के बनाये रास्ते से निकल गली की तरफ बढा। वह उधर बहकर चला, जहाँ बुढिया खडी उन्हे समझा रही थी। पानी के साथ-साथ एक इधर तो दूसरी उधर दोनो लड़कियाँ भी चली आ रही थी।

'अरी, पकड इसे निनी, पकड।' मिशा ने यह कहा तो, पर

निनी को हँसने से फुर्सत नही थी। पानी मे बही जाती लकडी की छिपटी मे वह बडी मगन थी। पानी की धार मे आगे-आगे छिपटी को तैरते देखती, खूब मगन,वे मुन्नियाँ दौडी-दौडी उन लोगो के झुण्ड ही मे आ पहुची। उस समय दादी बुढिया इन्हे देख बोली—

'अरी, तुम लोगो को अपने पर शर्म नही आती इन छोकरियो के लिए लडते जा रहे हो, और इन्हे देखो कि कैसे ये सब कुछ भूल चुकी है। वे तो मिली-जुली खेल रही है। और तुम! खुदा के बन्दो, तुमसे तो कही समझदार ये ही है।"

सब लोगो ने उन नन्ही लडकियो को देखा और शर्मिन्दा हुए। फिर खुद पर ही हँसते हुए सब अपने-अपने घर चले गये।

मो कहा ही है—'जब तक बदलोगे नही, और बच्चो जैसे ही नही हो जाओगे, किसी तरह रामकृपा और स्वर्गलोक न पा सकोगे।

●

: ७ :

धर्म-पुत्र

[१]

एक दिन किसान के घर एक बालक जनमा। उसने अपने भाग्य सराहे और बडा कृतार्थ हुआ। खुश-खुश एक पडौसी के घर गया कि आप इस बालक के धर्म-पिता बन जावे। पर गरीबी के बेटे को कौन अपनावे? सो पडौसी ने इन्कार कर दिया। तब दूसरे पडौसी से कहा, उसने भी इन्कार कर दिया। इस पर बेचारा किसान घर-घर घूमा। लेकिन कोई उसके बालक का धर्म-पिता बनने को राजी न हुआ। यह देख कर वह दूसरे गाँव चला। चलते-चलते राह मे एक आदमी

मिला। पूछने लगा—'जय राम जी की, भाई चौधरी, कहाँ जा रहे हो ?'

किसान बोला—भगवान की दया हुई है कि जीवन को सारथक करने और बुढापे मे सहारा होने घर मे हमारे उजियाला जनमा है। मरने पर वही हमारी मिट्टी लगायेगा और हमारी आत्मा को दया-धर्म से सीचेगा। लेकिन मै गरीब हूँ और गॉव मे कोई उसका धर्म-पुत्र बनने को राजी नही है। सो मै उसके धर्म-पिता की खोज मे जा रहा हूँ।'

मुसाफिर ने कहा—'चाहो तो मै धर्म-पिता बन सकता हूँ।'

किसान सुनकर प्रसन्न हुआ और धन्यवाद देने लगा। फिर सोच कर बोला—'यह तो आपने मुझे धन्य किया। लेकिन अब सोचता हूँ कि धर्म-माता के लिए किसे कहू।'

मुसाफिर ने कहा—'धर्म माँ के लिए सुनो, सीधे उस नगर मे जाओ। वहाँ चौक मे एक पत्थर की हवेली होगी। सामने नीली खिडकियाँ दीखेगी। वहॉ पहुँचोगे तो द्वार पर ही तुम्हे मकान के मालिक मिलेगे। उनसे कहना कि अपनी बेटी को बालक की धर्म-माता बन जाने दे।'

किसान सुनकर अचकचा गया। बोला—'एक धनी आदमी से ऐसी बाते कैसे कहूगा ? वह मुझे तिरस्कार से देखेगे और अपनी लडकी को पास न आने देगे।'

'सो चिन्ता न करो। तुम जाओ, कहो तो। और कल सवेरे तैयारी रखना। मै ठीक सस्कार के समय पहुच जाऊँगा।' मुसाफिर बोला।

किसान घर लौट आया। फिर उस धनी व्यापारी की तलाश मे शहर की तरफ गया। चौक मे पहुच कर उसने हवेली खोजी और मकान की ड्योढी पर पहुँचा था कि सेठ वही मिले। पूछने लगे—'कहो चौधरी, क्या चाहते हो ?'

किसान ने कहा कि भगवान ने दया की है और घर मे दीपक जनमा है। वही हमारी आँखो का तारा है, बुढापे का सहारा है और मौत के बाद हमारे प्रेत को पानी देगा। बडी मेहरबानी होगी जो आप अपनी बेटी को उसकी धर्म-माता बनने दे।

व्यापारी ने पूछा—'सस्कार कब है ?'

'कल सवेरे।'

'अच्छी बात है। तसल्ली रखो कल सवेरे सस्कार के समय वह आ जायेगी।'

अगले दिन माता आ गई, धर्म-पिता भी आ गये और शिशु का सस्कार होते ही धर्म-पिता चले गये। किसी को पता भी न चला कि वह कौन है, कहाँ रहते है। न वह फिर दीखे ही।

[२]

बालक चाँद की तरह बढने लगा। माँ-बाप के उछाह का पूछना क्या ? 'बढ कर माता-पिता के लिए छोटी उम्र से ही वह सहाई होने लगा। तन्दुरुस्त था और काम को उद्यत। चतुर और आज्ञाकारी। दस बरस का हुआ कि लिखना-पढना सीखने के लिए उसे मदरसे मे भेजा गया। जो और पाँच बरस मे सीखते वह एक बरस मे सीख गया और कुछ ही अरसे मे वहाँ की सब विद्या उसने समाप्त कर ली।

पूजा दशहरे के दिन आये और छुट्टियो मे वह अपनी धर्म-माता को प्रणाम करने गया। जाकर चरण छुये और सामने भेट रखी।

फिर लौटकर घर आया तो माँ-बाप से उसने पूछा—'मेरे धर्म-पिता कहाँ रहते है ? इस विजय दशमी के दिन मै उनको प्रणाम करना चाहता हूँ और दक्षिणा भेट दूँगा।

पिता ने कहा—'बेटे, तुम्हारे धर्म-पिता का हमे कुछ पता नही है। हमे अक्सर उनका ख्याल आता है। तुम्हारा नाम सस्कार हुआ, उसी रोज से उनकी खबर नहीं मिली। यहाँ तक मालूम नही कि कहाँ रहते है और अब है भी कि नही।'

पुत्र बोला कि माता जी, आप दोनो मुझे इजाजत दीजिये। मैं अपने धर्म-पिता की खोज मे जाऊँगा। उन्हे खोज कर रहूँगा और उनके चरणो की रज लूँगा।

माता-पिता ने बालक को अनुमति दे दी और वह अपने धर्म-पिता की खोज मे चल पडा।

[३]

घर से निकल वह सीधी सडक चल दिया। घण्टो चलता रहा। चलते-चलते एक मुसाफिर मिला। उसने पूछा कि लडके, तुम कहाँ जा रहे हो ?

लडके ने जवाब दिया— मै धर्म-माता के दर्शन करने और उन्हे प्रणाम करने गया था। फिर घर जाकर मैंने धर्म-पिता के बारे मे पूछा, जिससे उनके भी दर्शन पाऊँ और चरण छू सकूँ। लेकिन मेरे माता-पिता भी उनका पता नही जानते है। कहने लगे कि मेरा सस्कार हुआ था उसके बाद से ही उन की कोई खबर नही मिली। जाने जीते भी है कि नही लेकिन मै जरूर अपने धर्म-पिता के दर्शन चाहता हूँ। सो मैं उसी खोज मे निकला हूँ।'

मुसाफिर ने कहा—'तुम्हारा धर्म-पिता तो मैं ही हूँ।'

बालक सुनकर कृतार्थ हुआ। उसने उनके चरणो मे मस्तक नबाया। फिर पूछने लगा कि धर्म-पिता, आप अब किधर जा रहे है ? हमारी तरफ जा रहे हो तो मैं भी आपके साथ चल रहा हू।'

पथिक ने कहा कि अभी तो मेरे पास तुम्हारे घर चलने का समय नही है। जगह-जगह बहुत काम है। लेकिन कल सवेरे मै अपनी जगह पहुँच जाऊँगा तब वहाँ पर मुझे मिलना।

'लेकिन धर्म-पिता, मुझे जगह का पता कैसे चलेगा ?'

'सुनो, अपने घर से सवेरे सामने सूरज की सीध मे चलते जाना। चलते-चलते जंगल आ जायेगा। जगल को पार करना। फिर एक घाटी मे पहुँचोगे। घाटी मे पहुँचकर वहाँ बैठना और थोडा विश्राम

करना। पर चौकस होकर देखते रहना कि आस-पास क्या होता है। फिर घाटी के परले किनारे तुम्हे एक बगीचा दीखेगा। वहाँ मकान होगा, जिस की छत सुनहरी झलकती होगी। वही मेरा घर है। तुम सीधे दरवाजे पर आना वहाँ तुम्हे मै खुद खडा मिलूँगा।'

[४]

बालक ने धर्म-पिता के कहे अनुसार किया। वह उठकर सूर्य भगवान की तरफ चलता चला गया। चलते-चलते जगल आया। उसे पार करने पर घाटी आई। घाटी मे क्या देखता है कि ऊँचा एक बरगद का पेड खडा है। उसकी एक शाखा पर रस्सी बँधी है। रस्सी से एक भारी लकडी का लट्ठा लटका हुआ है। लट्ठे के नीचे लकडी की बडी-सी कठौती रखी है जो शहद से भरी हुई है। बालक यह देखकर अचरज मे हुआ कि क्यो इस तरह शहद भरा हुआ रखा है और उसके ठीक ऊपर यह लकडी का लट्ठा क्यो लटक रहा है। लेकिन अचरज का समय भी नही मिला कि उसे किसी के ऊपर आने की आहट सुनाई दी। देखता क्या है कि रीछ चले आ रहे है। एक रीछनी है, पीछे पीछे तीन बच्चे है। दो तो नन्हे-नन्हे है। एक लँगडा है। रीछनी सूँघती-सूँघती शहद की कठौती तक सीधी पहुँच गई। बच्चे भी पीछे लगे रहे। वहाँ पहुँच कर उसने शहद मे मुँह डाल दिया और चाटने लगी और बच्चो ने भी चारो ओर से उसे घेर लिया। वे भी नाँद पर चढकर लदर-पदर शहद चाटने लगे। थोडा ही चाटने पाये होगे कि ऊपर का लट्ठा आया और उन बच्चो के बदन मे आकर लगा। रीछनी ने मुँह से उस लट्ठे को परे हटा दिया। हट कर वह गया कि लौट कर अब फिर आ गया। रीछनी ने यह देखकर दूसरी बार अपने पजे से उस लट्ठे को धकिया दिया। वह दूर चला गया। लेकिन फिर उतने ही जोर से लौटा। लौट आकर इस बार जोर से वह एक बच्चे की पीठ और दूसरे के सिर से टकराया। बच्चे दर्द के मारे चीखते चिल्लाते भागे। उनकी माँ ने यह देखकर गुस्से के

साथ उस लट्ठे की लकडी को अपने अगले हाथो मे भीच कर पकडा और उठा कर जोर से फेक दिया। लट्ठा दूर चला गया और मौका देखकर वह रीछ का जवान पठ्ठा आया और नॉद मे मुँह डाल चटपट शहद खाने लगा। देखा देखी छोटे बच्चे भी चले आये। लेकिन वे पास पहुँचे न होगे कि लट्ठा लौट कर आया और इस जोर से उस जवान बेटे के सिर मे लगा कि वह वही ढेर हो गया। रीछनी को इस पर और गुस्सा चढा। झुँझलाकर उसने लट्ठे को जोर से पकडा और पूरी शक्ति से उसे परे फेक दिया। जिस डाल से बँधा था उससे भी ऊँचा वह जा पहुचा इतना ऊँचा कि रस्सी ढिला गई। इसी बीच रीछनी फिर नॉद पर आ गई और बच्चे भी उसी किनारे आ लगे। लठ्ठा ऊँचा चलता गया, ऊँचा चलता गया, आखिर वह रुका और फिर गिरना शुरू हुआ। जैसे-जैसे नीचे गिरता, जोर उसका बढता जाता था। आखिर पूरे बल से रीछनी के सिर मे आकर लगा। लगना था कि रीछनी लोट-पोट हो गई। उसके पॉव आसमान मे हिलते रहे और वही जान दे दी। बच्चे जगल मे भाग गये।

[५]

बालक अचरज मे भरा यह देखता रहा। फिर उसने आगे की राह पकडी। जगल पार कर घाटी के परले किनारे उसे एक आलीशान बगीचा मिला। वहाँ था एक महल का महल। छत उसकी सुनहरी झकझकाती थी। महल के दरवाजे पर बालक को धर्म-पिता मिले। मुस्कराकर उन्होने बालक का स्वागत किया और दरवाजे मे से उसे अन्दर बगीचे मे ले गये। लडके ने जो सपनो मे भी नही देखा वह सचमुच मे यहाँ था। क्या बाहर, अन्दर? फिर धर्म-पिता उसे महल के अन्दर ले गये। वहाँ की विभूति का तो कहना ही क्या? वह अपूर्व थी। धर्म-पिता ने चलकर बालक को महल का एक-एक कमरा दिखाया। उसकी तो आँखे न ठहरती थी। एक से एक बढ़-चढ़ कर ऐसी शोभा, ज्योति और उल्लास था कि—

आखिर एक कमरे पर पहुँचे जहाँ का दरवाजा मुहरबन्द था। धर्म-पिता ने कहा कि यह दरवाजा देखते हो न। इसमे ताला नही है, बस मुहरबन्द है वह खुल सकता है, लेकिन खबरदार, उसे खोलना नही। तुम यहाँ रहो, जी चाहे जहाँ फिरो। यहाँ का सब तुम्हारा है। सब भोग और सब आराम। लेकिन मेरी एक ताकीद है। यह दरवाजा मत खोलना। जो कही तुमने उसे खोला, तो याद कर लो जगल मे तुमने क्या देखा था।

यह कहकर धर्म-पिता अन्तर्धान हो गये। लडका उस महल मे रहता रहा। वहाँ वह सुख और वह आनन्द थे कि तीस साल ऐसे बीत गये जैसे तीन घण्टे। जब एक-एक कर तीस साल गुजर गये तो एक दिन धर्म-पुत्र मुहरबन्द दरवाजे के पास से गुजर रहा था। वह ठिठका और अचरज मे आकर सोचने लगा कि धर्म-पिता ने इस कमरे मे जाने की मनाही क्यो की थी।

सोचने लगा कि जरा देखने मे क्या हर्ज है। यह सोचकर उस दरवाजे को हाथ से तनिक सा धकियाना था कि मुहर गिर गई और दरवाजा खुल गया। अन्दर देखता क्या है कि और सभी से बढकर और बडा यह हाल है। बीच मे उसके सिहासन रखा है। कुछ देर वह उस खाली हाल के वैभव को देखता हुआ इधर-उधर घूमता रहा। अनन्तर सीढी चढ वह सिहासन पर जा पहुँचा और वहाँ बैठ गया। बैठकर देखता है कि सिंहासन से टिक कर शासन-दण्ड रखा हुआ है। उसने उसे हाथ मे ले लिया। उसका हाथ मे लेना था कि हाल की सब दीवारे हवा हो गई। धर्म-पुत्र ने देखा तो सारी दुनिया उसके सामने बिछी थी और लोग जो कुछ वहाँ कर-धर रहे थे, सब उसे दीखता था। वह सामने देखने लगा कि समन्दर फैला है और जहाज उस पर आ-जा रहे हैं। दाये हाथ अजब-अजब तरह की जगली जातियाँ बसी हुई है। बाये, हिन्दुस्तान के अलावा और लोग बसे दीखते है।

चौथी तरफ मुँह जो मोडा तो देखा कि उसकी आँख के आगे समूचा हिन्दुस्तान फैला है और उसी के जैसे लोग घूम-फिर रहे है।

उसने सोचा कि देखे हमारे घर क्या हो रहा है और खेती बाडी का क्या हाल है। उसने अपने बाप के खेतो को देखा कि बाले खडी है और पकने के नजदीक है। वह अन्दाजा लगाने लगा कि फसल कितने की बैठेगी। इतने मे उसे गाडो मे कोई आता दिखाई दिया। रात का समय था धर्म पुत्र ने सोचा कि पिता ही होंगे। रात को गल्ला ढो लेना चाहते है। लेकिन देखता क्या है कि वह आदमी तो नत्थूसिह जो कि नम्बरी चोर है। रात को आया है कि चुरा कर खेत का सारा नाज भर ले जाये। यह देख धर्म-पुत्र को गुस्सा आ गया। उसने पुकार कर कहा—'बापा ओ बापा, उठो हमारे खेत से नाज चुराया जा रहा है।'

बाप रात को अपनी मढैया मे चौकन्ना होकर सोया करता था। वह एक दम उठा। सोचा मैंने सपने मे सही, लेकिन अपने खेत का नाज चोरी होते देखा है। चलूँ, देखूँ क्या बात है। भाग कर वह खेत मे आया तो वहाँ देखता है कि नत्थूसिह मौजूद है। हल्ला मचाकर पास-पडौस वालो को भी उसने इकट्ठा कर लिया और नत्थूसिह की खूब मरम्मत बनाई। उसे पीटा-कूटा और बाँधकर थाने ले गये।

उसके बाद धर्म-पुत्र ने शहर की ओर निगाह उठाई, जहाँ धर्म-माता रहती थी। अब उनका विवाह हो गया था। इसी घडी वह चैन की नीद सो रही थी। इतने मे उनका पति उठा और दबे पाँव घर से निकल चला। धर्म-पुत्र ने वहाँ से पुकार कर कहा—'माँ उठो-उठो, देखो तुम्हारा पति जाने किस कुकर्म के लिए घर से निकल चला है।'

इस पर धर्म-माँ झट मे उठी और कपडे पहन कर उस कुलटा के यहाँ पहुँची जहाँ पति गया था। जाकर उस नारी को खूब बुरा-भला सुनाया, मारा-पीटा और बाहर खदेड दिया!

इसके बाद धर्म-पुत्र ने अपनी पेट की माँ का ख्याल किया वह अपने घर मे छप्पर के तले सो रही थी। देखता क्या है कि एक चोर घर मे घुस गया है और बक्स का ताला तोड रहा है, जिसमे माँ की जमा-जोखो रक्खी है। इतने मे जाग उठी यह देख कर डाकू ने गण्डासा उठा कर, माँ पर वार करना चाहा।

यह देख धर्म पुत्र से न रहा गया और उस दुष्ट पर हाथ का शासन-दण्ड खीचकर दे मारा। वह जाकर उसकी कनपटी पर लगा और चोर वही का हो रहा।

[६]

धर्म-पुत्र का चोर को मारना था कि दीवारे फिर चारो ओर घिर आई और हाल जैसा-का-तैसा हो गया।

उसी समय दरवाजा खुला और धर्म-पिता अन्दर आते दिखाई दिये। वहाँ पहुँच, हाथ पकड उन्होने धर्म-पुत्र को सिंहासन से नीचे उतारा और अपने साथ ले चले।

बोलो—'तुमने मेरा कहना नहीं माना और मना करने पर दरवाजा खोला, यह पहली गलती। सिंहासन पर जा बैठे और शासन-दण्ड हाथ मे ले लिया यह दूसरी गलती। उसके बाद यह तुमने तीसरी गलती की, जिससे दुनिया मे अँधेरा फैला जा रहा है। ऐसे तो तुम घडी भर सिंहासन पर और रहते तो आधी दुनिया बरबाद हो चुकी थी।'

यह कहकर धर्म-पिता अपने साथ धर्म-पुत्र को फिर सिंहासन पर ले गये और शासन-दण्ड अपने हाथ मे रखा। दीवारे फिर उसी तरह सामने से गायब हो गई और दुनिया का सब कुछ दिखाई देने लगा।

धर्म-पिता ने कहा—'अब देखो। नत्थूसिह को तुमने अपने पिता के सामने क्या किया। नत्थूसिह को एक साल की सजा हुई। अब जो वापिस आया है तो जेल से बची-खुची और बुराइयाँ सीख आया है रहा-सहा भी अब वह पक्का हो गया है। देखते नही कि

उसने अब तुम्हारे बाप के दो बैल चुरा लिए है और खलिहान मे आग लगाये दे रहा है। सो अपने लिए ये बीज तुमने बोये ?'

और सचमुच धर्म-पुत्र ने देखा कि आँख-आगे उसके बाप का खलिहान आग की लफ्टो मे धू-धू जल रहा है।

उसके बाद धर्म-पिता ने वह दृश्य दूर कर दिया और दूसरी तरफ देखने को कहा—'देखो, ये तुम्हारी धर्म-माता के पति है। एक हुआ कि उन्होने बीबी को छोड दिया है। अब औरो के पीछे लगे है। उनकी पहली प्रेयसी की हालत देखते हो ? वह कितनी पतिता हो गयी है, दु ख से पत्नी का हाल भी बेहाल है। गम के मारे उन्हे दौरे पडने लगे है। सो तुमने अपनी धर्म-माता की यह सेवा की है।'

धर्म-पिता ने यह दृश्य भी फिर हटा दिया। अब उसके आगे अपने गाँव का मकान था वहाँ देखता है कि उसकी माँ रो रही है और अपने अपराधो की क्षमा माँग रही है। पछतावा करती, सिर धुनती कह रही है 'हाय भला होता मुझे चोर उसी रात मार डालता। फिर मुझे ऐसे भोग तो न भोगने होते।'

धर्म-पिता ने कहा—'देखते हो ? यह है जो तुमने अपनी माँ के लिए करके रखा !'

वह पर्दा भी दूर हुआ फिर धर्म-पिता के सामने देखने को कहा। अब जो उसने देखा तो दो वार्डर जेलखाने के आगे एक डाकू को पकडे खडे है।

धर्म-पिता ने कहा—'पहचानते हो ? इस आदमी ने सिर पर दस खून है। यह खुद कर्म-फल का भोग लेकर अपने आप उतारता। लेकिन उसको मारकर उसके पाप तुमने बढाकर अब अपने सिर ले लिये है। अब उन सब पापो के लिए जबाव देना होगा। यह है जो तुमने अपने हक मे किया है। याद करो, रीछनी ने लट्ठे को एक बार हटा कर अपने बच्चो को चोट पहुँचाई। फिर हटाया तो अपने जवान बेटे को खोया। तीसरी बार जोर से हटाया तो अपनी जान से हाथ

खो बैठी। वही तुमने किया है। अब मै तुमको तीन साल और देता हूँ कि दुनिया मे जाओ और डाकू के अपने पापो के लिए प्रायश्चित करो। प्रायश्चित पूरा नही करोगे तो तुमको उसकी जगह लेनी होगी।'

धर्म-पुत्र ने पूछा—'उसके पापो का उतारा मुझे कैसे करना होगा, पिता ?'

दुनिया मे जो तुम बदी लाने के भागी हो उसे मिटाना तुम्हारा काम है, उतना कर लोगे तो, उस डाकू के और तुम्हारे दोनो के पापों का उतारा हो जायेगा।'

धर्म-पुत्र ने पूछा—'मै दुनिया की बदी को कैसे मिटाऊँगा पिता?'

धर्म-पिता ने कहा—'जाओ, सूरज की दिशा मे सीधे चलते चले जाना। चलते-चलने एक खेत मिलेगा, जहाँ कुछ आदमी होगे। देखना कि क्या कर रहे है और जो तुम जानते हो उन्हें बतलाना। फिर आगे बढना। ऐसा ही बढते जाना। राह मे देखो याद रखना। चौथे दिन तुम एक बन मे पहुचोगे। उस बन के बीचो-बीच एक कुटी मिलेगी। वहाँ एक साधु रहता है। जाकर जो हुआ हो सब सुनाना। वह बतायेगा कि तुम्हे क्या करना होगा। उसका कहा कर चुकोगे तब डाकू के और तुम्हारे अपने पापो का उतारा पूरा हो जायेगा।

यह कहकर धर्म-पिता ने उसको महल के दरवाजो से बाहर कर दिया।

[७]

धर्म-पुत्र अपनी राह बढ चला। सोचता जाता था कि मैं जगत मे से बदी का नाश कैसे करूँगा। बदकारो का नाश हो, ऐसे ही तो बदी का नाश होता है। उन्हे जेल मे डाल दिया था उनका अन्त कर दिया जाये। तब फिर बिना औरो का पाप अपने ऊपर लिए बदी से लडना कैसे होगा ?

धर्म-पुत्र ने बहुतेरा विचारा, पर निश्चय पर नही आ सका। वह

चला चलता गया। चलते-चलते एक खेत आया। वहाँ खूब घनी और ऊँची गेहूँ की बाले खडी थी। बस बाले पक गई थीं और कटने को तैयार थी। इतने मे क्या देखता है कि एक बछडा खेत मे घुस गया है। उसे खेत मे मुँह मारते देख कुछ लोग लाठी ले उसके पीछे पड गये है। खेत मे से वे उसे कभी उधर खदेडते कभी इधर। बछडा बाहर भागने के लिए खेत के जिस किनारे आकर लगता कि उधर ही कुछ लोग सामने मिलते है। डर के मारे वह भीतर लौट जाता है। सब जने खेत मे से होकर इधर-उधर उसका पीछा कर रहे है। और खेत खूब रौंदा जा रहा है। इधर यह है, उधर बाहर सडक पर खडी एक औरत रो रही है कि हाय रे मेरे बछडे को ये लोग भगा-भगा कर मारे डाल रहे है।

धर्म-पुत्र ने उन किसानो को कहा—'तुम लोग यह क्या कर रहे हो? सब जने खेत से बाहर आ जाओ। यह औरत अपने बछडे को आप बुला लेगी।'

आदमियो ने ऐसा ही किया। वह स्त्री भी खेत के किनारे पर आकर पुकारने लगी, 'आओ भैया, आओ मुनवा, यहाँ आओ। बछडे ने कान खडे किये। एक पल सुनता रहा। फिर अपने आप भाग आया और मचल कर अपना मुँह स्त्री की गोद मे ऐसे मारने लगा और ऐसी कलोल करने लगा कि वह बेचारी गिरते-गिरते बची। सब आदमी इससे खुश हुए, स्त्री भी खुश थी और बछड़ा मग्न दिखाई देता था।

धर्म-पुत्र फिर वहाँ से आगे बढा। सोचने लगा कि ऐसे ही बदी से बदी फैलती है। जितना आदमी बुराई के पीछे पडते है, वह उतनी ही बढती है। मालूम होता है बुराई, बुराई से दूर नही होगी। फिर कैसे दूर होगी, यह भी ठीक पता नही था बछड़े ने तो अपनी मालकिन का कहना मान लिया और चलो सब ठीक हुआ। पर कहना न मानता तो उसे खेत से बाहर करने का क्या उपाय था।

धर्म-पुत्र फिर सोच मे पड गया और किसी नतीजे पर नही पहुँच सका। खैर, वह बढता ही गया।

[८]

चलते-चलते गाँव मिला। गाँव पार परले किनारे उसने रात भर टिकने की जगह माँगी। घर की मालकिन अकेली थी और घर की सफाई कर रही थी उसने उसे ठहरा लिया। घर के अन्दर धर्म-पुत्र पीढे पर बैठा स्त्री को काम करते देखने लगा। वह बुहारी से फर्श झाड चुकी थी, अब चीज वस्तु झाडन से झाडने लगी। सब के बाद उस धूल भरे मैले झाडन से उसने जोर-जोर से मेज पोछना शुरू किया कई बार पोछी, पर मेज साफ नही होती थी। कपडे के मैल की लकीरे रह जाती थी। यह देख वह दूसरे सिरे से हाथ फेरकर पोछना शुरू करती। पर पहली लकीरे मिटती तो उनकी जगह दूसरी बन जाती। फिर उसने सब की सब मेज फिर दुबारा साफ की। लेकिन फिर वही बात। मैल की लकीरे अब भी मौजूद। धर्म-पुत्र कुछ देर चुपचाप देखता रहा। बोला—'माई, तुम यह क्या कर रही हो?'

'भैया, देखते हो कि मैं सफाई कर रही हूँ। त्यौहार सिर पर है। पर यह मेज साफ नही होती, मै तो थक आई।'

धर्म-पुत्र बोला—'मेज झाडने से पहले झाडन को साफ कर लो माई।'

स्त्री ने वैसे ही किया। तब मेज भी साफ चमक आई।

स्त्री ने कहा—'तुमने भली बात बतलाई, भैया तुम्हारा अहसान मानती हू।'

अगले सवेरे वहाँ से विदा ले धर्म-पुत्र अपनी राह आगे बढ लिया। काफी दूर चलने पर एक बन का किनारा आया। वहाँ देखा कि देहात के कुछ लोग लोहे की मोटी हाल लेकर उसे मोडना चाह रहे है। और पास आया तो देखता है--'कई लोग मिलकर लोहे का सिर पकड कर जोर लगा रहे है। वे घूम तो रहे है पर हाल मुडती नही।'

खडा होकर वह उन्हे देखने लगा। लोग चक्कर लगाते है, पर लोहा नही मुडता। बात यह थी कि जिस चीज मे लोहा अटका रखा था, वह चीज खुद लोगो के घूमने के साथ घूम जाती थी। वह देख धर्म-पुत्र ने कहा—'यह आप क्या कर रहे है ?'

'देखते तो हो कि हम पहिये की हाल मोड रहे है। सब कर लिया, थक कर चूर हुए जा रहे है। पर यह हाल मुडती ही नही।'

धर्म-पुत्र ने कहा—'पहले उसे तो स्थिर कर लो जहाँ हाल अटका रक्खी है। नही तो आपके घूमने के साथ वह भी घूम जायगी। यो हाल कैसे मुडेगी ?'

किसानो ने बात मान ली। वैसा किया तो काम ठीक चलने लगा।

वह रात उन लोगो के साथ बिता अगले दिन धर्म-पुत्र आगे बढा। सारा दिन और सारी रात वह चलता रहा। आखिर तडका होते उसे कुछ बनजारे मिले। वह फिर वही रह गया। बनजारे बैलो का सौदा-वौदा कर चुके थे। अब खाने की तैयारी मे आग जलाना चाह रहे थे। सूखी छिपटी और पात वगैरह इकट्ठा करके उन्होने दियासलाई दिखाई। वह जल न पाई कि ऊपर से हरी घास का ढेर रख दिया। कुछ धुआँ उठा, घास मे सिसकरी-सी हुई और आग बुझ गयी। बनजारे फिर सूखी छिपटियाँ बीन कर लाये, फिर जलाया और फिर वैसी ही गीली घास ऊपर ला रक्खी। आग फिर नही जली और बुझ गयी। इस तरह बहुत देर तक बार-बार चेष्टा करते रहे। पर आग जलती ही न थी।

उस समय धर्म-पुत्र ने कहा—'दोस्तो, घास ऊपर रखने मे जल्दी न करो। पहले सूखी लकडी ठीक तरह बल चले, तब ऊपर कुछ रखना। आग मे एक बार लहक आने दो, फिर चाहे जितनी घास ऊपर रख देना।'

बनजारो ने ऐसा ही किया। पहले आग खूब बल जाने दी, इस

तरह जरा देर मे आग लपटें दे उठी।

धर्म-पुत्र कुछ देर उनके साथ रहा, फिर अपनी राह आगे हो लिया। चलता रहा, चलता रहा। सोचता जाता था कि तीन बातें तो उसने देखी है उनका क्या मतलब हो सकता है। लेकिन उसे इसकी तह नही मिलती थी।

[९]

धर्म-पुत्र दिन भर चलता रहा। सन्ध्या समय दूसरे बडे जगल का किनारा आया। वहाँ साधु की कुटिया मिली। उस पर जाकर धर्म-पुत्र ने खटखटाया। अन्दर से आवाज ने कहा—कौन है ?

धर्म-पुत्र—'मै एक बडा पापी हूँ जिसे अपने और एक दूसरे के भी पापो का प्रायश्चित करना है।'

यह सुनकर साधु बाहर आये।

'वह पाप कौन हे जिन्हे दूसरे के लिए तुम्हे उठाना पड रहा है ?'

धर्म-पुत्र ने साधु को सब बाते सुना दी। धर्म-पिता की बात कह, रीछनी और उसके बच्चो की घटना सुनाई, मुहरबन्द कमरे और सिंहासन का हाल बताया। फिर धर्म-पिता ने जो आदेश देकर उसे भेजा था, वह कह सुनाया। रास्ते मे जो किसान बछडे का पीछा करने मे खूब खेत रौद रहे थे और कैसे फिर बछडा मालिक की पुकार पर अपने आप खेत से बाहर आ गया, यह सुनाया। अन्त मे बोला कि यह तो मै देख चुका हूँ कि बुराई का मेट बुराई से नही किया जा सकता। पर यह समझ मे नही आता कि उसे मिटाया कैसे जा सकता है। मुझे बताइये कि यह कैसे किया जाये।

साधु ने कहा —'और कुछ तुमने रास्तो मे देखा हो तो बताओ ?'

धर्म-पुत्र ने बतला दिया कि कैसे मेज साफ करती औरत देखी थी और कुछ देहाती हाल मोडते हुए मिले थे और बनजारे आग जलाना चाह रहे थे।

साधु सब सुन रहे थे। फिर कुटिया मे गये और अन्दर से एक

पुराना कुल्हाडा लेकर आये। कहा—'मेरे साथ आओ।'

कुछ दूर जाने पर साधु ने एक पेड बताया। कहा—'इसे काट डालो।' धर्म-पुत्र ने वह पेड काट गिराया।

साधु ने कहा—'अब इसके तीन टुकडे करो।' धर्म-पुत्र ने तीन टुकडे कर दिये।

इस पर साधु फिर कुटिया पर गये और वहाँ से कुछ जलती हुई लकडियाँ लाये, बोले—'इन से उन तीनो टुकडो को आग दे दो।'

धर्म-पुत्र ने आग जलाई और पेड के उन बडे-बडे तीनो टुकडो को उसमे डाल दिया। जलते-जलते उनकी जगह तीन काले कूँदे ठूँठ रह गये।

साधु ने कहा—'अब इनको धरती मे गाड दो ऐसे कि आधे धरती मे रहे, आधे ऊपर।'

धर्म-पुत्र ने वैसा ही किया।

'अब देखो, वहाँ सामने पहाडी की तलहटी मे एक नदी है। वहाँ से मुँह मे पानी भर लाओ। लाकर इन ठूँठो की जड मे सीच दो। पहले ठूँठ को सीचो, जैसे कि तुमने पहले स्त्री को सीख दी थी। दूसरे को सीचो, क्योंकि हाल मोडने वाले किसानो को उपदेश दिया था और इस तीसरे को बनजारो के नाम पर सीचे जाओ। जब इनमे जडे जम जायेगी और कील्ले फूटने लगेगे और काले ठूँठों की जगह सेब के दरख्त हो आयेगे और तब तुम भी समझ जाओगे कि आदमी मे बुराई को कैसे मेटा जाना चाहिए। तब तुम्हारे सब पाप धुल जायेगे।'

इतना कहकर साधु अपनी कुटिया मे चले गये। धर्म-पुत्र बहुत देर तक सोचता-विचारता रहा। लेकिन साधु ने बताया था वैसा ही करना उसने शुरू कर दिया।

[१०]

धर्म-पुत्र नदी पर गया, मुँह मे पानी लिया और लौट कर पहले ठूँठ मे सीच दिया। बार-बार इसी तरह मुँह मे पानी ला-लाकर वह

तीनो ठूँठो को सींचता रहा। जब उसे बहुत भूख लगी और थकान से चूर हो आया, तो कुटिया की तरफ चला कि साधु से कुछ खाने को माँग ले। इधर-उधर देखने पर उसे कुटिया मे कुछ सूखी रोटी मिल गईं। थोडा खाकर उसने भूख शान्त की और कुटी का दरवाजा खोला तो देखता है कि साधु की देह वहाँ मृत पडी हुई है। तब वह मृतक देह के कर्म के लिए लकडी जमा करने मे लगा। दिन मे यह किया, रात को मुँह मे पानी ला-लाकर ठूँठ सीचने मे लगा रहा। रात भर जब तक बना, वह ऐसा ही करता रहा।

अगले दिन पास के गाँव के कुछ लोग साधु के लिए खाना लेकर वहाँ पहुँचे। आकर देखते है कि साधु का तो शरीरान्त हो गया है। अपनी जगह वह धर्म-पुत्र को छोड गये है और उनकी आशीर्वाद भी दिया है। सो साधु की देह का क्रिया-कर्म किया और जो खाना लाये थे धर्म-पुत्र को भेट कर दिया।

धर्म-पुत्र साधु की जगह रहा। लोग जो खाने को दे जाते थे उससे गुजर करता और साधु के आदेशानुसार उसी नदी से मुँह मे पानी भर लाता और उन जले ठूँठो पर सीच देता।

इस तरह एक साल बीत गया। इस बीच बहुत लोग उसके दर्शन को आये। उसकी ख्याति दूर-दूर तक फैल गई। लोगो मे शोहरत हो गई कि एक पहुचा हुआ सन्त है जो आत्मा के उद्धार के लिए पहाडो की तलहटी की नदी से मुँह मे पानी लेकर आता है और जल से ठूँठ सीचता है। सो ठठ के ठठ लोग दर्शन करने वहाँ पहुँचने लगे। मालदार, धनी, व्यापारी लोग वहाँ आते और बहुत भेट उपहार लाते, पर वह उसमे अपने तन जितनी चीज रखता। बाकी सब गरीबो को बाँट देता।

इस तरह धर्म-पुत्र रहने लगा। आधे दिन ठूँठ मे पानी सीचना, बाकी आधा दिन आने-जाने वालो से मिलने मे जाता। वह सोचने लगा कि बुराई को मिटाने और पाप को धोने के लिए यही तरीका

शायद होगा।

एक दिन कुटिया मे बैठा था कि कोई आदमी घोडे पर सवार उधर से निकला। अपनी मौज मे वह तराने गाता हुआ चला जा रहा था। धर्म-पुत्र कुटी से बाहर आया कि कौन आदमी है। देखा कि एक अच्छा मजबूत जवान है, चुस्त कपडे है और खूब जीन-वीन से लैस एक बढिया घोडे पर सवार है।

धर्म-पुत्र ने रोककर पूछा—'तुम कौन हो जी और कहाँ जा रहे हो ?'

लगाम खीचकर उस आदमी ने कहा—'मै डाकू हू। ऐसे ही घूमा करता हूँ और जो हाथ लगता है उसे पार करता हूँ। शिकार जितने ज्यादा मिलते है उतनी खुशी के मै गीत गाता हूँ।'

धर्म-पुत्र के जी मे दहल समा गई। सोचने लगा कि ऐसे आदमी मे से बदी को कैसे मिटाया जा सकता है। जो अपने आप ही भक्ति श्रद्धा मे मेरे पास आते है उनको कहना तो आसान है और वे अपने गुनाह सहज मान लेते हैं। लेकिन यह तो अपने पाप की ही डीग मारता है।

मनमे यह सोच उसने उधर से मुँह मोड लिया। ख्याल आया कि अब मै कैसे करूँगा। यह डाकू यही आस-पास घूमता रहेगा और मेरे दर्शन को आने वाले लोग डर के मारे रुक जायेगे, आना छोड देगे। इससे उनकी भलाई भी रुक जायेगी और मैं भी भला फिर कैसे रहूँगा ?

इसलिए फिर लौटकर उसने डाकू को पुकार कर कहा—'यहाँ बहुत लोग मेरे पास आया करते है। वे पाप की डीग भरने नही आते, बल्कि पछतावे मे भरे हुए आते है। भगवान से क्षमा की प्रार्थना करते है। ईश्वर का डर हो तो तुम भी अपने पापो की क्षमा माँगो। और जो तुम्हारे दिल मे पछतावे की कमी हो तो यहाँ से चले जाओ फिर कभी इधर न आना। मुझे मत सताना और मेरे पास आने वाले

आदमियो को भी मत सताना। अगर नही मानोगे तो ईश्वर से सजा पाओगे।'

डाकू ठठा मारकर हँसने लगा। बोला—'मुझे ईश्वर का डर नही है और तुम्हारी बात की भी परवाह नही है। तुम कोई मेरे मालिक नही हो। तुम अपनी धर्माई पर रहते हो, तो मैं अपनी डकैती पर रहता हूँ। रहना सभी का है। बुढिया औरते जो पास आये उन्ही को पट्टी पढाया करो। मुझे तुमसे सीखने को कुछ नही है। और जो ईश्वर की बात तुमने कही, सो इसी नाम पर कल से रोज मैं दो ज्यादा आदमियो को जमघाट लगाऊँगा। तुम्हे भी मै मार सकता हूँ, लेकिन अभी मैं अपने हाथ खराब करना नही चाहता। पर देखना, आइन्दा मेरी राह न काटना।'

इस तरह भबकी देकर डाकू ऐड लगा अपना घोडा दौडाकर ले गया। वह फिर लौटकर नही आया और धर्म-पुत्र पहले की तरह पूरे आठ साल वहाँ शान्ति से रहता रहा।

[११]

एक रात धर्म-पुत्र अपनी कुटी मे बैठा था। ठूँठो मे पानी दे चुका था। अब जरा विश्राम का समय था। उसकी निगाह रास्ते पर लगी थी कि कोई आयेगा। वह जैसे प्रतीक्षा मे था। लेकिन उस दिन भर कोई नही आया। वह शाम तक अकेला बैठा रहा। उसका जी इकलेपन से ऊब गया। सूना-सूना लगने लगा। उसे पिछली बाते याद आने लगी। याद आया कि डाकू ने ताने से कहा था कि तुम अपनी धर्माई पर जीते हो, मै अपनी डकैती पर रहता हूँ। इस पर उसे विचार आया कि साधु ने बताया था, वैसे मैं नही रह रहा हूँ। उन्होने मुझे एक प्रायश्चित डाला था। लेकिन उसमे से तो खाने कमाने लगा हूँ और गुजर भी पाने लगा हूँ। होते-होते भक्तो के चढावे का ऐसा आदी हो गया हूँ कि जब वे नही आते तो जी ऊबता है और सूना लगता है। जब लोग आते है तो मुझे इसलिए खुशी होती है न कि

मेरी धर्माई की तारीफ करते हैं। यह तो रहने की ठीक विधि नही है। मै प्रशसा के मोह मे बहक रहा हू। अपने पुराने पाप तो क्या उतारता, और नये जोडे जा रहा हू। यहाँ से कही दूर दूसरी तरफ जङ्गल मे मुझे चले जाना चाहिए, जहाँ लोग मुझे न पा सके। वहाँ फिर मै ऐसे रहूगा कि पुराने पाप धुलते जाये और नया कोई जमा न हो।

यह मन मे धार कर थैली मे से कुछ सूखी रोटी बटोर, एक फावडा ले, धर्म-पुत्र कुटी छोड चल दिया। बराबर घाटी मे उसे एक एकात जगह की याद थी सोचा कि बस वहाँ पहुँचकर एक गुफा-सी अपने लिए खोदकर तैयार कर लूँगा और लोगो से छुटकार पाऊँगा।

अपना थैला लटकाये और फावडा लिए वह जा रहा था कि उसी की तरफ आते हुए डाकू के कदम उसे सुनाई दिये। धर्म-पुत्र को डर लग आया और वह तेज कदम बढ चला। लेकिन डाकू ने उसे पकड लिया। पूछा, 'कहाँ जा रहे हो ?'

धर्म-पुत्र ने कहा—'मैं लोगो से दूर चला जाना चाहता हू। कही ऐसी जगह रहना चाहता हूँ जहाँ कोई पास न आने पाये।

यह सुनकर डाकू को अचरज हुआ। बोला—'लोग पास नही आयेंगे तो तुम्हारा गुजारा कैसे होगा ?'

धर्म-पुत्र को यह सूझा भी नही था। डाकू की बात से याद आया कि हाँ, आमदनी तो आहार के लिए जरूरी है। बोला—'जो परमात्मा की दया हो जायेगी उसी पर बसर कर लूँगा।'

डाकू ने कुछ नही कहा और आगे बढ लिया।

धर्म-पुत्र सोचने लगा कि मैंने डाकू से अपने रङ्ग-ढङ्ग बदलने के बारे मे इस बार क्यो नही कहा। शायद अब उसे पछतावा हो। आज तो उसका रुख कुछ मुलायम मालूम होता था। अब की उसने मुझे मारने की भी धमकी नही दी।

यह सोचकर उसने डाकू को पुकार कर कहा कि सुनते हो, अभी

तुम्हे अपन गुनाहो की माफी माँगनी चाहिए, ईश्वर से तो बच नही सकते ।

यह सुनकर डाकू ने घोडा मोड पेटी मे से खजर निकाला और धर्म-पुत्र को मारने को हुआ धर्म-पुत्र यह देखकर चौका और सहमा हुआ सीधा अन्दर जङ्गल मे बढ गया ।

डाकू ने उमका पीछा नही किया । बस जोर से सुनाकर कहा— 'दो बार मैं तुम्हे छोड चुका हूँ । अगली बार जो कही तुमने टोका, तो तुम्हारी खैर नही है, यह समझ लेना ।'

यह कहकर डाकू अपने रास्ते हो लिया ।

उस शाम धर्म-पुत्र ठूँठ मे पानी देने जो पहुँचता है कि क्या देखता है कि उनमे से एक ठूँठ कल्ले दे रहा है और उसमे से नन्हे सेब की कोपलें निकल चली है ।

[१२]

सबसे अपने को छिपाकर धर्म-पुत्र बिलकुल अकेला रहने लगा । रोटी खत्म हो गई तो उसने सोचा कि चलूँ, खाने को कोई कुछ कन्द-मूल देखूँ । यह सोचकर कुछ दूर चला था कि देखता क्या है कि एक पेड की टहनी पर अँगोछे मे बँधी रोटियाँ लटकी हुई है । उसने वे रोटियाँ ले ली और जब तक बना उन पर गुजारा करता रहा ।

वे खतम हो गईं तो उसी पेड पर दुबारा वैसे ही अँगोछा लटका मिला । इस तरह उसका गुजारा होता रहा । बस अब कुछ बात थी तो डाकू का डर बाकी था । आस-पास कही आते-जाते उसकी आहट सुनता तो सहम कर दुबका रहता था सोचता कि कही ऐसा न हो कि मैं अपने पाप धो न पाऊँ, उस से पहले ही डाकू मुझे मार दे ।

इस तरह दस साल और बीत गये । एक तो उनमे सेब का पेड होकर हरिया गया था, लेकिन और दो ठूँठ के ठूँठ रहे । एक सवेरे धर्म-पुत्र जल्दी उठा और काम पर पहुँचा । ठूँठ की जमीन को मुँह के पानी से काफी गीली करते उसे खूब मेहनत पडी । आखिर थककर

वह आराम करने लगा। बैठे-बैठे सोचने लगा। सोचा कि मैंने पाप किया है, इससे मै मौत से डरता हू। ईश्वर की मर्जी कौन जानता है। हो सकता है कि मौत से ही मेरे पाप धुलने वाले हो। तब उसका भी स्वागत किये बिना मै कैसे रह सकता हू।

यह ख्याल करके मनमे आया ही था कि उधर से घोडे पर सवार जाने किसे गाली देता हुआ डाकू उस तरफ ही आता मालूम हुआ। धर्म-पुत्र ने सोचा कि सिवा ईश्वर के किसी और से मेरा कुछ बन बिगड क्या सकता है। यह सोचकर वह आगे बढकर डाकू को मिला। देखता है कि डाकू अकेला नही है। पीछे घोड़े से एक आदमी बँधा है। मुँह उसका बन्द है और हाथ पैर कसे हुए है। वह आदमी कुछ नही कह रहा है। पर डाकू उसे मन आई गाली दिये जा रहा है।

धर्म-पुत्र बढता हुआ जाकर घोडे के सामने खडा हो गया। पूछा—'इस आदमी को कहाँ ले जा रहे हो?'

डाकू ने जवाब दिया—'जङ्गल के अन्दर लिये जा रहा हूँ। यह एक मालदार बनिये का बेटा है, पर बताता नही है कि बाप का माल कहाँ छिपा है। सो कोडो से इसकी खबर लूँगा तब बतायेगा।'

यह कहकर वह घोडे को ऐड लगाने को हुआ कि धर्म-पुत्र ने घोडे की रास पकड ली और जाने नही दिया। कहा—'इस आदमी को छोड़ दो।'

डाकू को गुस्सा चढ आया और उसने मारने को हाथ उठाया—

'क्या तुम भी कुछ मजा चखना चाहते हो? जो इस आदमी को मार मिलेगी, वह तुम भी चाहो तो वैसे कहो। मैं कह चुका हू कि ज्यादा करोगे तो मेरे हाथ से जान खोओगे। सुना? अब रास छोडो।'

लेकिन धर्म-पुत्र डरा नही। बोला—'तुम जा नही पाओगे। मुझे तुम्हारा डर नही है। बस एक ईश्वर का मुझे डर है। उसका हुक्म है कि मैं तुम्हे न जाने दूँ। इस आदमी को छोड़ दो।'

डाकू को गुस्सा तो आया, लेकिन उसने चाकू निकाल कर उस आदमी के बन्धन काट दिये और उसे आजाद कर दिया। फिर बोला—अब जाओ, तुम दोनो चले जाओ। और खबरदार, जो फिर मेरी राह आगे आये।'

वह वैश्य पुत्र तो घोडे की पीठ से खिसक चट भाग गया। डाकू भी घोडे पर सवार हो चलने को था कि धर्म-पुत्र ने फिर उसे रोका और कहा कि देखो अपनी इस बदी से बाज आओ। लेकिन डाकू सब चुपचाप सुनता रहा। आखिर बिना बोले वह चला गया।

अगले दिन धर्म पुत्र फिर ठूंठ मे पानी देने गया। और अचरज की बात देखो कि दूसरा ठूंठ भी हरा हो रहा था। उसमे भी सेब के पेड की कोपले फूटने लगी थी।

दस साल और बीते। धर्म-पुत्र एक दिन शान्ति से बैठा था। न कोई कामना थी, न आशका। प्रसन्नता से मन भर आता था।

सोचा—'ईश्वर ने आदमी को कैसी-कैसी न्यामते बख्शी है। फिर भी नाहक वह कैसा हैरान रहता है। क्यो वह खुश नही रहता। क्या उसे अडचन है '

फिर आदमी खुद जो अपने लिए मुसीबत पैदा करता और बुराई के बीज बोता है, उसके फल याद कर धर्म-पुत्र का जी भर आया। उसने सोचा कि जैसा मैं रहा हूँ वैसे ही रहते जाना गलत है। मुझे चाहिए कि जो सीखा है, चलूं और वह औरो को भी सिखाऊँ। जो पाता हूँ सबको दूं।

यह विचार मन मे आना था कि डाकू के घोडे की टाप उसे सुन पडी। लेकिन वह उसे रोकने नही बढा। सोचा कि उसे कहने-सुनने से क्या फायदा है। वह कुछ समझ नही सकता।

पहले तो यह विचार आया, फिर मन बदल गया और धर्म-पुत्र बढकर सडक पर आ पहुँचा। आते हुए डाकू को देखा कि वह उदास है, आँखे उसकी झुकी है। धर्म-पुत्र को देखकर दया आई और पास

पहुँचकर उसकी रानो पर हाथ रखकर उसने कहा—'भाई' अपने आप पर रहम करो। तुम्हारे अन्दर ईश्वर का वास है। तुम तकलीफ पाते हो इसी से औरो को सताते हो। नतीजा यह कि आगे के लिए और तकलीफ जमा करते जा रहे हो। लेकिन ईश्वर तुम्हे प्यार करता है और तुम्हे अपनाने को सदा तैयार है। देखो, अपने को बिल्कुल बरबाद न करो। अभी बदल सकते हो।'

पर डाकू नाराज होकर अपनी राह चलने को हुआ। बोला—'अपने काम से काम देखो।'

धर्म-पुत्र ने डाकू को और कसके पकड लिया और उसकी आँखो से तार-तार आँसू गिरने लगे।'

डाकू ने इस पर आँख उठाकर धर्म-पुत्र की तरफ देखा। जाने कैसे और कितनी देर देखता रहा। फिर एकाएक घोडे से नीचे उतर धर्म-पुत्र के चरणो मे घुटनो आ बैठा।

बोला—'तुमने आखिर मुझे जीत लिया, भाई बीस साल तक मैं अडा रहा, लेकिन आखिर तुमने मुझे जीत ही लिया। अब जो चाहो मेरा करो, मैं तुम्हारे हाथ हूँ और बेबस हूँ। जब तुमने मुझे सीख देने की कोशिश की, उससे मुझे और गुस्सा चढ आता था। पर तुम जब लोगो से अपने आपको दूर ले गये तब मुझे तुम्हारे शब्दो पर ख्याल हुआ। क्योंकि तब मैंने देखा कि उन लोगो से तुम्हे अपनी कोई गरज नही है। उसी दिन के बाद से मैं तुम्हे खाना पहुँचाने लगा। मैं ही पेड पर अँगोछा बाँध जाया करता था।'

धर्म-पुत्र को याद आई वही पुरानी बात। उस स्त्री की मेज तभी साफ झड सकी थी, जब पहले झाड़न को साफ कर लिया गया था। इसी तरह सब कोई अपनी परवाह और गरज छोडकर अपने दिल को साफ कर लेगा तभी वह दूसरो के दिल की सफाई कर सकेगा।

डाकू आगे बोला—'जब मैंने देखा कि तुम्हे मौत का डर नही है, उस समय से मेरा दिल भी बदल चला।'

और धर्म-पुत्र को याद आई वह हाल मोडने की घटना। जब तक एक जगह लोहे का सिरा किसी स्थिर चीज मे नही अटका दिया गया कि हाल नही मुडी। ऐसे ही जब तक मौत का डर दूर कर जीवन को ईश निष्ठा मे स्थिर नहीं कर लिया, तब तक इस आदमी के अक्खड मन पर काबू पाना भी नही हो सका।

डाकू ने कहा—'लेकिन मेरा मन तब तो पिघल कर पानी-पानी हो आया जब करुणा के मारे तुम्हारी आँखों से अपने लिए मैंने आँसू ढरते देखे।'

धर्म-पुत्र सत्य की यह महिमा सुनकर मग्न हो आया। फिर वह अपने ठूँठो के पास गया और डाकू को भी साथ ले गया। जाकर दोनो देखते है तो तीसरे ठूँठ मे भी सेव का कल्ला फूट गया है और हरी झाँकी दे रहा है। उस समय धर्म-पुत्र को याद आया कि बनजारो की घास तब तक आग न पकड सकी थी जब तक पहले छिपटियाँ अच्छी तरह न सुलग लेने दी गई थी। इसी तरह जब इसका अपना दिल सहानुभूति की गरमी से जलने जैसा हो गया था तभी वह दूसरे के दिल को अपनी लौ से जगा भी सका, पहले नही।

और धर्म-पुत्र ने इस भाँति प्रकाश पाने और अपने पापो के क्षय हो जाने पर बहुत आभार और आनन्द माना।

फिर उसने डाकू को अपनी सारी जीवन-कथा कह सुनाई। इस प्रकार अपना सब धर्म उसे भेट करने के अनन्तर धर्म-पुत्र ने शरीर छोड दिया। डाकू ने उसकी देह की अत्येष्टि की और धर्म-पुत्र के कहे अनुसार ही रहने लगा। धर्म-पुत्र से जो उसने पाया था, सब कही उसी का वितरण करने मे वह लग गया। ●

: ८ :

देर हो अन्धेर नहीं

पाटनपुर नगर मे हरजीतराय नाम का एक व्यापारी था। उसकी दो दुकाने थी और रहने का अपना निज का घर। हरजीत जवान था स्वस्थ शरीर, बाल घुँघराले, हँसता चेहरा, विनोदी स्वभाव का था और गाने का उसे शौक था। उमर पर उसे शराब का चस्का भी लगा था और पैसा होने पर उसे रगरेली सूझती थी। लेकिन शादी हो गई तो उसकी आदत धीमे-धीमे बदल गई। खास मौको की बात दूसरी, नही तो शराब उसने अब छोड दी थी।

एक बार वह कातकी के मेले मे जा रहा था। जाने लगा तो पत्नी से विदा ले रहा था कि बोली, देखो, आज न जाओ, मुझे बुरा सपना दीखा है।

हरजीत हँस दिया। बोला, 'मैं जानता हूं कि तुमको यह डर है कि मैं मेले मे गया तो बहक जाऊँगा और पैसा बरबाद करके आ जाऊंगा। यही न ?'

बीबी ने कहा, 'ठीक मालूम नही कि यही डर है कि दूसरा है। लेकिन मुझे बुरा सपना दीखा है। सपने मे दीखा कि जब तुम लौटे और टोपी उतारी तो सारे बाल तुम्हारे सफेद-फक पडे हुए है।'

हरजीत और भी हँसा। बोला, 'यह तो और अच्छे भाग्य का सपना है। देख लेना कि इसका फल होगा कि मै जितना माल ले

जाता हू, वह सब बिक जायेगा और तुम्हारे लिए तरह-तरह की सौगात लेकर लौटूँगा ।'

इस भाँति उसके परिवार से राजी-खुशी विदा ली और चल दिया ।

आधे पड़ाव चलने पर उसे अपनी जान-पहचान का एक और व्यापारी मिला । वे दोनो एक साथ सराय मे ठहरे । साथ ही खाया पिया और फिर पास-पास के कमरो मे सोने चले गये ।

सवेरे देर तक सोने की हरजीत को आदत नही थी और ठण्ड-ठण्ड मे रास्ता चलना भी आसान होता है, इसलिए तडका फूटने से पहले उसने गाडीवान को जगाया । कहा कि गाडी जोतो और चलो ।

यह कहकर वह सराय के मालिक के पास गया जो वही पिछवाडे रहता था । सराय वाले का लेना चुकाया, उसे धन्यवाद दिया और हरजीत अपने सफर पर आगे बढा ।

कोई दसेक कोस चलने पर उसने बैल खोले कि कुछ खिला-पिला दे । खुद भी जरा आराम किया । सुस्ताने के बाद फिर सराय वाले को चाय के लिए कह कर अपनी बसरी निकाल बजाने लगा ।

तभी एक इक्का आकर वहाँ रुका । इक्का सजा-धजा था और घोडे के गले मे घण्टी बज रही थी । उसमे से एक अफसर उतरे, पीछे दो सिपाही । आकर अफसर ने हरजीत से सवाल पूछने शुरू किये कि तुम कौन हो, कहाँ से आये हो ?

हरजीत ने सवालो का माकूल जवाब दिया और कहा—'आइये, चाय मे मेरा साथ दीजिए ?'

लेकिन अफसर निमन्त्रण को अनसुना करके अपनी जिरह पर कायम रहे, पिछली रात तुम कहाँ थे ? अकेले थे या और कोई व्यापारी साथ था । आज सवेरे वह दूसरा आदमी तुम्हे मिला ? अँधेरे तडके तुम सराय से क्यो चल दिये ?' इत्यादि—

हरजीत अचरज मे था कि वे सब प्रश्न उससे क्यो किये जा रहे

है ? तो भी जैसा था, वह सब बताता चला गया। फिर उसने कहा, 'आप तो मुझ से इस तरह सवाल-पर-सावल पूछ रहे है, जैसे मैं कोई चोर-डाकू हू। अपने काम से जा रहा हू, मुझसे ऐसे सवाल पूछने की जरूरत नही है।'

अफसर ने इस पर साथ के सिपाहियो को पास बुला लिया। कहा, मैं इस जिले का पुलिस अफसर हूँ। सवाल मैं इसलिए पूछता हूँ जिसके साथ तुम कल रात ठहरे थे, उसका आज गला कटा हुआ पाया गया है। अब हम तुम्हारी तलाशी लेगे।'

इस पर वे तीनो कमरे मे आ गये और अफमर सिपाही सबने मिलकर हरजीत का सामान खोलना शुरू कर दिया और सबने आश्चर्य से देखा कि सामान मे एक छुरा भी मौजूद है।

अफसर ने कहा—'यह किसका है ?'

हरजीत देखता रह गया। खून से दागी उस छुरे को अपने सामान मे से निकालते देख कर वह अचकचा गया। वह एक दम डर गया।

'इस चाकू पर खून के निशान कैसे है ?'

हरजीत ने जबाब देने की कोशिश की। लेकिन शब्द उसके मुँह से ठीक नही निकले। लडखडाती आवाज मे कहा, 'मैं—मेरा नही—मैं नही जानता।'

पुलिस अफसर ने कहा, इसी सवेरे अपने बिस्तरे पर वह व्यापारी मरा पाया गया है। किसी ने उस का गला काट दिया है। एक तुम्हीं हो सकते हो जिसने कि यह काम किया हो। मकान अन्दर से बन्द था और तुम्हारे सिवाय वहाँ कोई न था। फिर तुम्हारे सामान मे से यह छुरा भी निकला है। इस पर खून के निशान तक मौजूद हैं। तिस पर तुम्हारा चेहरा और तरीका भी भेद खोले दे रहा है। इसलिए सच कहो कि तुमने उसे कैसे मारा और कितना रुपया तुम्हारे हाथ लगा ?'

हरजीत ने शपथपूर्वक कहा, 'यह मेरा काम नही है। शाम को साथ व्यालू करने के बाद मैंने उस व्यापारी को देखा तक नही। मेरे पास अपने पाँच हजार रुपयो के अलावा और कुछ नही है। यह चाकू मेरा नही है।'

लेकिन यह कहते हुए उसकी जबान लडखडाती थी, चेहरा पीला था और डर से वह ऐसा काँप रहा था कि मुजरिम ही हो।

पुलिस अफसर ने सिपाहियो को हुक्म दिया कि इसको बाँधकर गाडी मे ले चलो।

सिपाहियो ने हाथ-पैर बाँधकर उसे गाडी मे पटक दिया। हरजीत के आँसू आ गये और उसने प्रार्थना की शरण ली। उसके पास न माल रहा न रकम। सब छीनकर उसे नजदीक कस्बे की हवालात मे बन्द होने भेज दिया गया। पाटनपुर मे उसकी बाबत पूछताछ हुई कि वह कैसे चाल-चलन का आदमी है। वहाँ के व्यापारियो ने और दूसरे लोगो ने बताया कि पहले तो वह पिया करता था, वक्त मौज मे गँवाता था। लेकिन आदमी वह भला है और इधर आकर राह-रास्ते पर आ निकला। खैर, मुकदमा चला और अजबपुर के एक व्यापारी की हत्या करने और उसके आठ हजार रुपये चुराने का आरोप उसके सिर लगा।

हरजीत की स्त्री सुनकर शोक मे बेसुध सी हो गई। उसे समझ न पडा कि कैसे वह अपने कानो पर विश्वास करे। बच्चे उसके सब छोटे थे। एक तो दूध पीती बच्ची थी। सबको साथ ले वह शहर गई, वहाँ उसका पति जेल मे था। पहले तो उसे इजाजत न मिली। बहुत उनहार करने और कोशिश करने से आखिर उन्हें इजाजत मिली और पति के पास ले जाई गई। जेल के कपडो और बेडियो में चोर-डाकुओं के साथ बन्द जब उसने अपने पति को देखा तो वह सह न सकी और धडाम से गिरी। काफी देर बाद उसे होश आया। तब उसने बच्चे को गोद मे खीच पति के पास बैठकर घर-बार की बातचीत शुरू

की। उसने पूछा कि यह क्या हुआ ?

हरजीत ने जो हुआ था सब बतला दिया ?

पूछने लगी—'अब क्या करना चाहिए ?'

'राजा के पास अर्जी भेजनी चाहिए कि एक निरपराध आदमी की मौत से रक्षा की जाये।'

स्त्री ने कहा, 'अर्जी तो भेजी थी। लेकिन वह मजूर नही हुई।'

हरजीत इसका जवाब नही दे सका। आँखे नीची डाल कर देखता रहा।

स्त्री ने कहा, 'सुनते हो, सपना वह मेरा बेमतलब नही था कि मैने एक दम तुम्हारे बाल सफेद देखे थे। याद है ? उस रोज तुम्हे चलना नही चाहिए था। लेकिन—'

आगे वह खुद कुछ न कह सकी। फिर पति के बालो मे उँगली फेरती हुई बोली, 'मेरे स्वामी, अपनी स्त्री से देखो, झूठ न कहना। सच कहना – तुमने हत्या नही की ?'

'ओह, तो तुम भी मुझ पर सदेह करती हो !' कहकर हाथो में मुँह को छिपा हरजीत फूट-फूट कर रोने लगा।

उस वक्त सिपाही ने आकर कहा कि मुलाकात का वक्त पूरा हो गया, अब चलो।

स्त्री, बच्चे चल दिये और हरजीत ने आखिरी बार अपने परिवार को हसरत भरी निगाह से देखकर विदा किया।

उनके चले जाने पर हरजीत को ध्यान हुआ कि सब तरफ क्या-क्या कहा जा रहा है। और तो और, स्त्री तक ने उस पर शुबाह किया। यह जानकर उसने मन मे धार लिया कि ईश्वर ही बस सचाई जानता है। उसी से अब तो प्रार्थना करनी चाहिए। उसी से दया की आशा रखनी चाहिए और कुछ नही, यह सोच हरजीत ने और कोई दरख्वास्त नही की। आशा अभिलाषा उसने छोड दी और ईश्वर की प्रार्थना मे लीन रहने लगा।

उसे कोडो की और डामुल की सजा मिली सो पहले उसे भीगे बेत से कोडे लगे। जब उसके जख्म भर आये तो और कैदियो के साथ उसे डामुल भेज दिया गया।

छब्बीस बरस वह वहाँ काले पानी मे कैद रहा। इस बीच बाल उसके रुई से सफेद हो गये। मैले सनके-से रग की दाढी बढ आई। हँसी खुशी उसकी उड गई। कमर झुक आई। अब धीमे चलता था, थोडा बोलता था और हँसता कभी न था। अक्सर प्रार्थना मे रहता था और कही उसे आस न थी।

जेल मे उसने जूता गाँठना सीख लिया था। उसमे कुछ पैसो की बचत भी हो गई थी। उन पैसो से उसने 'सन्तो का जीवन' नाम की किताब मँगा ली थी। जेल मे पढने लायक चाँदना रहता कि वह उस किताब को पढने लगता और पढता रहता। इतवार के दिन वह भजन-पद गाकर सुनाता। उसकी आवाज अब भी खासी थी और बडी भाव-भक्ति के साथ वह पद कहता था।

जेल-अफसर हरजीत को चाहते थे। वह सीधा, नेक और विनयी था। और कैदी भी उसकी इज्जत करते थे। वे उसे दादा, या 'भगवती' कहा करते। दरख्वास्त करनी होती या कुछ कहना-सुनना होता तो हरजीत को ही अपना मुखिया बनाते थे और जब आपस में झगडा होता, तब भी उसी के पास आकर निपटारा और फैसला माँगते थे।

घर की हरजीत को कोई खबर नही मिली। उसे पता नही था कि उसके बीवी-बच्चे जीते भी हैं या नही।

एक दिन उनकी जेल मे कैदियो की एक नई टुकडी आई। सो शाम को पुराने कैदी नये वालो के आस-पास जमा हो बैठे। पूछने लगे कि कहाँ-कहा से आये हो? और किस-किस जुर्म की सजाये है? इत्यादि। इन्ही सब के बीच हरजीत भी था वह आने वालो के पास बैठा था और निगाह नीची डाले, जो कहा जाता, सुन रहा था।

नये कैदियो मे से एक आदमी अपना किस्सा बयान कर रहा था। वह लम्बा, तगडा कोई साठ बरस का आदमी था। दाढी उसकी बारीक छँटी थी। मजे मे आपबीती कह रहा था—

'दोस्तो, मै बताता हूँ। बात यह है कि मैने गाडी मे से खोलकर एक घोडा ले लिया। सो उसके लिए मैं पकडा गया और चोरी का इल्जाम लगा। मैंने कहा कि वाह, मैंने घर आने के लिए घोडा खोला था ताकि जल्दी पहुच जाऊँ। घर आकर मैंने उसे पास नही रक्खा, खुला छोड दिया। तिस पर वह गाडी वाला आदमी मेरा दोस्त था। इसलिए मैंने अदालत मे कहा, 'इसमे कोई बुराई नही है।'

उन्होने कहा, 'चुप रहो, तुमने चोरी की है।'

'लेकिन कहाँ और कैसे चोरी की है, यह वह साबित न कर सके। एक बार हाँ, मैंने सचमुच जुर्म किया था। उस जुर्म का किसी को पता ही न चला और मैं नही पकडा गया। और अब यहाँ आया तो एक न कुछ बात के लिए " लेकिन दोस्तो, मैं झूठ बकता हूँ। मैं यहाँ पहले भी आ चुका हूँ। लेकिन ज्यादा दिन नही ठहरा।'

एक ने पूछा—'हो कहाँ के ?'

'पाटनपुर मेरा गाँव है। वतन मेरा वही है। नाम बलवन्त। वैसे मुझे बल्ली-बल्ली कहते है।'

हरजीत ने पाटनपुर का नाम सुन कर सिर उठाया। पूछा, 'तुम पाटनपुर के राय घराने के लोगो को जानते हो ? उनका क्या हाल है ? क्या उनमे कोई अभी जीता है ?'

बलवन्त हँस दिया, बोला—'हरजीत की बहू मर गई। दोनों लड़कियाँ अभी जिन्दी हैं पर शादी उन्होने की नहीं। वे मालदार लोग हैं, उनका बाप यही-कही डामुल मे हम चोर डाकुओं की तरह कैद है। लेकिन दादा, तुम यहाँ कैसे आये ?'

हरजीत को अपने दुर्भाग्य की कथा कहना नही रुचा। उसने लम्बी साँस ली। बोला, 'छब्बीस साल से यही अपने पाप की सजा

काट रहा हूँ ।'

बलबन्त ने कहा, 'पाप क्या ?'

हरजीत ने कहा, 'अँह, छोडो भी, कुछ तो किया ही होगा ।'

हरजीत और कुछ न कहता लेकिन साथियो ने बल्ली को बताया कि हरजीत क्योकर यहाँ जेल मे पहुँचे। किसी हत्यारे ने एक सौदागर की हत्या की और चाकू इनके सामान मे छिपा दिया। इस तरह बेकसूर इन्हे सजा मिली।

यह सुनकर बलवन्त हरजीतराय की तरफ देख उठा। फिर घुटनो पर हाथ मार कर बोला कि 'यह खूब रही! वाह, यह एक ही रही! लेकिन दादा, तुम बढ कितने गये हो ?'

और लोग पूछने लगे कि तुमको इनके बारे मे अचम्भा क्यो हो रहा है जी ? क्या तुमने पहले इनको देखा था ? कहाँ देखा ?

लेकिन बल्ली ने जवाब नही दिया। उसने सिर्फ यही कहा कि दोस्ती है, सजोग की बात है कि हम लोग यहाँ आकर मिले!

इन शब्दो से हरजीत को भी आश्चर्य हुआ। मन मे उसके गुमान हुआ कि यह आदमी जानता है कि किसने उस व्यापारी को मारा था। पूछा, 'बलवन्त', शायद तुमने उस मामले के बावत सुना होगा। हाँ, हो सकता है कि तुमने मुझे पहले भी देखा हो।'

'सुनता कैसे नही ? दुनिया बातो से भरी है। कान किसी के बन्द थोडे ही रह सकते है। लेकिन एक मुद्दत हुई। अब क्या याद कि मैंने क्या सुना था ?'

हरजीत ने पूछा कि 'शायद तुमने सुना हो कि किसने व्यापारी का खून किया ?'

बलवन्त इस पर हँसने लगा। बोला, 'क्यो, जिसके सामान मे छुरा निकला वही तो हत्यारा, अगर किसी और ने वहाँ रख दिया तो वह जब तक पकडा न जाये मुजरिम कैसा ? तिस पर दूसरा कोई तुम्हारे थैले मे चाकू रख कैसे सकता था, जबकि थैला तुम्हारे सिर के

नीचे था। ऐसे तुम जाग न जाते।'

हरजीत को यह सुनकर पक्का हो गया कि इसी आदमी ने वह हत्या की होगी। इस पर उसका जी खराब हो आया और वह उठकर वहाँ से चला गया।

सारी रात वह जागता रहा। उसको बहुत कष्ट था। कल पल को न थी। तरह-तरह की तस्वीरे उस के मन मे आती थी, स्त्री का चेहरा आया, जब वह मेले मे जाने के लिए उससे विदा ले रहा था। उसे ऐसा मालूम हुआ जैसे वह सामने जीती जागती मौजूद हो ऐसी प्रत्यक्ष कि उसे छू सकता हो। मानो उसकी हँसी की आवाज और बातचीत का एक-एक शब्द सुन पाता हो। फिर उसके मन मे बच्चो की तस्वीरे आईं। फूल से बच्चे। एक बडे से चोगे मे दुबका था। दूसरा माँ का दूध पी रहा था। अनन्तर वह खुद अपने को देखने लगा, जैसा कि हुआ करता था। जवान, खुश और तन्दुरुस्त और खूबसूरत। उसे याद आया कि सराय मे कैसा मगन वह बशी बजा रहा था। चिन्ता की रेख छू नही गई थी कि तभी पकड लिया गया। वह फिर जगह और दृश्य याद आये जहाँ कोडे लगे थे। अफसर लोग और कुछ कैदी इर्द-गिर्द खडे थे। इसके बाद इन जेल के २६ बरसो का समूचा जीवन उसकी आँखो के आगे फिर गया। वहाँ की मुसीबते, कुसग, बेडियाँ और समय से पहले उस पर आ उतरा बुढापा। इन सबको याद कर उसका जी भारी हो आया। उसे बडी व्यथा हुई, ऐसी कि मौत माँगने की इच्छा हुई।

'और यह सब उस दुष्ट के कर्म है।' हरजीत सोचने लगा। उस बलवन्त के खिलाफ उसे बडा गुस्सा आया। मन मे होने लगा कि चाहे मारना पडे, पर उस बदमाश को फल देना चाहिए। वह रात भर प्रार्थना करता रहा, पर उसे शान्ति नही मिली। दिन में वह बलवन्त के पास से बचता रहा ऊपर नजर तक नही उठाई।

इस तरह दो हफ्ते निकल गये। हरजीत सो न सकता था, उसे

इतना त्रास था। समझ में नही आता था कि क्या करूँ, क्या न करूँ ?

एक रात जेल मे घूम रहा था कि उसे पास कही से मिट्टी गिरती हुई मालूम हुई। वह रुका कि देखे क्या है। इतने मे देखता है कि एक तरफ दीवार के नीचे से बलवन्त का मुँह उझक आया है। हरजीत को देखकर बलवन्त का चेहरा डर से राख हो गया। हरजीत ने चाहा कि इस बात को दरगुजर कर दे। पर बलवन्त ने बाहर निकल कर उसको हाथ से पकड लिया। कहा कि मैने कोठरी मे से रास्ता खोद डाला है। रोज मिट्टी को जूतो मे रखकर काम पर बाहर जाने के वक्त इधर-उधर फेक आया करता था। लेकिन अब तुम चुप रहो। हल्ला मत करना। चलो, तुम भी मेरे साथ निकल चलो और अगर तुमने कुछ आवाज की तो मुझे पकडकर, चाहे मार-मार कर वे फिर मेरी जान ही निकाल ले, लेकिन तुम्हे तो पहले ही खत्म कर दूँगा।

हरजीत अपने दुश्मन को देखकर गुस्से से काँपने लगा। उसने अपना हाथ झटक कर अलग कर लिया। कहा—'मैं भागना नही चाहता और तुम अब क्या मुझे खत्म करोगे ? पहले ही सब कर चुके हो। और तुम्हारी खबर देने की जो बात हो—तो मै नही जानता। जो परमात्मा करेगा होगा।'

अगले दिन जब कैदी बाहर काम पर गये तो वार्डरो ने देखा कि एक जगह मिट्टी का ढेर सा हो रहा है। किसी कैदी ने ही ला-लाकर डाली होगी, और कौन डालता ? जेल मे तलाश किया तो उस चोर-रास्ते का भी पता लग गया। जेल सुपरिण्टेण्डेण्ट आये और सब से पूछा कि किसकी यह करतूत है सब ने इन्कार कर दिया कि हमे पता नही। जो जानते थे उन्होने भी भेद नही दिया, क्योकि बता देते तो बलवन्त की जान की खैर न थी। आखिर सुपरिण्टेण्डेण्ट ने हरजीत से पूछा। सुपरिण्टेण्डेण्ट भी उसका मान करते थे और मानते थे कि

हरजीत सत्यवादी है।

'हरजीत! तुम सच्चे और नेक आदमी हो। ईश्वर से डरते हो। सच बताओ कि यह काम किसका है?'

बलवन्त ऐसा बना रहा कोई मतलब न हो। सुपरिण्टेण्डेण्ट पर उसने आँख लगा रक्खी और भूले भी हरजीत की तरफ नही देखा। साहब के सवाल पर हरजीत के पाँव काँपने लगे और होठ भी काँपे। बहुत देर तक एक शब्द भी उसके मुँह से न निकला। एक बेर सोचा कि उसने मेरी जिन्दगी बरबाद कर दी, उसे मै ही किस लिए बचाऊँ? मैंने कितना दु ख उठाया! अब मिलने दूँ उसे बदला। लेकिन फिर ख्याल हुआ कि मैं कह दूँगा तो जेल वाले इसकी जान के गाहक हो जावेगे। तिस पर क्या पता कि मेरा शक ही हो और बात सच न हो। जो हुआ सो हुआ, अब उसकी तकलीफ से क्या हाथ आने वाला है?

सुपरिण्टेण्डेण्ट ने दुहरा कर पूँछा, 'सुनते हो न हरजीत? तुम पाप से डरते हो। सच बताओ, दीवार मे छेद किसने किया?'

हरजीत ने बलवन्त की तरफ देखा। फिर कहा, 'मैं नही बता सकता हुजूर! ईश्वर की आज्ञा नही है कि मै बताऊँ। इसके लिए मेरा जो चाहो कीजिए, मैं आपके हाथ मे हूँ।'

साहब ने और जेल-दरोगा ने बहुतेरी कोशिश की। लेकिन हरजीत ने आगे कुछ नही कहा। अब क्या होता? सो मामले को वही छोड देना पडा।

उस रात जब हरजीत अपने विस्तर पर पडा था और आँखो मे नींद उतर चली थी कि कोई दबे पाँव आया और हरजीत के पास बैठ गया। अँधेरे मे भेद कर हरजीत ने पहचाना तो वह था, बलवन्त।

हरजीत बोला, 'अरे और तुम मेरा क्या करना चाहते हो? तुम यहाँ क्यों आये हो? क्या जी नही भरा?

बलवन्त चुप सुनता रहा। हरजीत उठ कर बैठ गया और

बोला, 'क्या है तुम्हारी मन्शा ? बुलाऊँ पहरेदार ?'

बलवन्त हरजीत के कदमो मे झुका जाने लगा। धीरे से बोला, 'हरजीत भाई, मुझे माफ कर दो।'

'माफ किस लिए ?'

'मै गुनहगार हू। मैंने ही उस व्यापारी को मारा था और छुरा तुम्हारे सामान मे रख दिया था। मै तुम्हे भी मारना चाहता था, लेकिन बाहर शोर सुन, छुरा तुम्हारे सामान मे दुबका, खिडकी की राह से भाग गया था।'

हरजीत चुप था। उसे कुछ भी बोल न सूझा। 'हरजीत भाई, मुझे माफ कर दो मै सब इकबाल कर लूंगा। कहूँगा मैं हत्यारा हू। तब तुम छूट जाओगे और घर जा सकोगे। हरजीत! देखो मै तुम्हारे पैरो पडता हूँ।'

हरजीत ने कहा, 'बलवन्त, अब मैं क्या कहूँ। कहना तो आसान है। पर यह छब्बीस बरस जाने मैं क्या-क्या सहता रहा हूँ और सब तुम्हारी वजह से। लेकिन अब मैं कहाँ जाऊँगा। मेरी स्त्री स्वर्ग गई, बच्चे मुझे भूल चुके। कौन मुझे पहचानेगा ? बलवन्त अब मेरे पास जाने की कोई जगह नही है।'

बलवन्त धरती पर से उठा नहीं, वहीं फर्श पर अपना सिर पटक कर पीटने लगा।

'हरजीत मुझे माफ करो। मुझे बेत से पीटा तब, तब इतनी तकलीफ नही हुई। जितनी अब तुम्हे देख कर होती है। मुझसे रहा नही जाता, मै तुम्हे सताता गया, तुम मुझे बचाते गये। हरजीत! हाहा खाता हूँ। परमात्मा के लिए मुझे क्षमा करो। मैं बड़ा अधम हूँ, पापी हूँ।'

बलवन्त को सुबकी भर-भर कर रोते हुए सुना तो हरजीत भी रो आया। बोला—'हे ईश्वर! तुमसे सौ गुणा अधम क्या मैं नही हूँ।'

यह कहते-कहते उसके अन्दर जैसे एक प्रकाश का उदय हो आया। सब चाह जैसे उसको मिट गई। घर जाने की अभिलाषा और कलख भी उसे अब नही रह गई। जेल से रिहाई की जरूरत उसमे न रही। बस, ईश्वर की आखरी घडी अब आये, यही आस उसे शेष रह गई।

हरजीत ने कितना ही कहा, लेकिन बलवन्त अपने जुर्म का इकबाल करके ही माना। पर हरजीत के जेल से छुटकारे का हुक्म आया कि वह तो देह से ही छुटकारा पा चुका था। ●

: ९ :

तीन जोगी

एक धर्माचार्य जहाज पर कलकत्ते से जगन्नाथ धाम की यात्रा को जा रहे थे। उस जहाज पर और बहुत से यात्री भी थे। समुद्र शान्त था, वायु अनुकूल और मौसम सुहावना! यात्री लोगो को कुछ कष्ट नही था। मिल-जुल कर खाते-पीते, गीत-गाते और चर्चा करते वह समय बिताते थे।

एक बार वह आचार्य डेक पर बाहर आये। वह इधर-उधर घूम रहे थे कि देखते है कि आगे एक जहाज के मुहाने पर कुछ लोग जमा है। उनके बीच मे एक केवट समन्दर की तरफ इशारे से जाने क्या दिखाकर सुना रहा है। जिधर मछुये ने उँगली उठाकर बताया था। धर्माचार्य भी ठहर कर उधर ही देखने लगे। लेकिन उन्हे कोई खास बात दिखाई नही दी, धूप से समन्दर की सतह ही चमकती दीखती

थी। इस पर केवट की कहानी सुनने को वह पास आ गये। लेकिन उस आदमी ने देखकर अपनी बात बन्द कर दी और आदर-भाव से प्रणाम किया। और यात्री भी सभ्रम से प्रणाम करके चुप हो गये।

'भाइयो', धर्माचार्य बोले, 'मैं आपका कुछ हर्ज करने नही आया। यह भाई कुछ दिखाकर बतला रहे थे। सो मेरी भी सुनने की तबियत हुई कि क्या बात है।'

उनमे से एक यात्री जो औरो से साहसी थे, बोले—'तीन साधुओ की बावत वह हमे कह रहे थे।'

'कैसे तीन साधु ?'

धर्माचार्य यह कहते हुए और आगे आ गये और वहाँ रक्खे एक बक्स पर बैठ गये।

'मुझे भी बताओ, कैसे साधु ? मै जानना चाहता हूँ और तुम इशारे से दिखला रहे थे ?'

केवट ने आगे जरा दाहिनी तरफ इशारे से बतलाते हुए कहा—'वह वहाँ छोटा टापू दीखता है न ? वो, जरा दाये। जी, वही। वहाँ तीन जोगियो का वास है जो सदा आत्मा के उद्धार मे लवलीन रहते है।'

'कहाँ, कौन-सा टापू ! मुझे तो कोई दीखता नही।' धर्माचार्य बोले।

'जी, वह दूर। मेरे हाथ की तरफ देखिये। वह छोटा बादल दीखता है न, उसी के नीचे जरा दाये एक बारीक लकीर सी दिखाई देती है। जी, वही टापू है।'

धर्माचार्य ने ध्यान से देखा। पर आँखो को अभ्यास नही था, इससे धूप मे चमकते पानी की सतह के सिवा उन्हे कुछ दिखाई नही दिया ! बोले—'मुझे तो दिखाई नही दिया। पर खैर, वे साधु कौन है जो वहाँ रहते है ?'

केवट बोला—'कोई सन्त लोग है। जोगी-ध्यानी है। उनकी

बावत सुन तो मुद्दत से रखा था। पर दर्शन पारसाल से पहले नही किये।'

फिर केवट ने अपनी कथा सुनाई कि 'एक बार मैं नाव लेकर दूर निकल गया था। इतने मे रात हो गई। दिशा का ध्यान मैं सब भूल गया। आखिर उस टापू पर जाकर लगा। सवेरे का समय था। यहाँ-वहाँ भटक रहा था। इतने मे मिट्टी की बनी हुई एक कुटिया मुझे मिली। उसके पास एक बूढे पुरुष खडे हुए थे। तभी अन्दर से दो पुरुष और भी आ गये। सबने मिलकर मुझे वहाँ खिलाया-पिलाया और फिर मेरी नाव ठीक करने मे भी मेरी मदद की।'

धर्माचार्य ने पूछा—'वे साधु दीखते कैसे है ?'

'एक तो नाटे कद के है और कमर उनकी झुकी है। वह एक कफनी-सी पहने रहते है और बहुत बुड्ढे है। मैं समझूं, सौ से तो काफी ऊपर होगे। उनकी इतनी उम्र हो गई है कि सफेद दाढी कुछ हरी पडती जा रही है पर चेहरे पर सदा उनके मुस्कराहट रहती है। और चेहरा ऐसा है कि देवता स्वरूप। दूसरे उनसे लम्बे है। लेकिन उनकी भी अवस्था बहुत है। वह फटा-टूटा देहाती ढङ्ग का कुर्ता पहने रहते हैं। दाढी उनकी भरी है और कुछ पीले-भूरे रङ्ग की है। काया के खूब मजबूत। मैं उनकी भला क्या मदद कर सकता कि उन्होंने तो मेरी डोंगी को ऐसे पलट दिया जैसे वह कोई डोलची हो। वह भी हँसमुख रहते हैं और चेहरे पर दया भाव दीखता है। तीसरे का डील खासा है और दाढी बरफ-सी सफेद घुटनो तक आ रही है। सौम्य दीखते है और सख्त। भवे घनी, आँखो पर झूलती मालूम होती है और वह कमर से एक चटाई का टुकडा लपेटे रहते है।'

'वे तुमसे कुछ बोले भी ?' धर्माचार्य ने पूछा। 'अधिकतर तो वे सब काम चुप रह कर ही करते है। आपस मे भी बहुत ही कम बोलते है। देखकर ही तीनो, एक-दूसरे को समझ जाते है, जैसे आँख से ही बोल लेते हैं। जो सबसे ज्यादा डील के हैं उन से मैंने पूछा कि

आप क्या यहाँ बहुत काल से रहते है ? सुनकर उनकी भवो मे सिकुड़न आई और जैसे नाराजी मे कुछ गुनगुनाया। लेकिन जो सबसे वृद्ध थे, उन्होने उनका हाथ अपने हाथ मे लिया और मुस्कराने लगे। तब उनका गुस्सा भी एकदम शान्त हो गया। उन बूढो के मुँह से बस इतना निकला—'हम पर दया रक्खो', और कहकर मुस्करा दिये।

केवट यह बात सुना रहा था कि टापू पास आने लगा।

उस साहसी आदमी ने उँगली से दिखाकर कहा—'अब श्रीमान् देखे तो टापू साफ नजर आ सकता है।'

धर्माचार्य ने देखा। सचमुच एक काली लकीर सी दीखती थी। वही टापू। कुछ देर उधर देखते रहकर आचार्य वहाँ से आये और जहाज के बड़े माँझी से पूछा—'यह कौन टापू है ?'

'वह ?' उसने कहा, 'उसका कोई नाम तो नही है। ऐसे तो यहाँ बहुतेरे टापू है।'

'क्या यह सच है कि यहाँ अपनी आत्मा के उद्धार के लिए तीन फकीर रहते है ?'

'ऐसा सुनता तो हूँ, महाराज! पर मालूम नही यह सब है क्या। मल्लाह लोग कहते है कि उन्होने उन्हे देखा है। पर कौन जाने कि अपना मनगढन्त उन्हे दीख तक भी जाता हो।'

'हम उस टापू पर जाना चाहते है और उन आदमियो को देखना चाहते है।' धर्माचार्य ने कहा, 'क्या यह हो सकता है ?'

उसने जवाब दिया, 'ठेठ टापू तक तो जहाज जा नही सकता, हाँ नाव से आप जा सकते है। उसके लिए कप्तान से बोलना होगा।'

धर्माचार्य ने कप्तान को बुला भेजा। कप्तान से आने पर कहा—'मै उन फकीरो को देखना चाहता हूँ। क्या मुझे किनारे पहुँचाया जा सकता है ?'

कप्तान ने कहा—'जी हाँ, पहुँच तो सकते हैं। पर इसमे देर हो जायगी और गुस्ताखी न हो तो मै श्रीमान् को कहू कि वे लोग ऐसे

नही है कि श्रीमान् उनके लिए कष्ट उठाये। सुना है वे बुड्ढे एक दम नादान है। न कुछ समझते है, न जानते है। और बेजुबान ऐसे है जैसे जलचर मछली।'

धर्माचार्य ने कहा—'खैर, हम देखना चाहते है। देर की और कष्ट की चिन्ता न कीजिये। खर्च की भरपाई हमारे हिसाब से कर लीजियेगा। लाइये, मुझे एक नाव दीजिए।'

अब और क्या हो सकता था। लाचार, वैसा ही हुक्म दे दिया गया। बादवान फिरे और जहाज को टापू की तरफ मोड दिया गया। आगे सामने कुर्सी ला रखी गई। धर्माचार्य वहाँ बैठ कर आगे देखने लगे और यात्री भी आस-पास इकट्ठे हो गये और टापू की तरफ ताकने लगे आँख जिनकी तेज थी उन्हे जल्दी ही टापू के किनारे के पेड-पहाडियाँ दीख आईं। वहाँ एक मिट्टी की झोपडी भी दीखी। आखिर एक आदमी को खुद वे फकीर भी दिखाई दिये। कप्तान ने दूरबीन निकाली और उसमे देखा। देखकर दूरबीन धर्माचार्य के हाथो मे दी। बोला—'सचमुच तीन आदमी किनारे के पास खडे तो है। वहाँ, वह चट्टान के बाईं तरफ।'

धर्माचार्य ने दूरबीन लेकर ठीक-ठीक लगाकर उसे देखा कि है तो तीन आदमी। एक लम्बा है, दूसरा औसत कद का और एक नाटा, छोटा और झुका हुआ है। तीनो एक दूसरे का हाथ पकडे किनारे खडे है।

कप्तान ने धर्माचार्य से कहा कि 'जहाज इससे आगे नही जा सकता। अगर श्रीमान् किनारे जाना चाहते है तो नाव पर जा सकते हैं। हम यही लगर डाले रहेगे।'

लँगर डाल दिया गया। पाल ढीले हो गये और जहाज झटकों के साथ रुक गया। फिर नाव नीचे उतारी गई और खेने वाले मल्लाह पतवार लेकर उस पर तैयार हो बैठे। तब धर्माचार्य भी उतर कर वहाँ अपने आसन पर आ बैठे। मल्लाहो ने खेना शुरू किया और नाव

किनारे की तरफ बढ चली। कुछ दूर से उन्हें तीनो आदमी साफ दिखाई दे आये। जो सबसे लम्बा था, कमर से चटाई लपेटे था। उससे छोटा फटा-टूटा देहाती कुर्ता पहने था और नाटा जिसकी उम्र बहुत थी और कमर झुकी थी, सनातन कफनी मे था। तीनो हाथ मे हाथ डाले खडे थे।

मल्लाहो ने किनारे नाव लगाई और धर्माचार्य के उतरने तक उसे थामे रक्खा।

तीनो बुड्ढो ने आचार्य को झुककर नमस्कार किया धर्माचार्य ने आशीर्वाद दिया। आशीर्वाद पाकर वे और भी नीचे झुक आये।

तब धर्माचार्य उन्हे कहने लगे—'मैने सुना है कि आप सज्जन पुरुष अपनी आत्मा के उद्धार के हेतु यहाँ रहते है और भगवान से स्व-पर कल्याण प्रार्थना करते है। मै भगवान का एक तुच्छ दास हूँ। उनकी कृपा और आदेश से जगत के प्राणियो को सन्मार्ग बताने का काम करता हूँ। मेरी इच्छा हुई कि आप भगवान के सेवक है, सो आपके पास आकर जो बने आपकी सहायता करूँ और जो जानता हूँ बताऊँ।'

वे तीनो वृद्ध इस पर मुस्करा कर एक दूसरे को देखने लगे और चुप रहे।

धर्माचार्य ने कहा—'मुझे बताइये कि आप लोग अपनी आत्मा की रक्षा के निमित्त क्या करते है? और इस द्वीप पर परमात्मा की सेवा-साधना किस प्रकार करते है?'

इस प्रश्न पर सूरा फकीर मन्द भाव से अपने सबसे वृद्ध साथी को देख उठा। इस पर वह पुरातन पुरुष मुस्कराया और बोला—'ईश्वर की सेवा तो हमको मालूम भी नही है। ईश्वर के दूत, हम तो बस अपने को पाल लेते है और अपनी सेवा कर लेते है।'

'लेकिन ईश्वर की प्रार्थना आप किस प्रकार करते है?'

'प्रार्थना! हम तो इस तरह करते है, तीन तुम तीन हम।

हम पर दया रखना, मालिक ।'

यह कहने के साथ तीनो ने प्रकाश की तरफ आँख उठाई और एक आवाज से दुहराया—'तीन तुम तीन हम । हम पर दया रखना मालिक ।'

धर्माचार्य मुस्कराये । बोले—'मालूम होता है आपने त्रिमूर्त और त्रिगुणात्मक की कोई बात सुनी है । लेकिन आपकी प्रार्थना सही नही है । आप सन्त पुरुषो ने मेरा प्रेम जीत लिया है । आप ईश्वर की प्रसन्नता चाहते है । किन्तु ईश्वर की सेवा का मार्ग आपको ज्ञात नही है । प्रार्थना की यह विधि नही है । देखिये, सुनिये, मै आपको बताता हूँ । मै कोई अपनी विधि नही बतला रहा हूँ । शास्त्रो मे सब प्राणियो के मङ्गल के लिए प्रार्थना की जो विधि निहित है, वही मैं आपको सिखाना चाहता हूँ ।'

कहकर आचार्य ने धर्म का तत्व उन फकीरो को समझाना शुरू किया कि कैसे परम-पुरुष एक है, वही द्विधा होती है । फिर किस प्रकार प्रकृति, पुरुष और आदि-बीज-पुरुष, यह त्रिविध रूप परमात्मा का स्वरूप कहलाता है ।

ईश्वर ने पृथ्वी पर अवतार धारण किया कि धर्म की रक्षा हो । उन अवतारो की वाणी से हमे प्राप्त हुआ कि ईश्वर की प्रार्थना करनी चाहिए ।

सुनिए, मेरे साथ-ही-साथ बोलिए—

'हे परम पिता !'

'हे परम पिता !' पहले वृद्ध ने दोहराया ।

'हे परम पिता !' दूसरे ने कहा ।

फिर तीसरे ने कहा—'हे परम पिता !'

'जिनका कि आकाश मे वास है ।'

'जिनका कि आकाश मे वास है ।'—पहले साधु ने दोहराया ।

लेकिन दूसरे फकीर कहते-कहते भूल गया और तीसरे से उन

शब्दो का उच्चारण ही ठीक नहीं बन पडा। उनके मुँह पर बाल बहुत घने थे, इससे आवाज साफ नही निकलती थी। सबसे वृद्ध वह पुरातन सन्त भी दाँत न होने की वजह से शब्दो को पूरा-पूरा और सही नहीं बोल पाते थे।

धर्माचार्य ने प्रार्थना फिर दोहराई और फिर फकीर ने उसे तिहराया। आचार्य वहाँ एक पत्थर पर बैठे थे, सामने तीनो बूढे जोगी खडे थे। वे आचार्य के मुँह की हरकत को देख-देखकर उन्ही की तरह प्रार्थना के शब्दो का ठीक-ठीक उच्चारण करने की कोशिश करते थे। धर्माचार्य ने दिन भर प्रयत्न किया। एक-एक शब्द को बीस-बीस और कोई सौ-सौ बार दोहराया। पीछे-पीछे वे साधु बोलते थे। बार-बार वे लडखडाते, भूलते और गलत कहे चलते। लेकिन हर बार धर्माचार्य उन्हे सुधार देते थे और फिर नई बार शुरू करते थे। आचार्य ने परिश्रम से जी नही मोडा। आखिर उस ईश-प्रार्थना को जोगी अब आचार्य के बिना पूरी-की-पूरी बोल सकते थे। सबसे पहले प्रार्थना उस मँझोले जोगी ने सीखी। उन्हे याद हुई कि फिर आचार्य ने उन्ही को बार-बार दोहराने को कहा। सो आखिर बाकी दोनो को भी वह कण्ठ होती गई। प्रार्थना सीख गये, तब आचार्य ने शान्ति पाई।

अब अन्धियारा हो चला था और चाँद ऊपर दीखने लगा था। अब धर्माचार्य ने अपने जहाज पर लौट चलने की सोची। उस समय उन बुड्ढो ने उनके सामने दण्डवत किया। धर्माचार्य ने बडे प्रेम से उन्हे ऊपर उठाया और सबको गले लगाया। कहा कि आप लोग इसी तरह प्रार्थना कीजियेगा। अन्त मे वह नाव पर सवार होकर अपने जहाज को लौट चले। नाव मे बैठे और मल्लाह नाव को जहाज की तरफ खे रहे थे, तब भी उन्हे फकीरो की आवाज सुन पडती रही। वे धर्माचार्य की सिखाई प्रार्थना जोर-जोर से दुहरा रहे थे। नाव जहाज से आकर लगी। उस समय उनकी आवाज तो नही सुन पडती थी, पर चाँद की चाँदनी मे वे ज्यो के त्यो खडे हुए वहाँ अब भी दिखलाई

देते थे। सबसे छोटे बीच मे थे, मँझले बाये और लम्बे कद के जोगी दाये थे। धर्माचार्य के पहुँचने पर जहाज का लँगर उठा दिया गया। पाल खुल गये और जहाज उद्यत हो गया। बादबानो मे हवा भरती थी कि जहाज चल पडा। धर्माचार्य पीछे बैठकर जहाँ से आये थे, उस द्वीप के तट को देखते रहे। कुछेक देर बाद वे ओझल हो गये। द्वीप का किनारा फिर भी कुछ काल दीखता रहा। फिर शनै शनै वह भी मिट गया, अब बस समन्दर की लहराती लहरे चाँदी की तरह चाँद की चाँदनी मे चमकती दीखती थी।

यात्री लोग जहाज पर सो गये। चारो ओर शान्ति थी, पर आचार्य की सोने की इच्छा नही थी। वह अपनी जगह अकेले बैठे समन्दर मे उसी तरफ देख रहे थे जहाँ पर वह टापू था, पर जो दीख नही रहा था। उन्हे उन जोगियो की याद आती थी—'कैसे सज्जन सन्त प्राणी थे वे और ईश-प्रार्थना को सीख कर कैसे कृतार्थ मालूम होते थे।' उन्होने प्रभु को धन्यवाद दिया कि प्रभु ने बडी कृपा की कि ऐसे सज्जन पुरुषो की सहायता का अवसर मुझे दिया और मुझे उन लोगो को वैदिक प्रार्थना सिखाने का सौभाग्य मिला।

आचार्य इस तरह सोचते हुए एकटक समन्दर की सतह पर निगाह डाले उस टापू की दिशा मे मुँह करके बैठे थे। चाँदनी चमक रही थी। लहरें यहाँ-वहाँ किल्लोले लेकर कभी धीमी आवाज से खिल-खिल हँस पडती थी। ऐसे ही समय अकस्मात क्या देखते है कि चाँद की किरणो से समन्दर के पानी पर जो चमकीली राह-सी बन आई है, उस पर कोई सफेद झकझकाती वस्तु बढती चली आ रही है। क्या? समन्दरी कोई जन्तु है, या किसी किश्ती के छोर मे लगी धातु ही झलक रही है? अचरज से आचार्य की आँखे उस पर गड गईं।

उन्होने सोचा कि जरूर यह कोई नाव हमारे पीछे आ रही है। लेकिन यह तो बडी तेजी से बढी आ रही है। मिनट भर पहले वह जाने कितनी दूर थी, अब कितनी पास आ गई है। नही, नाव नही

हो सकती, पाल तो कहीं दीखते ही नहीं हैं। जो हो, वस्तु वह कोई हमारे पीछे आ रही है और हमे पकडना चाह रही है।

लेकिन चीह्न न पडता था कि क्या है। नाव नही, पक्षी नही, समन्दरी कोई जन्तु नही। आदमी ? लेकिन आदमी इतना बडा कहाँ होता। फिर वहाँ समन्दर के बीच आदमी कहाँ से आ जाता है ? धर्माचार्य उठे और बडे माँझी से बोले—'देखो तो भाई, वह क्या है ?'

धर्माचार्य को लगा मानो कि वे तीनो ही साधू मालूम होते है और पानी पर दौडते चले आ रहे है। दाढी उनकी चमक रही है और खुद चाँदनी की भाँति उज्ज्वल दीखते है।

पर देख कर भी, जैसे आँखो को भरोसा न हो, आचार्य ने दुहराया—'क्या है, क्या चीज है वह, माँझी ?'

लेकिन साधू तो ऐसी तेजी से बढे आ रहे थे कि जहाज मानो चल ही न रहा हो, उनके आगे बिल्कुल स्थिर पड गया हो।

माँझी तो उन जोगियो को उस भाँति पानी पर चला आता देख कर दहशत के मारे सब भूल गया और पतवार से हाथ छोड बैठा। बोला—

'बाप रे, वे जोगी तो हमारे पीछे ऐसे भागे आ रहे है कि मानो पाँव तले उनके सूखी धरती ही हो।'

माँझी की आवाज सुनकर और यात्री भी जाग उठे और सब वही घिर आये। देखा तो तीनो साधू हाथ-मे-हाथ डाले चले आ रहे है और उनमे आगे के दो जहाज को ठहरने को कह रहे है। अचम्भा देखो कि विना पैर चलाये पानी की सतह पर वह तो चलते चले ही आ रहे है। जहाज ठहर भी न पाया था कि साधू आ प चे। सिर उठा कर तीनो मानो एक स्वर से बोले— 'हे उपकारक, ईश्वर के सेवक हम लोगो को तुम्हारी सिखाई प्रार्थना याद नही रही है। जब तक दोहराते रहे वह याद रही। जरा रुके कि एक शब्द ध्यान से उतर गया। फिर तो सारी कड़ी ध्यान मे से बिखर कर गिरती जा रही

है अब उसका कुछ भी ओर-छोर हमे याद मे पकड नहीं आता। हे गुरुवर, हमे प्रार्थना फिर सिखाने की कृपा कीजिए।'

आचार्य ने सुनकर मन ही-मन मे राम-नाम का स्मरण किया और कहा—'हे सन्त पुरुषो, आपकी अपनी प्रार्थना ही ईश्वर को पहुँच जायगी, मैं आप को सिखाने योग्य नही हूँ। मेरी विनय है कि मुझ पापी के लिए भी आप प्रार्थना कीजियेगा।'

कह कर आचार्य ने उन वृद्ध जनो के आगे धरती तक झुक कर नमस्कार किया। वे जोगी फिर लौट कर समन्दर पार कर गये, जहाँ वे आँख से ओझल हुए, सवेरा फूटने तक वहाँ प्रकाश जगमगाता रहा।

: १० :

तीन सवाल

एक राजा था। एक बार उसने सोचा कि तीन बातें मालूम हो जाये, तो कभी कोई मन की साध अधूरी न रहे, और सब काम पूरे हो जाया करे। एक तो यह कि कोई काम कब शुरू किया जाय ? दूसरी कि कौन ठीक आदमी है जिनकी सुनी जाय और किनकी अनसुनी छोड दी जाय ? तीसरी यह कि जरूरी काम कौन-सा है।

यह विचार आने पर उसने अपने राज्य मे ऐलान कर दिया कि जो कोई आकर ये तीन सवाल बतायेगा, उसे खूब इनाम मिलेगा। एक, हर काम का ठीक समय क्या है ? दो, कि सबसे जरूरी आदमी कौन है ? और तीन, कि सबसे महत्व का काम कैसे जाना जा

सकता है ?

सो बड़े-बडे विद्वान दूर-दूर से राजा के पास आये। सबने जवाब दिये। पर सबके उत्तर अलग-अलग थे।

पहले सवाल के जवाब मे किन्ही ने तो कहा कि हर काम के ठीक वक्त के लिए बरस, महीने, दिन का पहले से एक गोशवारा तैयार रखना चाहिए। उसमे सब काम का समय नियत कर देना चाहिए। बस फिर एक दम उसी के अनुसार करना चाहिए। उनकी राय थी कि सिर्फ इसी तरह हर काम अपने ठीक वक्त से हो सकता है, नही तो नही। दूसरो का कहना था कि पहले से हरेक काम का समय बाँध लेना मुमकिन नही है। असल मे चाहिए यह कि बिना इधर-उधर की खामखा बातो मे उलझे आदमी अपने आस-पास का ख्याल रखे और जो जरूरी उपयोगी हो, वही करता चले। कुछ औरो ने बताया कि महाराज! आस-पास का कितना भी ध्यान रक्खो, लेकिन वास्तव मे एक आदमी ठीक-ठीक हर काम का सही वक्त नही तय कर सकता। इसके लिए पण्डितो की एक सभा होनी चाहिए जो इसमे महाराज की सहायता किया करे और प्रत्येक काम का समय निर्धारित कर दिया करे।

लेकिन इस पर और बोले कि वाह, कुछ बाते ऐसी नही होती कि सभा मे आये तब कही जाकर फैसला हो। उन पर तो तभी के तभी निर्णय देना होता कि क्या करे, क्या नही। ले, कि छोडे ? लेकिन यह तय करने के लिए पहले कुछ पता होना जरूरी है कि किसका क्या फल होने वाला है और आगे की बात बस ज्योतिषी और तन्त्र-मन्त्र जानने वाले जानते है। सो हरेक काम का ठीक मुहूर्त जानने को पूछकर चलना चाहिए।

दूसरे सवाल के जवाब भी उसी तरह सबके अलग-अलग थे। कुछ बोले कि राजा के लिए सबसे जरूरी लोग है दरबारी। किसी ने कहा कि पुरोहित। औरो ने कहा कि वैद्य। कुछ और बोले कि नही,

राज्य में सबसे जरूरी सिपाही होते हैं ।

और तीसरे सवाल के जवाब मे सबसे जरूरी काम कैसे जाना जाता है, कुछ ने तो जवाब दिया कि दुनिया मे सबसे जरूरी वस्तु है विज्ञान । औरो ने कहा कि जगत मे रण-चातुरी सबसे बढकर बात है । कुछ अन्य बोले कि धर्म की पूजा से आगे तो कुछ भी नही है, वह श्रेष्ठ है ।

जवाब सब अलग-अलग थे । सो राजा किन्ही से राजी नही हुआ । और किसी को इनाम नही दिया पर सवालो के ठीक जवाब पाने की इच्छा उसके मन मे थी ही सो एक जोगी से आकर पूछने की उसने मन मे ही ठहराई । उस जोगी के ज्ञान की दूर-दूर शोहरत थी ।

वह जोगी वन मे रहता था । कभी बाहर नही आता था और देहात के सीधे-साधे लोगो के अलावा किन्ही और से नही मिलता था । सो राजा ने अपना सादा वेष कर लिया और जोगी की कुटिया मे आने से पहले ही घोडे से उतर पॉव-पॉव हो लिया । साथ के रक्षक सिपाहियो को वही छोड दिया और कुल एक-अकेला होकर चला ।

राजा पास पहुँचा तो देखता है कि जोगी कुटिया के आगे धरती खोद रहे है । राजा को देखकर जोगी ने स्वागत-वचन कहे और फिर उसी तरह अपने खोदने मे लगे रहे । जोगी की काया निर्बल थी और वह कृश थे । धरती मे फावडा मारते कि उनकी साँस जोर-जोर से चलने लगती थी ।

राजा ने पास जाकर कहा—'हे ज्ञानी जोगी, मैं आपके पास तीन सवाल पूछने आया हूँ । पहला, ठीक काम का वक्त मै कैसे जान सकता हूँ । दूसरा कि कौन लोग मेरे लिए सबसे जरूरी है और इसलिए किन का औरो से मुझे विशेष ख्याल रखना चाहिए । और तीसरा कौन काम सबसे महत्व का है जिधर मुझे पहले ध्यान देना चाहिए ।'

जोगी ने राजा की बात सुनी, पर जवाब नही दिया । हथेली को थूक से गीलाकर फावडा ले आपने फिर खोदना शुरू कर दिया ।

राजा ने कहा—'आप थक गये है. लाइये, मुझे फावड़ा दीजिए

कुछ देर मैं आपकी जगह काम कर दूं।'

'अच्छा—'

कहकर फावडा जोगी ने राजा को दे दिया और खुद अलग जमीन पर बैठ सुस्ताने लगा। दो क्यारी खोद चुकने पर राजा रुके और उन्होने अपने सवालो को दुहराया। जोगी ने फिर कोई जवाब नही दिया। पर खडे हो गये और हाथ बढाकर बोले—

लाओ, 'अब तुम आराम करो। मैं खोद लेता हूँ।'

पर राजा ने फावडा उन्हे नही दिया और आप ही खोदने लगा। एक घण्टा बीता, फिर दूसरा बीता। ऐसे पेडो के पीछे सूरज छिपने लगा। आखिर राजा ने फावडा धरती मे लगा छोड, कहा—'हे ज्ञानी पुरुष, मै अपने प्रश्नो के उत्तर के लिए आपके पास आया था। अगर आप मुझे कोई जवाब नही दे सकते, तो वैसा कहिए, मैं घर चला जाऊँगा।

जोगी ने कहा—'देखो, वह कोई भागा आ रहा है। जाने कौन है।'

राजा ने मुडकर देखा तो एक दाढी वाला वन से भागा आ रहा था। उसने दोनो हाथो से पेट को अपने दबा रक्खा था और वहाँ से लहू बह रहा था। राजा के पास पहुँचना था कि वह धीमी आवाज से कराहता हुआ गिर गया और बेहोश हो गया। राजा ने और जोगी ने उस आदमी के कपडे खोले। पेट मे एक बडा घाव था। जैसे बन पडा राजा ने उस घाव को धोया और जोगी का अँगोछा ले और अपना रुमाल झाड उसकी पट्टी वही बाँधी। लेकिन खून रुकता नही था। राजा ने खून से तरबतर पट्टी को फिर खोला और धोया फिर पट्टी बाँधी। ऐसे आखिर खून बहना बन्द हुआ तो आदमी होश मे आया और उसने पीने को कुछ माँगा। राजा ने ताजा पानी लाकर उसे पिलाया। इतने मे सूरज छिप गया था और सर्दी होने लगी थी। सो जोगी की मदद से राजा उस घायल आदमी को कुटिया के अन्दर

ले गया और वहाँ बिछौने पर लिटा दिया। बिछौने पर पहुँचकर आदमी ने आँखे मीच ली और उसे कुछ चैन मालूम हुआ। लेकिन राजा भी अब थक गया था। कुछ तो इतना चला था और कुछ काम की थकान थी। सो वह वही देहलीन के पास चौखट का तकिया लगा गुडी-मुडी लेट गया, लेटते ही सो गया और नीद ऐसी गाढी आई कि गरमियो की वह छोटी-सी रात जरा मे कब निकल गई, पता नही चला। सवेरे पलक मीचता जो वह उठा तो कुछ देर तो उसे याद न आई कि कहाँ हूँ और यह आदमी कौन है। वह अजनबी दाढी वाला बिछौने पर पडा चमकीली आँखो से गौर बाँधकर उसी की तरफ देख रहा था।

जब देखा कि राजा जग गया है और उसी की तरफ देख रहा है तो दाढी वाले आदमी ने धीमी आवाज मे कहा—'जी, मुझे माफ कीजिए।'

राजा बोला—'भाई मैं तो तुम्हे जानता नही हूँ। और माफ मैं किस बात के लिए तुम्हे कर सकता हूँ।'

घायल बोला—'आप मुझे नही जानते है। लेकिन मैं आपको जानता हूँ। मैं वही आपका दुश्मन हूँ जिसने आपसे बदला लेने की कसम खाई थी। आपने मेरे भाई को फाँसी दी थी और जायदाद छीन ली थी। मुझे मालूम था कि आप यहाँ जोगी के पास अकेले आये है। मनमे ठहराया था कि लौटते वक्त आपका काम तमाम कर दूंगा। लेकिन दिन पूरा हो गया और आप लौटे नही। सो मैं अपने छिपने की जगह देखने के लिए बाहर आया। बाहर आने पर आपके सन्तरी लोग मिले। उन्होने मुझे पहचान लिया और घायल कर दिया। ज्यो-त्यो उनसे बच मै भाग तो आया, लेकिन आप मेरे घाव पर पट्टी न बाँधते तो मैं मर ही चुका था। सो देखो, मैंने तो आपको मारने की ठानी और आपने मेरी जान बचाई। अब मै जीता रहा और आपने चाहा तो मैं जन्म भर गुलाम की तरह आपकी ताबेदारी करूँगा और अपने बेटे को भी यही ताकीद कर जाऊँगा। आप मुझे माफ कर दे,

यही विनती है ।'

राजा को बडी प्रसन्नता हुई । ऐसे सहज दुश्मन से सुलह ही नही हो गई बल्कि दुश्मन की जगह यह आदमी दोस्त हो गया । सो राजा ने उसे माफ ही नही किया, बल्कि कहा कि मैं अभी तुम्हारी तीमारदारी मैं अपने आदमी और राजवैद्य भेजे देता हूँ और जायदाद भी सब लौटाने का वचन राजा ने भरा । घायल आदमी से रुखसत लेकर राजा जोगी को देखने बाहर आया । जाने से पहले एक बार फिर वह जोगी से अपने सवालो का जवाब पाने के लिए निवेदन करना चाहता था । जोगी बाहर धरती पर घुटनो के बल बैठ कल की खुदी क्यारियो मे बीज बो रहे थे ।

राजा पास आकर बोला—'हे ज्ञानी पुरुष, अन्तिम बार मैं फिर आपसे अपने प्रश्नो के उत्तर के लिए प्रार्थना करता हूँ ।'

अपनी दुबली टाँगो पर उसी तरह सिकुडे धरती पर बैठे जोगी ने अपने सामने खडे राजा की तरफ देखकर कहा—'जवाब तो तुमको मिल गया है, भाई ।'

मिल गया है ? राजा ने पूछा, 'कैसे ? आपका क्या मतलब है ?'

जोगी बोले—'देखते नही हो, अगर कल मेरी दुर्बलता पर तुम दया नही करते, और मेरी जगह इन क्यारियो को नही खोदने लगते, बल्कि वापस राह लौट जाते, तो वह आदमी तुम पर हमला कर बैठता कि नही ? और फिर तुम यहाँ न ठहरने के लिए पछतावा करते । सो सबसे जरूरी वक्त तुम्हारे लिए था जब तुम क्यारियाँ खोद रहे थे और तब सबसे जरूरी आदमी तुम्हारे लिए था मैं । और फिर मेरी भलाई करना तुम्हे उस वक्त सबसे जरूरी काम था । इसके बाद वह आदमी जब भागा-भागा हमारे पास आकर गिरा तो सबसे महत्व की घडी थी, जब तुम परिचर्या मे लगे । क्योकि अगर तुम घाव न बाँधते तो मनमे वह तुम्हारा बैर साथ लिए ही मरता । इसलिए उस समय वह तुम्हारे लिए सबसे जरूरी आदमी था और जो उसके अर्थ किया, वही तुम्हे

सबसे महत्व का काम था।

इससे याद रक्खो कि एक ही घडी है जो महत्व की है और वह हाल की घडी है। वही सबसे महत्व की है, क्योकि वही घडी है, जो हम जीते है और हमारे साथ मे होती है। और सबसे जरूरी और महत्व का आदमी वह है कि जिसके साथ इस घडी हम हो। क्योकि कौन जानता है कि आगे किसी और दूसरे से मिलना हमारी किस्मत मे बदा भी हो कि नही। और सबसे महत्व का काम है उस आदमी की उस वक्त की जो सेवा हो कर देना। क्योकि वही एक काम है जिसको आदमी के हाथ देकर उसे यहाँ भेजा गया है। ●

: ११ :

करीम

पुराने राज्य की बात है कि एक समय मध्य देश मे करीम नाम का एक काश्तकार रहा करता था। बाप उसका अपने बेटे का ब्याह करने के पीछे एक साल बाद परलोक सिधार गया था। धन-सम्पदा उसने कुछ पीछे नही छोडी थी। कुछ जोडी बैल थे—दो गाय और काम के दो घोडे पर करीम को इन्तजाम करना आता था। इससे वह उन्नति करने लगा। पति-पत्नी सबेरे से रात तक खूब काम करते। औरो से सवेरे उठ जाते और सोते सबसे पीछे थे। इस तरह साल-पर-साल उनकी दौलत मे बढ़वारी होती गई। होते-होते थोडा-थोडा करके करीम के पास खूब सम्पदा हो गई। तीस-पैंतीस बरस बीते होगे कि उसके पास दो सौ से ऊपर बैल हो गये थे। अस्तबल मे घोड़ियो-

घोड़े। भेड-बकरियो की तो शुमार क्या। और काम के लिए नौक-रानियाँ और नौकर थे। वे ही सब करते थे। दूध वे काढते और सब तरह की सेवा भी वे करते थे। सब तनख्वाह मिलती थी। करीम के पास हर चीज की खूब इफारत थी और दूर-पास के सब उसके भाग्य पर विस्मय और ईर्ष्या करते थे। कहते थे कि किस्मत वाला आदमी तो करीम है। उसके पास सब कुछ है। दुनिया का मजा है तो उसे है।

अच्छे-अच्छे लोग और ओहदे वाले अफसर करीम की बडाई सुनते और उसकी जान-पहचान करना चाहते थे। दूर-दूर से लोग उससे मिलने को आते थे। करीम सबका स्वागत और सबकी खातिर करता था। खुलकर खिलाता-पिलाता और आवभगत करता था। कोई आओ, उसका भण्डारा तैयार था। जो चाहो, वहाँ खाने मे पालो। मेहमान आते तब खास रसोई बना करती थी। जो कही तादाद कुछ ज्यादा हुई तो पूरी ज्यौनार के सामान हो जाते थे।

करीम के तीन सन्तान थी। दो लडके, एक लडकी। सब की शादी कर उसने छुट्टी पाई थी। जब उसकी हालत ऐसी नही थी, मामूली थी तो वे बच्चे माँ-बाप के सग लगकर काम किया करते थे। खुद बैलो की सानी-पानी देखते करते थे। लेकिन अमीरी आती गई तो वे बिगडते भी गये। एक को तो दारू की लत लग गई। बडा तो कही कोई फौजदारी कर बैठा और वही काम आ रहा। छोटे को ऐसी औरत मिली कि सरकश। सो बाप का कहना अब बेटा नही सुनता था और दोनो जनो को अब अधिक काल साथ निभाना मुश्किल होता जाता था। इससे दोनो अलग हो गये। करीम ने बेटे को मकान दे दिया और खासी तादाद मे गाय बैल भी उसकी तरफ कर दिये। इस तरह उसकी चल और अचल सम्पदा कम पड गई। उसके बाद ही जाने कैसी एक बीमारी फूटी। उससे भेडो के रेवड-के-रेवड सत्या-नाश हो गये। फिर अकाल का साल आ गया और काश्त मे सूखा

पडा। बहुत से चौपाये अगले जाडो मे बेमौत मर गये। ऊपर से बनजारो का उत्पात हुआ और वे कई घोडे चुरा ले भागे। इस तरह करीम की सम्पदा क्षीण होने लगी। वह घट-घटकर कम पडती जा रही थी। उधर उसकी काया का कस भी घट रहा था। आखिर सत्तर बरस का होते-होते वह दिन आया कि घर का माल असबाब नीलाम बोली पर पड गया। कालीन गलीचे, जीन-तम्बु और इसी तरह की और चीजे घर से निकल कर बाजार मे आने लगी। यहाँ तक कि आखिरी बचे-खुचे बैलो की जोडियो से भी जुदा होने की नौबत आ गई। अब खाने के भी लाले पड गये। उसकी कुछ समझ मे न आया कि कैसे क्या हुआ और देखते-देखते सब सम्पदा हवा हो गई।

सो करीम और उसकी बीबी को बुढापे की उमर मे दूसरे दर की नौकरी सोचनी पडी। करीम के पास कुछ न बचा था। बस तन के कपड़े थे, बुढिया बीबी और काम चलाऊ कुछ बासन-ठीकरे। बेटा अलग होकर एक दूसरे गॉव जा रहा था। और उसकी बेटी मर चुकी थी। सो उन बूढो को मदद करने वाला कोई न था।

उनका पडौसी था एक मोहम्मद शाह। मोहम्मद शाह की हालत ऐसी थी कि न बहुत इफ़ारत थी, न गरीबी। अपने खाता-पीता था और मन का नेक आदमी था। करीम की पुराने दिनो की बडी-बडी मेहमान बाजी की उसने याद की और उसके मन मे बडी दया आई। बोला—'करीम तुम और तुम्हारी बीबी दोनो मेरे मकान पर आकर रहो। गर्मी मे मेरी खरबूजो की पालेज का काम देख लिया करना। जाडो मे चौपाये की जरा सार-सम्भार कर देना, बीबी तुम्हारी गायो को थाम लेगी। और दुह दिया करेगी। तुम दोनो का खाना-कपडा मेरे जिम्मे और जब जिस चीज की जरूरत हो मुझे कह देना। वह मिल जायगी।' करीम ने अपने नेक पडौसी का शुक्रिया माना और वह और उसकी बीबी दोनो मोहम्मद शाह के यहाँ नौकरी पर हो गये। पहले तो उनको इसमे बडी मुश्किल हुई। पर धीमे-धीमे वे इसके

आदि हो गये। अपने बस-बराबर मालिक का काम करते और सबर से बसर करते।

मोहम्मद शाह ने देखा कि इन लोगो से उसे बडा आराम हो गया है। पहले अच्छी हालत मे और खुद मालिक रहने की वजह से इन्तजामकी बावत ये लोग यो ही सब कुछ जानते है। तिस पर आलसी नही है और काम से बचते नही है। लेकिन उसके मन को दु ख रहता था कि देखो, बेंचारे किस ऐश पर पहुँच कर कैसे मुसीबत के दिन देख रहे है।

एक बार मोहम्मद शाह के कोई नातेदार दूर से उमके यहाँ मेह-मान हुए। एक वायज मुल्ला भी उनके साथ थे। मोहम्मद शाह ने करीम को कहा कि एक 'अच्छी भेड लो और आज की दावत के लिए उसी को जिबह करो। करीम ने मन लगाकर सब तैयारी की। सब तरह का खाना मेहमानो के आगे रक्खा गया। सब लोग दस्तरखान पर बैठे खाना खा रहे थे कि करीम का उधर दरवाजे से गुजरना हुआ।

मोहम्मद शाह ने करीम को जाते देखकर एक मेहमान से कहा— 'आपने उन जईफ को देखा जो अभी यहाँ से गुजर के गये हैं ?'

मेहमान ने कहा—'हाँ ! उसमे खास बात क्या है ?'

'खास बात यह', मोहम्मद शाह ने कहा, कि अभी वह यहाँ के सबसे मालदार आदमी थे। नाम उनका करीम है। वह नाम आपने सुना भी होगा।'

मेहमान ने कहा —'जी हाँ, नाम तो खूब ही सुना है। पहले देखने का मौका नही आया, लेकिन इस नाम की शोहरत तो दूर-दूर तक फैली हुई है।'

'जी हाँ, लेकिन अब उनके पास कुछ नही बचा है और मेरे यहाँ मजदूर बनकर रहते है। उनकी बुढिया बीबी भी नौकर है। वह दूध दुहती है।'

मेहमान को बडा अचरज हुआ। उनका मुँह खुला रह गया बोला—'किस्मत का भी एक चक्कर है। एक ऊपर उठता है तो दूसरा नीचे आता है।

क्यो साहब, करीम बुढापे की बदकिस्मती पर रज तो जरूर ही मानते होगे।'

'जी, कौन जानता है। वैसे यह सुकून से सजीदा और चुपचाप रहते हैं और काम सब तनदिही से करते है। रन्जीदा दीखते तो नही हैं।'

मेहमान ने पूछा—'क्या मै उनसे बात कर सकता हूँ? उनकी जिन्दगी के बारे मे कुछ पूछना चाहूगा।'

'क्यो नही?' कहकर मेजबान ने आवाज देकर करीम को बुलाया बोला—'बड़े मियाँ, जरा यहाँ आइये। आइये, इस शर्बत मे तो शरकत कीजिए। अपनी बीबी मोहतरिमा को भी लेते आइये।'

करीम बीबी के साथ यहाँ आया। मेहमानो को और मालिक को सलाम किया। फिर मुँह से दुआ दुहराता हुआ वही दरवाजे के पास नीचे बैठ गया। बीबी उधर परदे के पीछे से आई और मालकिन के पास जाकर बैठ गई।

शर्बत का गिलास करीम को दे दिया गया और जबाब मे करीम ने झुककर शुक्रिया माना। मुँह से लगाया और फिर गिलास नीचे रख दिया।

उन मेहमान ने कहा—'हजरत यकीन है कि आपको हमे देखकर कुछ रञ्ज हो आता होगा। अपनी पहली खुशबख्ती के बाद आज की यह बदबख्ती आपको जरूर नागवार गुजरती होगी।'

करीम मुस्कराया। बोला—'अगर मैं आपको कहूँ कि असल मे खुशी क्या है और खुश-किस्मती क्या है, तो आप मेरा यकीन करेंगे। इससे बेहतर हो कि आप मेरी बीबी से पूछकर देखे। वह औरत है और जो मन मे होगा वही उसकी जबान पर आ जायगा। वह आपको सब

हकीकत बयान कर देगी।'

यह सुनकर मेहमान पर्दे की तरफ मुखातिब हुए। बोले—'बडी बीबी पहले अमीरी के दिनो के मुकाबिले आज की यह बदबख्ती आपको भला क्यो कर बर्दाश्त होती होगी ?'

उन मोहतरिमा ने पर्दे के पीछे से इसके जबाब मे कहा—'जनाब हकीकत उल्टी है और अर्ज करती हूँ। मैं और मेरे खाविंद, हम दोनो पूरे पचास साल सुख की तलाश मे रहे। अब तक वह कही पाया नही पर इन पिछले दो साल से जब हमारे पास कुछ नही रह गया है और मेहनत करके हम जीते है, मालूम होता है कि हमको असली सुख मिला है और जो आज है उससे बढकर हम कुछ नही चाहते।'

मेहमानो को सुनकर अचम्भा हुआ और मालिक मोहम्मद शाह भी ताज्जुब मे रह गये। वह तो उस तक बढे और पर्दे को पीछे खीच दिया ताकि सब नजर भर उन मोहतरिमा को देख सके।

वह खडी थी।

वह खडी थी, सीने पर हाथ बँधे थे और अपने बूढे खाविन्द की तरफ देख रही थी। मुस्कराहट उनके चेहरे पर थी और उधर बूढे करीम के मुँह पर भी मुस्कराहट थी।

वह कहने लगी—'हकीकत कहती हू। इसे मजाक न गिनियेगा।' पचास साल तक हम खुशी की तलाश मे रहे, लेकिन भटकते रहे। दौलत थी, तब तक खुशी नही हासिल हो सकी। अब जब सब जाता रहा है और मेहनत की नौकरी पर हम लोग लगे है, तब आकर वह खुशी भी मिली है जिसकी तलाश थी। अब हमे और कोई चारा नही है।'

मेहमान ने पूछा—'लेकिन उस खुशी का सबब क्या है ? राज क्या है ?

'सबब और राज यह है', उन्होने कहा, 'कि जब दौलत थी तब हम दोनो के, यहाँ तक कि आपस मे बात करने का वक्त भी नही

मिलता था। न खुदा का नाम ले पाते थे, न अपनी रूहानी भलाई की कुछ बात सोच पाते थे। मेहमान आये दिन बने रहते और हमे धुन रहती कि क्या तश्तरियाँ उनके आगे पेश की जायँ, और क्या खातिर की जाय कि वे पीठ पीछे हमारी बुराई न करे, वाह्-वाही करे। उनसे छूटने पर नौकरो की फिक्र लग जाती। वे काम से आँख बचाते और खाने के वक्त अच्छा चाहते थे। उधर हमारी कोशिश रहती कि उनसे ज्यादा-से-ज्यादा काम वसूल किया जाय, और एवज मिले कम-से-कम। इस तरह गुनाह का एक चक्कर चलता रहता था। फिर बराबर डर बना रहता था कि कोई बछिया न मर जाय, घोडा न जाता रहे। चोर का डर रहता था और जगली जानवर का डर रहता था। रात जागते बीतती थी कि कही कुछ नुकसान न हो रहा हो। और रह-रह कर और उठ-उठकर हम माल की चौकसी करते थे। एक फिक्र मिटती कि दूसरी आ दबाती। और नही तो ऐसी बात सोचते कि जाडो मे अब चरी का कैसे पूरा डालना होगा और फिर हम दोनो मे अक्सर तफरका पड जाया करता।

वह कहते ऐसे होना चाहिए, मैं कहती कि नही वैसा होना चाहिए। इस तरह हम झगडे पैदा किया करते। अगर्चे फिर मिल भी जाते। गर्ज की एक मुसीबत से दूसरी मुसीबत और एक गुनाह से दूसरा गुनाह सिल-सिला इसी तरह चलता रहता और जिसे सुख कहा जाय, वह नाम को न मिल पाया।

'और अब ?'

'अब सबेरे उठते है तो हम दोनो के मन हलके रहते है। बीच में तनाव की कोई बात नही रह गई। अब मुहब्बत और दिल का इत्मीनान हमारा नही टूटता। कोई फिकर अब हमे नही है। यही ख्याल रहता है कि मालिक की खिदमत कैसे अन्जाम दे। जितना कस है उतना हम काम करते है, और इरादा नेक देखते है। सोचते है कि हमारे मालिक को नुकसान न होने पाये, नफा ही हो। काम से लौटकर

आते हैं तो खाने-पीने को हमे मिल जाता है, सर्दी मे तापने को आग मिल जाती है और कपडा भी तन को काफी हो जाता है। अब मन की दो बात करने को भी समय है। खुदा का नाम ले सकते हैं और आकबत की सोच सकते है। पचास साल तक सुख की तलाश मे भटके। आखिर अब हमे वह मिला है।'

मेहमान हँसने लगे—

लेकिन करीम ने कहा—'हँसिये नही, मेहरबान। मजाक की बात यह नही है। जिन्दगी की हकीकत बयान की है। हम भी पहले बेवकूफ बने और दौलत के चले जाने पर रज मानने लगे थे। पर अब खुदावन्द करीम ने असलियत हम पर जाहिर कर दी है। वही आपसे अर्ज की है। अपनी तसल्ली के लिए नही, बल्कि सच पूछिए तो आपकी भलाई के वास्ते।'

और उनके साथ के वायज मुल्लो ने उस बात की ताईद की।

कहा—'बेशक, यह सही है। करीम ने हकीकत कही है। कुरान शरीफ मे हजरत पैगम्बर ने भी यही फर्माया है।'

यह सुनकर मेहमानो का हँसना रुक गया और चेहरे सजीदा हो आये। ●

: १२ :

आदमी और जानवर

एक दिन किसान सवेरे तड़के हल-बैल लेकर अपने खेत की तरफ चला। साथ रोटी ले ली। खेत पर पहुँचकर उसने हल सम्भाला

और रोटी चादर मे लपट कर एक झाड़ी के नीचे रख दी। फिर काम मे लग गया। दोपहर तक काम करते-करते बैल थक गया और उसे भी भूख लग आई। तब उसने बैल को चरने खोल दिया, हल को एक तरफ किया और चादर मे रक्खी अपनी रोटी लेने बढ़ा। चादर उठाई, पर यह क्या! रोटी क्या हुई? उसने यहाँ देखा, वहाँ देखा चादर को उल्टा-पल्टा, झाड़ा, लेकिन रोटी वहाँ थी कहाँ? किसान को माजरा कुछ समझ मे न आया।

उसने सोचा कि है यह अचरज की बात। मुझे दीखा नही तो क्या, पर कोई न कोई यहाँ आया जरूर है और रोटी ले गया है।

असल मे वहाँ था पाप-दानव का चर। किसान उधर काम कर रहा था कि उसने ही रोटी चुरा ली थी। अब भी वह झाड़ी के पीछे छिपा बैठा था, आशा मे था, कि किसान रोये-झीकेगा, बकेगा और बद्दुआएं देगा। रोटी चले जाने पर कृषक दुखी तो हुआ, पर सोचा कि अब हो क्या सकता है। आखिर उसके बिना कोई मैं भूखा तो मर ही नही गया। और जिसने रोटी ली होगी जरूरत की वजह से ही ली होगी। सो चलो, उसका ही भला हो।

यह सोच, पास के कुएँ पर जा, उसने भर पेट पानी पिया और थोड़ा-सा सुस्ताने लगा। तनिक विश्राम के बाद अपना बैल ले, जोत, फिर खेत गोड़ने मे लग गया।

यह देख वह चर मन-ही-मन फीका पड गया। सोचा था कि किसान मन मैला करेगा और कोसा-कासी करेगा। पर उसने तो किसी के लिए एक बुरा शब्द नही निकाला।

सो इसकी खबर उसने जाकर दी अपने मालिक पाप-दानव को। बताया कि मैंने तो उस किसान की रोटी तक चुरा ली, लेकिन उस भले आदमी ने गाली तो क्या देना, उल्टा कहा कि जिसने ली हो चलो, उसी का भला हो। दानव सुनकर बहुत बिगडा कि शर्म की बात है कि आदमी तुमसे बढ़ जावे। तुम अपना काम नही जानते। अगर किसान

लोग और उनकी बीबियाँ ऐसी नेक होने लगी तो फिर दानव कुल वालो का क्या ठिकाना रहेगा। समझे ? फौरन वापस जाओ और बिगडी बात बनाओ। तीन साल के अन्दर तुमने किसान की नेकी पर काबू नही पा लिया तो तुमको वैतरनी मे फेक दिया जायेगा। सुना ? अब जाओ।

चर मालिक की धमकी पर सहमा-सहमा पृथ्वी पर वापिस आया। सोचने लगा कि क्या करूँ, क्या न करूँ कि मेरा काम पूरा हो। खूब सोचा, खूब सोचा। आखिर एक युक्ति उसे सूझी !

उसने एक मजूर का वेष धरा और जाकर उसी किसान के यहाँ नौकरी कर ली। पहले साल उसने कहा कि इस बार दलदली जमीन मे नाज बोओ। किसान ने उसकी बात पक्की रखकर वैसा ही किया। विधि की करनी कि उस साल खूब सूखा पडा और सबकी फसल धूप के ताप मे प्यासी मारी गई। लेकिन इस किसान की खेती खूब फूली और फली। पौध खूब लम्बी हुई और खूब घनी और बाल मे दाना भी बडा आया।

कट कर इतना नाज हुआ, इतना नाज हुआ कि उस बरस को भी काफी हुआ और आगे के लिए भी बहुतेरा बच गया।

अगले साल उस चर ने सलाह दी कि अबकी टीले वाली जमीन पर बोना चाहिए। बात मानी गई और वही बीज डाला। उस साल वर्षा इतनी हुई कि बहुत। दूसरे सब लोगो की खेती झुक गई, गल गई और बाल मे दाना भी नही पडा। पर चर के मालिक किसान के खेत टीले पर बालो की झूमर पहने लहराते रहे, उनका कुछ नहीं बिगडा। इस साल पहले से भी ज्यादा गल्ला किसान को बचा। अब तो उसके खलिहान इतने अटा-अट भर गये कि उसे समझ मे न आता था कि इस सब का क्या करूँ।

ऐसे समय उस चर ने मालिक को बताया कि इस तरह नाज में से खीचकर दारू तैयार की जा सकती है और दारू वह चीज है कि

क्या कहा जाय। उसकी निसबत बस किसी से नही दी जा सकती।

किसान ने वही किया। तेज शराब तैयार की। खुद पी और दोस्तो को पिलाई। इतना करके वह चर अपने मालिक दानव के पास आया। कहा, 'मालिक मैंने कामयाबी पाली है और आपका काम पूरा हो गया है।'

दानव ने कहा—'अच्छा हम खुद चलकर देखते है कि तुमने क्या किया है।' दानव और चर दोनो किसान के घर आये। देखते क्या है कि वहाँ तो पास-पडोस के आसूदा किसान निमन्त्रित है और शराब की दावत दी जा रही है। एक जशन समझो। किसान की स्त्री साकी बनी मेहमानो को शराब दे रही है।

इतने मे किसी से टकराकर स्त्री लडखडाई और शराब उसके हाथ से बिखर गई। इस पर पति ने कहा कि कम्बख्त तुझे कुछ सूझता नही है। इस नियामत का क्या तूने ऐसी-वैसी चीज समझ रखा है कि लुढकाती फिरती है? कमीनी बेहया?

चर ने धीमे-से कुहनी मारकर अपने मालिक को दिखाया कि देखिए, यही वह आदमी है जिसने अपने मुँह की रोटी छिन जाने पर भी गुस्सा नही किया था। किसान औरत को अलग हटाकर, अब भी उस पर तर्राता हुआ खुद जाम भर-भरकर लोगो को देने लगा। इतने मे एक गरीब मेहनती काम से लौटते हुए उधर ही आ निकला। वह पार्टी मे निमन्त्रित नही था। लेकिन सब को जय राम जी करता हुआ वह भी वहाँ आन बैठा। हारा-थका था। सबको पीता देख जी हुआ कि उसे भी एक घूंट मिले, वह बैठा रहा, बैठा रहा। मुँह मे उसके पानी आ-आ गया। लेकिन मेजबान किसान ने उसे नही पूछा। उसने कहा कि हर ऐरा-गैरा आ जाये तो उसे पिलाने को मै इतना कहाँ से लाता फिरूँगा, तुम्ही बताओ।

यह सब देख दानव प्रसन्न हुआ। लेकिन उसके चर ने कहा कि अभी क्या हुआ है, आप देखते जाइये। जाने क्या-क्या बाकी है।

क्या घर के क्या बाहर के, सबने खुलकर हाथ बँटाया। पहले दौर पर उन लोगो ने आपस मे चिकनी-चुपडी तकल्लुफ की बाते शुरू की। वह मायाचारी की बाते थी।

दानव सुनकर खुश हुआ और अपने चर को शाबाशी देने लगा। कहा कि शराब से कैसा लोमडी का-सा कपट उन्हे आ गया है। इस चीज मे अगर यह सिफत है कि लोग एक दूसरे को धोखा देना चाहने लगते है, तो बस फिर क्या है, फतह हुई रक्खी है।

चर ने कहा कि आप अभी देखते जाइये। अभी तो वे लोमडी की तरह एक दूसरे की तरफ दुम हिला रहे है और डोरे डाल रहे है। शराब का एक-एक दौर, तो वे जगली भेडिये बने दीखेगे।

सो सबने एक दौर और चढाया। उसके बाद उनकी बात-चीत फूहड होती जाने लगी। चिकनी-नमकीन बातो की जगह अब वे एक दूसरे को तरेरने और गालियाँ देने लगे। बक-झक हुई और मार-पीट की उनमे नौबत आ गई। देखते-देखते सब आपस मे झगडने लगे। मेहमान मेजबान का फर्क न रहा, बखेडे मे मेजबान भी शामिल हुए और उनकी भी गति बनी।

दानव इस सब करामात पर खूब प्रसन्न हुआ। चर से कहा कि यह काम तुम्हारा एक नम्बर का है। मै तुमसे खुश हूँ।

पर चर ने कहा कि अभी और बाकी है। आगे इससे भी बढकर दृश्य आप देखेगे। अभी भूखे भेडिये की तरह लड रहे है। एक जाम और वे सूअर की मानिद बन जायेगे। फिर तीसरा दौर चला। उसके बाद उनमे और सूअर मे फिर भेद ही क्या रह गया था। बेसुध वे चीखते थे और रेकते थे। कोई किसी की न सुनता था। उन्हे सम्भालना मुश्किल था। और एक दूसरे पर, गिर जाते थे।

फिर जशन बिखरने लगा। लोग लडखडाते, गिरते-पडते, एक-एक, दो-दो, तीन-तीन करके वहाँ से गलियो की राह बिदा हुए। चर का मालिक मेहमानो को रवाना करके बाहर आया कि वह भी मुँह के

बल औधा कीच मे गिरा। सिर से पैर तक लिथडा हुआ सूअर की भाँति वह वही बड-बडाता हुआ पडा रहा।

पाप-दानव यह सब देखकर अपने चर से सन्तुष्ट हुआ। कहा, 'शाबाश तुमने खूब चीज ईजाद की है। पहली भूल तुम्हारी सब माफ हुई। लेकिन मुझे बताओ कि वह चीज तुमने बनाई कैसे ? पहले तो जरूर उसमे तुमने लोमडी का खून डाला होगा, जिससे लोमडी की मायाचारी पीने वालो मे आ गई। फिर मालूम होता है कि भेडिये का खून उसमे मिलाया होगा। तभी तो भेडिये की तरह वे खूँखार बने दीखते थे। और अन्त मे सूअर का लहू भी रखा ही होगा कि वे सूअर की तरह बर्राने लगे। चर ने कहा कि नही, उस सबकी जरूरत नही हुई। मैंने तो बस इतना ही किया कि जिससे किसान के पास जरूरत से ज्यादा नाज हो जाय। जानवर का खून आदमी के अन्दर रहता ही है। खाने जितना अन्न उसके पास रहे तब तक असर दबा रहता है। वही इस किसान का हाल था। पहले तो मुँह का कौर छिनने पर उसका मन कडुवा नही हुआ, पर जब पास जरूरत से ज्यादा हो गया तो उससे मौज-मजे करने की तबियत उसमे हो आई। बस उस समय मैंने उसे मौज की यह राह दिखा दी—दारू। ईश्वर की दी हुई नियामतो मे से खीचकर अपने मजे के लिए जब वह दारू बनाने लगा तो लोमडी और भेडिया और सूअर सबकी तासीर उसके अन्दर से बाहर फूट आई। आदमी बस पीता रहे, फिर तो वह हमेशा जानवर बना रहेगा, इसमे शक नही। दानव ने चर की पीठ ठोंकी। पहली चूक के लिए उसे क्षमा किया और कारगुजारी के लिए अपनी नौकरी मे ऊँचे पद पर उसे बहाल किया।

●

: १३ :

काम, मौत और बीमारी

भारत के आदिम लोगो मे एक कथा प्रचलित है—

कहते है कि भगवान ने पहले-पहल आदमी तो ऐसा बनाया था कि उसे काम-धाम की जरूरत नही थी। न रहने को मकान चाहिए था, न पहनने को कपडे। तन यो ही पलता था और सबकी सौ बरस की उमर होती थी। और रोग-शोक का किसी को पता न था। कुछ काल बाद भगवान ने अपनी सृष्टि की ओर मुँह फेरकर देखा कि उसका क्या हाल है। देखते क्या है कि कोई अपने जीवन से खुश नही है और वहाँ कलह मची हुई है। सबको अपनी-अपनी लगी है और हालत ऐसी बना डाली है कि जीवन आनन्द के बदले क्लेश का मूल हो रहा है।

ईश्वर ने सोचा कि यह बात इसलिए हुई कि सब अलग-अलग अपने-अपने लिए रहते है।

इससे हालत को बदलने के लिए ईश्वर ने एक काम किया। ऐसा बन्दोवस्त कर दिया कि काम बिना जीवन सम्भव ही न रहे। सर्दी के दु ख से बचने के लिए रहने को जगह बनानी पडे। चाहे खोदकर गुफा बनाओ, चाहे चिनकर मकान खडे करो, और भूख मिटाने के लिए फल या अनाज बोना, उगाना और काटना पडे।

ईश्वर ने सोचा कि काम से उनमे सघ पैदा होगा और वे सम्मि-

लित बनेंगे। उन्हे औजार बनाने पडेगे। यहाँ से वहाँ तैयार माल ले जाना होगा। मकान बनायेगे। खेत जोतेगे और नाज बोयेगे। कात-बुनकर कपडा बनायेगे और इनमे कोई काम एक अकेले हो न सकेगा।

तब उन्हे समझ ही आ जायगी कि जितने मन से साथ होकर वे काम करेगे उतनी ही बढवारी होगी और जीवन फले-फूलेगा। यह बात उनमे एका ले आयेगी। और सबकी ऐसे बरकत होगी।

कुछ काल बीता और भगवान ने फिर सृष्टि की ओर ध्यान दिया कि अब क्या हाल है। अब लोग पहले से तो चैन मे है न।

लेकिन देखने मे आया कि हालत पहले से भी खराब है। काम तो साथ करते है (क्योकि और कुछ बश ही नही है)। पर सब साथ नही होते। उनमे दल-वर्ग बन गये है। वे अलग-अलग वर्ग एक दूसरे से काम के लिए छीना झपटी करते है और एक दूसरे की राह मे रोक बनते है। इस खीच-तान मे समय और शक्ति बरबाद जाती है। सो सबकी हालत बिगडी है और दिन-दिन बिगडती जाती है।

भगवान ने सोचा कि यह भी ठीक नही। अब ऐसा करे कि आदमी को अपनी मौत का पता न रहे। उसके बिना जाने किसी घडी वह आ जाय। आयु उसकी निश्चित न रहे। ऐसे आदमी सँभल जायगा।

सो इसी प्रकार व्यवस्था भगवान ने कर दी। उन्होंने सोचा कि मौत का ठीक-ठिकाना आदमी को नही रहेगा तो एक-दूसरे से छीना-झपटी भी वह नही करेगे। उन्हे ख्याल होगा कि जाने कै घडी की जिन्दगी है, सो ऐसे जिन्दगी के थोडे से क्षणो को चलो, क्यो नाहक हम बिगाडे।

लेकिन बात उल्टी हुई। भगवान जब फिर अपनी सृष्टि को देखने आये तो क्या देखते है कि वहाँ तो जीवन पहले से बल्कि उससे भी ज्यादा, खराब है।

जो बलवान थे, उन्होने यह देखकर कि आदमी तो चाहे जब मर

सकता है, कमजोरो को मौत दिखाकर बस कर लिया है कुछ को मार दिया। औरो को उसने डर से ही डरा दिया। होते-होते यह होने लगा कि वे ताकतवर लोग और उनकी सन्तान काम से जी चुराने लगी। उन्हे समय काटना ही सवाल हो गया और अपना आलस बहलाने के नाना उपाय वे करने लगे। और जो कमजोर थे, उन्हे इतना काम करना पडने लगा कि दम मारने की फुरसत न मिलती। ऐसे दोनो तरह के लोग एक-दूसरे से खार खाते थे और बचते और डरते थे। दोनो दु खी थे और आदमी का जीवन पहले से गया-बीता और दूभर होता जाता था। यह देखकर ईश्वर ने सुधार की तदबीर की। सोचा कि यह उपाय पक्का होगा। बहुत सोच समझकर आदमी के बीच तरह-तरह की बीमारियाँ भेज दी। सोचा कि हरेक के सिर पर जब बीमारियाँ खेलती रहा करेगी तो जो अच्छे होगे, वे बीमार पर और दुर्बल पर दया करेगे और सहाय करेगे, क्योकि जाने वे खुद बीमारी मे कब फस जाये। वे औरो पर दया करेगे तभी अपने लिए दया की आस उन्हे हो सकेगी। यह इन्तजाम करके भगवान निश्चिन्त हुए। लेकिन फिर जो अपनी उस सृष्टि को देखने वह आये, जिसे अपनी करुणा मे उन्होने बीमारियो का दान दिया था, तो देखते है कि आदमी की हालत बद से बदतर है। उनकी भेजी बीमारियो से वह मिलना तो क्या, उल्टे आपस मे और भी कटने-बँटने लगे है। ताकतवर लोग अपनी बीमारी मे कमजोरो से और भी मेहनत कराने और अपनी सेवा लेने लगे है। लेकिन खुद जब वे सेवक बीमार पडते है। तो उन्हे पूछते भी नही है और जिन्हे इस तरह खूब काम मे जोता जाता और बीमारी मे सेवा ली जाती है। वे खिदमत करते-करते थकान से ऐसे चूर हो जाते है कि बीमारी मे अपनी या अपनो की कोई मदद नही कर सकत, और बस भाग-भरोसे हो रहते है। तिस पर धनी आदमियो ने इन गरीब लोगो के लिए खैराती अस्पताल वगैरह खडे कर दिये है कि जिससे अपनी मौज मे विघ्न न पडे और गरीब

दूर-ही-दूर रहे। वहाँ अस्पताल मे गरीब बेचारे अपने सगे-स्नेहियो की सेवा से दूर हो जाते है कि जिससे थोडा ढॉढस उन्हे पहुँच सकता था। फिर वहाँ ऐसे किराये के आदमियो और नर्सों के पल्ले वे पडते है कि जो बिना किसी दया-ममता के —बल्कि कभी तो झीक और तिरस्कार के साथ दवा उनके गले उतार दिया करते है। तिस पर कुछ बीमा-रियो को छूत की मान लिया जाता है और वह लग न जाय, इस डर से बीमारो से बचा जाता है और जो बीमार के पास रहते है। उन तक से दूर रहा जाता है।

यह देखकर भगवान ने मनमे कहा कि अगर ऐसे भी इन लोगो को यह समझ नही आता है कि इनका सुख किसमे है तो फिर उन्हे दु ख ही मिलने दो। दु ख भोगकर ही वे समझेगे। यह सोच भगवान ने उन्हे उन पर छोड दिया। इस तरह आदमी को आजाद हुए मुद्दत बीत गई कि अब कही कुछ उनमे से समझे है कि कैसे वे प्रसन्न रह सकते है और रहना चाहिए। काम कुछ के लिए हौआ हो और दूसरो के लिए नित का कोल्हू यह ठीक नही है। बल्कि काम से तो सब मिल-जुलकर आपस मे हेल-मेल और खुशी के साथ रहना सीखने की सुगमता होनी चाहिए। सिर पर जब मौत अडी-खडी है और किसी पल भी वह आ सकती है। तो वैसी हालत मे आदमी के लिए समझ-दारीका काम यही हो सकता है कि वह अपनी आयुके क्षण,छिन-पल और वर्ष प्रीति, सेवा और भक्ति मे बिताये। अब कही कुछ समझने लगे है कि बीमारी एक से एक को हटाने को नही है, बल्कि एक दूसरे को प्रेम के और सेवा के सूत्र मे पास लाने के लिए मिली है। ●

: १४ :

खोखला ढोल

इमेल्यान नाम का एक मजदूर एक दिन अपने मालिक के काम पर जा रहा था। जाते-जाते एक खेत की मेढ पर कही से मेढक फुदक-कर उसके सामने आ गया। मेढक इमेल्यान के पैर से कुचल गया था कि वह तो इमेल्यान की तरकीब से बच गया था। इतने मे सुना कि पीछे से कोई नाम लेकर पुकार रहा है।

मुडकर देखता है कि एक बडी सुन्दर लडकी है। उस लडकी ने कहा—'इमेल्यान, तुम शादी क्यो नही कर लेते हो ?'

इमेल्यान ने कहा कि भला मैं शादी कैसे कर सकता हूँ। जो पहने खडा हूँ वही कपडे मेरे पास है, और कुछ भी नही है। सो कौन मुझ से शादी करने को राजी होगा ?'

लडकी ने कहा—'तुम कहो तो मै राजी हूँ। मैं बुरी नही हूँ।'

लडकी इमेल्यान के मन को बहुत अच्छी लग रही थी। वह बोला—'तुम तो परी दीखती हो। पर मेरा ठौर-ठिकाना भी नही है। हम लोग रहेगे कहाँ और कैसे ?'

लडकी बोली – 'इसकी क्या सोच फिकर है ? आलस कम किया और मेहनत ज्यादा की तो अपने लायक खाने-पहनने को सब कही हो जायगा।'

इमेल्यान ने कहा—'यह बात है तो चल, शादी कर ले। लेकिन

बताओ कि चले कहाँ ?'

'आओ शहर चले ।'

सो इमेल्यान और लडकी दोनो शहर चले । वहाँ शहर के पहले सिरे पर एक झोपडी मे इमेल्यान को लडकी ले गई । दोनो की शादी हो गई और वे घर बसाकर रहने लगे ।

एक दिन शहर का राजा वहाँ से गुजरा । इमेल्यान की बीबी भी राजा की सवारी देखने झोपडी से बाहर निकली । राजा ने जो उसे देखा तो दङ्ग रह गया ।

राजा ने मन मे कहा—'ऐसी परी-सी सुन्दरी यहाँ-कहाँ से आ गई ।' उसने अपनी सवारी रोककर उसे पास बुलाया । पूछा—'तुम कौन हो ?'

सुन्दरी ने कहा—'मैं इमेल्यान किसान की बीबी हूँ ।'

राजा ने कहा—'ऐसी सुन्दर होकर तुमने किसान से ब्याह क्यो किया ? तुम तो रानी होने लायक हो ।'

सुन्दरी ने कहा—'आप मुझ से ऐसी बाते मत करो । मेरे लिए तो किसान ही अच्छे है ।'

इस कुछ देर की बात के बाद राजा की सवारी आगे बढ़ गई । लौटकर राजा महलो मे आ तो गया, पर इमेल्यान की स्त्री की मूरत उसके मन से दूर नही हुई । वह रात भर नही सोया । सोचता रहा, कैसे उसे पाऊँ । पर उसकी समझ मे कोई जुगत नही आई । तब उसने अपने नौकरो को बुलाया और कहा—कोई तदबीर उन परी को पाने की निकालो ।'

राजा के नौकरो ने बताया—'इमेल्यान को काम करने महल मे बुलाइये । यहाँ हम उससे इतना काम लेंगे, इतना काम लेंगे कि आखिर वह मर ही जाय । तब उसकी बीबी अकेली रह जायगी और आप उसे ले लीजिएगा ।'

राजा ने वैसा ही किया । फर्मान हो गया कि इमेल्यान महल मे

मे काम करने के लिए आवे और स्त्री के साथ वही रहे।

हुक्म इमेल्यान को मिला तब उसकी स्त्री ने कहा—'इमेल्यान, जाओ दिन भर काम करना, पर रात को सोने घर आ जाना।'

सुनकर इमेल्यान चला गया। महल पहुँचने पर राजा के दीवान ने पूछा—'इमेल्यान, बीबी को छोडकर तुम अकेले क्यो आये ?'

इमेल्यान ने कहा—'उसकी जगह तो बडी है। घर उससे बनता है। यहाँ उसे क्या ?'

राजा के महलो मे उस अकेले को दो आदमियो का काम दिया गया। आशा तो नही थी कि वह काम पूरा होगा, पर इमेल्यान उसमें जुट गया और शाम होते-होते अचरज की बात देखो कि काम सब पूरा हो गया। दीवान ने देखा कि काम सब निबट गया है। तब अगले दिन के लिए उससे चौगुना काम बता दिया।

इमेल्यान घर लौटा। वहाँ सब चीज साफ-सुथरी थी, खाना तैयार था, पानी गरम रक्खा था और बीबी बैठी कपडे सी रही थी और पति की बाट देख रही थी। उसने पति की आवभगत की, हाथ-पैर धुलाये, खाने-पीने को दिया और काम की बात पूछी।

इमेल्यान ने कहा कि काम की बात क्या पूछती हो ? काम तो इतना है कि बिसात से ज्यादा। काम के बोझ से मुझे मारना चाहते है।

स्त्री ने कहा—'काम के बारे मे झीकना अच्छा नही होता। काम के वक्त आगे पीछे नही देखना चाहिए। कि इतना हमने कर लिया, कितना बाकी रह गया। बस काम करते चलना चाहिए। बाकी सब अपने आप ठीक हो जायगा।'

सुनकर इमेल्यान बे-फिकरी से रात को सोया। सबेरे उठकर वह काम पर गया और बिना दाऍं-बाऍं देखे उसमे लगा रहा। होन की बात कि साँझ से पहले सभी काम पूरा हो गया और अँधेरे होते-होते रात बिताने वह अपने घर पहुँच गया।

राजा के लोग दिन-ब-दिन उसका काम बढाते गये। पर हर रोज शाम होने से पहले सब काम खत्म हो जाता और इमेल्यान सोने अपने घर पहुँच जाता। ऐसे एक हफ्ता बीत गया। राजा के नौकरो ने देखा कि भारी काम दे-देकर तो वे इमेल्यान का कुछ नही बिगाड सकते। उन्होने तब से मुश्किल और बारीक काम दिया। पर उससे भी कुछ न हुआ। क्या बढई का, क्या राजगीरी का और क्या और तरह का, सब काम इमेल्यान ठीक तरह और ठीक वक्त से पहले कर देता और रात मजे से घर रवाना हो जाता ऐसे इसका हफ्ता भी निकल गया।

इस पर राजा ने अपने आदमियो को बुलाकर कहा—'क्या मै तुम्हे मुफ्त का माल खिलाता हूं? दो हफ्ते बीत गये है, तुमने क्या करके दिखाया? कहते थे, तुम काम से इमेल्यान को थका दोगे। पर शाम होती नही कि खुशी से उसे रोज गाते हुए घर लौटते मैं अपनी आँखो से देखता हूँ। क्या तुम लोग मुझे बेवकूफ बनाना चाहते हो?'

बादशाह के सामने वे लोग इधर-उधर करने लगे। बोले—'हमने बस तो भारी-से-भारी काम उसे दिया। पर उसने तो सब ऐसे साफ कर दिया जैसे झाड़ू से बुहार दिया हो। वह तो थकता ही नहीं। फिर हमने बारीक काम सौपे। उन्हे भी उसने पार लगा दिया। कुछ भी काम दो वह सब काम कर देता है। जाने कैसे? वह या उसकी बीबी, कोई न कोई जादू जरूर जानते मालूम होते है। हम तो खुद उससे तङ्ग है। हाँ एक बात सोची है। इमेल्यान को बुलाया जाय, कहा जाय कि महल के सामने दिन भर के अन्दर एक मन्दिर की इमारत तुमको खडी करनी है। अगर वह न कर सके तो उसका सिर कलम कर दिया जाय।'

राजा ने इमेल्यान को बुला भेजा। कहा—'सुनो इमेल्यान, महल के सामने एक नया मन्दिर बनवाना है। कल शाम तक वह तैयार हो जाना चाहिए। अगर कर दोगे तो इनाम दूंगा। नही

करोगे तो सिर उतरवा लूँगा ।'

बादशाह की आज्ञा चुपचाप सुनी और इमेल्यान लौटकर चला आया। उसने सोच लिया कि अब जान गई। घर पहुँचकर पत्नी से कहा—'सुनती हो ? अब तैयारी करो और यहाँ से भाग चलो, नहीं तो बे-मौत मरना होगा।'

उसकी स्त्री ने कहा—'ऐसे डर क्यो रहे हो ? और हम क्यो भाग चले ?'

इमेल्यान ने कहा—'डरने की बात ही है। राजा ने कल-कल मे एक पूरा नया मन्दिर खडा करने का हुक्म दिया है। नही कर सकूँगा तो सिर देना होगा। बस, बचने की एक ही राह है। वह यह कि वक्त रहते हम लोग यहाँ से भाग चले।'

लेकिन उसकी बीबी ने इस बात को अपने कान पर नही लिया। बोली—'राजा के पास बहुत से सिपाही है। कही से भी वे हमे पकड लायेगे। हम बच नही सकते। और जब तक बस हो हमे राजा का हुक्म मानना चाहिए।'

'हुक्म मैं कैसे मानूँ जबकि काम मुझ से होना मुमकिन नही है।'

स्त्री ने कहा—'तो भी जी क्यो हलका करते हो ? जो होगा देखा जायगा। अभी तो, खा-पीकर आराम से सोओ। सबेरे तडके उठ जाना और सब ठीक हो जायगा।

इस पर इमेल्यान आराम से सोया। अगले दिन पौ फटते ही बीबी ने उसे जगाया। कहा—'झटपट तैयार होकर जाओ और मन्दिर का काम पूरा कर डालो। यह हथौडी है, ये कीले है। अभी एक दिन के लायक बाकी काम मिलेगा।'

इमेल्यान शहर मे गया। चौक मे पहुँचा तो देखता क्या है कि मन्दिर बना-बनाया खडा है। पर ऊपरी कुछ काम करने मे लग गया जो शाम तक सब पूरा हो गया।

राजा ने जगने पर देखा कि सामने मन्दिर तैयार खड़ा है और

इमेल्यान यहाँ-वहाँ कुछ कीले गाड रहा है। मन्दिर बना देखकर राजा को खुशी नही हुई। इमेल्यान को सजा अब कैसे दूं ? और उसकी बीबी कैसे हाथ लगे ?

फिर उसने नौकरो को इकट्ठा किया। कहा—'इमेल्यान ने यह काम भी पूरा कर दिया। बताओ उसे किस बात पर खत्म किया जाय ? इस बार कोई पक्की तरकीब निकालो। नही तो उसके साथ तुम सबके सिर उतारे जायेगे।'

इस पर दोनो ने तय किया कि इमेल्यान से महल के चारो तरफ एक दरिया बहाने को कहा जाय। जिसमे किश्तियाँ तैर रही हो। और किनारे-किनारे पक्के घाट हो। राजा ने इमेल्यान को बुला भेजा यही हुक्म सुना दिया। कहा—'अगर एक दिन मे पूरा मन्दिर बना सकते हो तो यह काम भी एक रात मे कर सकते हो। कल सब हो जाय। नही तो तुम्हारा सिर धड पर न रहेगा।'

इमेल्यान अब सब आस छोड बैठा और भारी जी से घर आया। घर मे पत्नी ने पूछा—'ऐसे उदास क्यो हो ? राजा ने और नया काम बताया है ?'

जो हुआ था, इमेल्यान ने कह सुनाया। बोला—'चलो, अब भी भाग चले।'

लेकिन बीबी ने कहा—'राजा के सिपाही हैं। उनसे कहाँ बचेंगे। जहाँ पहुँचोगे, वही से पकड लेगे। इससे भागना नही, हुक्म मानना ही भला है।'

'लेकिन मुझसे उतना सब काम कैसे होगा ?'

स्त्री ने कहा—'जी मत छोटा करो। खा-पीकर आराम से सोओ। सबेरे उठ पडना और भगवान ने चाहा तो सब ठीक हो जायगा।'

चिन्ता छोडकर इमेल्यान सो गया। सबेरे ही उसकी पत्नी ने उठकर कहा—'उठो, अब महल जाओ। वहाँ सब तैयार है। महल

के सामने दरिया के किनारे जरा जमीन उठी हुई है। लो यह फावडा, उसे हमवार कर देना।

सबेरे उठते ही राजा ने अचम्भे से देखा, जहाँ कुछ नही था, वहाँ दरिया मौजे ले रहा है। पाल खोले किश्तियाँ तैर रही है। राजा को अचरज तो हुआ, पर न तो पानी से भरी नदी और न उस पर खेलती हुई हँसिनी-सी नौकाओ को देखकर उसके मन मे जरा खुशी हुई। इमेल्यान को पकड न पाने पर वह इस कदर बेचैन था। उसने सोचा कि अब मैं करूँ तो क्या करूँ। यह सोचकर उसने फिर अपने नौकरो को बुलवाया।

'देखो तुम लोग।' राजा ने कहा, कोई-न-कोई काम निकालो जो उससे न हो। समझे ? जो कहते है वह सब कर देता है। और अब तक उसकी औरत हमको नही मिल सकी है।

सोचते-मोचते नौकरो ने एक युक्ति लगाई। राजा के पास जाकर कहा--'इमेल्यान को बुलाकर कहिए कि देखो इमेल्यान, वहाँ जाओ कि जाने कहाँ और वह चीज लाओ कि जाने क्या। तब वह बचकर नही निकल सकेगा। वह फिर जहाँ कही भी जायगा, आप कह दीजिए कि वहाँ के लिए नही कहा था। और जो लायगा, कह दीजिए कि वह हमने मँगाया ही नही था। यह कहकर मौत की सजा दे दीजिए और उसकी बीबी ले लीजिए।'

राजा सुनकर खुश हुआ—'यह तुमने ठीक सोचा है।'

इमेल्यान को बुलाया गया और राजाने कहा—'इमेल्यान, वहाँ जाओ कि जाने कहाँ और वहाँ से वह लाओ कि जाने क्या। अगर नही ला सके तो तुम्हारा सिर सलामत नही है।'

इमेल्यान ने घर जाकर बीबी से राजा की बात कह सुनाई। सुनकर बीबी सोच मे पड गई। बोली— लोगो ने राजा को इस बार तुम्हे पकडने की ठीक तरकीब बता दी है। अब हमे होशियारी से चलना चाहिए।'

यह कहकर वह बैठी सोचती रही। आखिर बोली—'देखो दूर एक दादी बुढिया है। सिपाहियो की वह धरती-माँ जैसी है। उससे मदद माँगना। अगर वह तुम्हे कुछ दे या बताये, तो उसे लेकर महल मे आना। मैं वही रहूगी। मैं अब राजा के लोगो से नही बच सकती। वे मुझे जबर्दस्ती ले जायेगे। पर थोडे दिन की बात है। अगर तुम दादी की बात पर चलोगे तो मुझे जल्दी बचा लोगे।'

उसने यात्रा के लिए पति को तैयार कर दिया। साथ मे कुछ कलेवे को बाँध दिया और चरखे का एक तकुआ दे दिया। कहा—'देखो, यह तकुआ दादी को देना। इससे वह पहचान जायगी कि तुम कौन हो।' यह कहकर ठीक रास्ता बताकर उसे भेज दिया।

इमेल्यान चलते-चलते एक जगह पहुँचा, जहाँ सिपाही कवायद कर रहे थे। इमेल्यान खडा होकर उन्हे देखने लगा। कवायद के पास बैठकर सिपाही आराम करने लगे। उसने पास जाकर पूछा—भाइयो, आप लोग जानते है कि कौन रास्ता जाने कहाँ जाता है। और मैं कैसे वह जाने क्या चीज पा सकता हूँ।'

सिपाहियो ने अचरज से उसकी बाते सुनी। फिर पूछा—'तुमको किसने यह काम देकर भेजा है।'

'मुझको राजा ने यह हुक्म दिया है।'

सिपाहियो ने कहा—हम भी जिस दिन से सिपाही की नौकरी मे आये है। उसी दिन से वहाँ जाने कहाँ जा रहे हैं और अभी कही नही पहुंचे है। और वह जाने क्या ढूंढ रहे है और अभी तक कुछ नही पा सके है। हमसे भाई, तुम्हें कुछ मदद नही मिल सकती।'

इमेल्यान कुछ देर सिपाहियो के साथ ठहर आगे बढ़ा। कोस-पर कोस चलता गया। आखिर एक जङ्गल आया। जङ्गल मे एक झोपडी थी और थी सिपाहियो की धरती-माँ, वही बुढिया दादी, चर्खे पर सूत कात रही थी और रो रही थी। कातते-कातते वह उँगलियो को ले जाकर मुँह के नही आँख के पानी से गीला करती थी। इमेल्यान को

देखकर बुढिया ने चिल्लाकर कहा—'कौन है ? तू यहाँ क्यों आया है ?

तब इमेल्यान ने वह तकुआ बुढिया को दिया और कहा—'मेरी स्त्री ने यह देकर मुझे तुम्हारे पास भेजा है।'

बुढिया इस पर एकदम मुलायम पड गई और हाल-चाल पूछने लगी। इमेल्यान ने सब बता दिया। कैसे लडकी मिली, कैसे वे ब्याह करके गाँव मे बसे, कैसे मन्दिर बनाया और किश्ती घाट वाला दरिया बनाया, और अब उसे राजा ने वहाँ जाने कहाँ और वह जाने क्या लाने का हुक्म देकर भेजा है—यह सब उसने बता दिया।

सुनकर दादी का रोना रुक गया। मनमे बोली—'अब मेरे सङ्कट कटने का वक्त आया है।' प्रकट मे इमेल्यान से कहा—'अच्छा बेटा, बैठो कुछ खा-पी लो।'

खिला-पिलाकर दादी ने बताया कि देखो, यह सूत का पिंड है, इसे लो और सामने लुढका दो। इसके सूत के पीछे पीछे तुम चलते जाना। चलते-चलते समन्दर तक पहुँच जाओगे। वहाँ एक बडा शहर दीखेगा। उसमे चले जाना। शहर के पास आखिरी मकान पर एक रात ठहरने को जगह माँगना। वहाँ आँख खोलकर रहना। तब तुम्हारी चीज मिल जायगी।

इमेल्यान ने कहा—'दादी, मै पहचानूँगा कि यही चीज है ?'

बुढिया ने कहा—'जब तुम ऐसी देखो जिसकी लोग माँ-बाप से भी ज्यादा सुने, समझ लेना वही है। उसी को राजा के पास ले जाना। तब राजा कहेगा, यह वह चीज नही है। तुम कहना, यह वह नही है तो लाओ मै उसे तोडे देता हूँ, और तब तुम उसे धमाधम पीटने लगना। पीटते-पीटते नदी तक ले जाना और टुकड़े-टुकडे करके उसे नदी मे फेक देना। तब तुम्हारी स्त्री तुम्हे वापस मिल जायगी और मेरे आँसू पुछ जायेंगे।'

इमेल्यान ने दादी को प्रणाम करके बिदा ली और सूत के गोले के पीछे-पीछे चला। गोला लुढ़कता और खुलता हुआ आखिर समन्दर

के किनारे तक पहुँच गया। वहाँ एक बडा शहर था और उसके दूसरे सिरे पर एक बडा मकान। इमेल्यान ने रात को ठहरने के लिए वहाँ जगह माँगी और मिल गई।

सबेरे उसने सुना कि घर मे बाप लडके को जगा रहा है कि भैया, उठकर जाओ, जङ्गल से कुछ लकडी काट लाओ।

लेकिन लडके ने सुना-अनसुना करके कहा—अभी बहुतेरा वक्त है। ऐसी जल्दी क्या है ?

माँ ने कहा—'उठो, बेटा जाओ। तुम्हारे पिताजी के बदन की हड्डी दुखती है। तुम नही जाओगे तो उन्हे जाना पडेगा। बेटा, दिन बहुत निकल आया है।'

पर लडके ने कुछ बहाना बना दिया और करवट लेकर फिर सो गया।

इमेल्यान ने यह सब सुना।

तभी एकाएक बाहर सडक पर से किसी चीज की जोर की आवाज होनी शुरू हुई। और देखता क्या है कि वह आवाज सुनते ही लडका फौरन उछलकर उठा और चट कपडे पहन घर से निकल भागा। इमेल्यान भी कूदकर देखने पीछे लपका कि क्या चीज है जिसका हुक्म लडका माँ-बाप से ज्यादा मानता है। देखता क्या है कि सडक पर एक आदमी पेट के आगे बाँध एक चीज लिए जा रहा है, जिसे वह दोनों तरफ दो कमचियो से पीट रहा है। वही चीज थी जो इस जोर से गूँज रही थी और जिसकी आवाज पर लडका घर से भाग आया था। वह चीज गोल थी। दोनो सिरो पर खाल मढी थी। पूछा, कि इसका क्या नाम है ?

लोगो ने बताया—'ढोल।'

'क्या यह अन्दर खोखला है ?'

'हाँ, अन्दर यह खोखला है।'

इमेल्यान ताज्जुब मे रह गया। उसने कहा—'यह हमे दे दो।'

पर देने वाले ने नही दिया । इस पर इमेल्यान ढोल वाले के पीछे-पीछे हो लिया । सारे दिन साथ लगा रहा । आखिर जब ढोल वाला सोया, तब ढोल उठाकर इमेल्यान भाग आया ।

भागा-भाग, भागा-भाग, आया अपनी बस्ती मे । पहले तो बीबी को देखने पहुँचा घर । पर वह वहाँ नही थी, इमेल्यान के जाने के अगले दिन उसे राजा के लोग ले गये थे । इस पर इमेल्यान महल की ड्योढी पर पहुँचा और खबर भिजवाई कि इमेल्यान लौट आया है जो वहाँ गया था कि जाने कहाँ और वह ले आया है कि जाने क्या ।

सुनकर राजा ने हुक्म दिया कि कह दो अगले दिन आवे ।

इस पर इमेल्यान ने कहलवाया —'मै वह चीज लेकर आया हूँ जो राजा ने चाही थी । राजा मेरे पास उसे लेने नही आ सकते तो मै ही उनके पास आता हूँ ।'

इस पर राजा बाहर आये । उन्होने पूछा —'अच्छा, तुम कहाँ गये थे ?' इमेल्यान ने ठीक-ठीक बता दिया ।

राजा ने कहा—'वह असली जगह नही है । अच्छा, लाये क्या ?'

इमेल्यान ने ढोल दिखा दिया । लेकिन राजा ने उसे देखा भी नही । कहा—'यह वह चीज नही है ।'

इमेल्यान ने कहा—'अगर यह वह चीज नही है तो मै इसे पीट-कर तोडे देता हूँ । फिर देखा जायगा ।'

यह कहकर इमेल्यान ढोल पीटता हुआ महल से बाहर निकल आया ।

ढोल का पिटना था कि पीछे पीछे राजा की फौज निकल आई और इमेल्यान को सलाम करके उसके हुक्म के इन्तजार मे खडी हो गई ।

राजा ने अपनी खिडकी मे से यह देखा तो अपनी फौज को चिल्ला-चिल्लाकर कहा कि इमेल्यान के पीछे मत जाओ । पर किसी ने कुछ नही सुना और सब ढोल के पीछे चल पडे । राजा ने जब यह

देखा तब हुक्म दिया कि इमेल्यान की बीबी उसको दे दो और वापस वह ढोल माँगा ।

पर इमेल्यान ने कहा—'यह नही हो सकता। इसको तोडकर मुझे नदी मे फेक देना है।'

यह कहकर इमेल्यान ढोल पीटता हुआ नदी की तरफ बढ गया। सिपाही सब उसके पीछे थे। नदी पहुँचकर ढोल के टुकडे-टुकडे करके इमेल्यान ने नदी की धार मे फेक दिया। और सिपाही सब अपने-अपने घर भाग गये।

तब इमेल्यान अपनी बीबी को साथ लेकर अपने घर पहुँच गया। उसके बाद राजा ने उन्हे नही सताया और वे सुख से रहने लगे। ●

: १९ :

दो साथी

एक बार की बात है कि दो बूढे आदमी थे। उन्हे परम तीर्थ-धाम येरूशलम के यात्रा दर्शन की चाह हुई। उनमे एक का नाम एफिम शुएव। यह एक खासा खुशहाल काश्तकार था। दूसरे का नाम एलीशा। एलीशा की हालत उतनी अच्छी न थी।

एफिम आदमी औसत तरीके का था। संजीदा इरादे का मज-बूत, आदत का नेक। शराब उसने जीवन मे कभी नही पी थी। न बीडी पीता था, न तम्बाकू। और कभी उसके मुँह पर गाली नही आती थी। दो बार वह गाँव मे सरपंच चुना गया था और उसके काम मे हिसाब पाई-पाई का दुरुस्त रहता था। बडा उसका कुनबा था। दो

बेटे थे और एक नाती का ब्याह भी हो गया था। और सब जने साथ रहते थे। वह मिलनसार था और साठ पार हो गये तब दाढी के एक-आध बाल कही चाँदी के होने शुरू हुए थे। एलीशा न सम्पन्न था, न दीन। काम उसका बढई गीरी का था और बाहर बस्ती मे जाकर मजदूरी कर लिया करता था। पर उमर हो आई तो बाहर अब नही जा सकता था। सो घर रहकर उसने मधुमक्खी पाल ली। उसका एक बेटा काम की तलाश मे दूर देश चला गया था। दूसरा घर रहता था। एलीशा दयावान और खुश मिजाज आदमी था। कभी कदास पी लेता था और सुघनी की आदती भी थी और गाने का भी शौक था। लेकिन आदमी वह शान्त प्रकृति का था और पास-पडौस के साथ या घर मे सबसे बनाकर रहता था। कद मे जरा नाटा, रङ्ग कुछ पक्का। दाढी घुँघराली घनी। और सिर अपने हमनाम पुराने ऋषि एलीशा की भाँति हमारे इन एलीशा का भी बालो से एकदम सूना था। इन दोनो वृद्ध जनो ने, एक मुद्दत हुई कि साथ येरूशलम की यात्रा को चलने का सकल्प किया था। लेकिन एफिम को फुरसत का समय नही निकला। काम उसे बहुत रहा करता था। एक निबटता कि दूसरा हाथ घेर लेता। पहले तो नाती की शादी की बात आगे आ गई। फिर अपने छोटे बेटे के लाभ पर से लौटने के इन्तजार मे रहने मे समय निकल गया। उसके बाद एक नये मकान के सिल-सिले मे मदद लगनी शुरू हो गई।

सो एक इतवार के दिन दोनो जने, जहाँ मदद लग रही थी, उस नये घर के आगे मिले। वहाँ बल्लियो के चट्टे पर बैठकर बाते करने लगे।

एलीशा ने कहा—'क्यो जी, वह यात्रा का सकल्प हमारा कब पूरा होने मे आयगा?'

एफिम का मुँह लटक गया। बोला—'अभी थोडी बाट और देखो। यह साल तो तुम जानो कैसे कठिन मुझे पडा है। सोचा था

रुपये दो-सौ एक मे यह झोपडी खडी हो जायगी। लेकिन चार-सौ से ऊपर लग गये और अभी कितना काम बाकी है। गर्मी आने तक और ठहरो। भगवान ने चाहा तो गर्मी मे जरूर ही जरूर चलेगे ?'

एलीशा ने कहा—'मेरी राय तो हे कि हमे जल्दी-से-जल्दी चल देना चाहिए। मौसम बसन्त का है, सो समय अच्छा भी है।'

'समय तो अच्छा है, लेकिन इस लगी मदद का क्या करू ? इसे छोड कैसे दूं ?'

'तुम तो ऐसे कहते हो, जो देखने-भालने को दूसरा कोई है ही नही। तुम्हारा बेटा ही जो है।'

'बेटा ! भला कही ! उसका इतवार मुझे नही है। कभी हजरत ज्यादा भी चढा जाते है।'

'भाई, आँख मिचने पर भी तो हमारे सब कुछ काम चलेगा न। सो बेटा बडा हुआ, आप भुगत के सब सीख जायगा।'

'तुम्हारा कहना तो ठीक है, लेकिन काम छेडा तो अब बीच मे उसे छोडा भी नही जाता है।'

'भाई सब कुछ तो इस जन्म मे पूरा हुआ नही है। उस दिन की बात है कि हमारे घर ईस्टर के लिए झाडा-बुहारी और सफाई-धुलाई हो रही थी। सो कुछ यहाँ करने को है तो कुछ वहाँ निपटाना है। इस तरह यह कर वह कर, बस यही लगा-लगी रही। फिर भी काम पूरा नही हुआ। सो बड़े बेटे की बहू जो हमारी है बडी समझदार है। बोली—'परब त्यौहार का दिन हमारी बाट नही देखता, यही गनीमत है। नही तो कितना ही करे, हम उसके लिए कभी तैयार न हो पाये और ऐसे त्यौहार कभी न मनें।'

एफिम सुनकर सोच-विचार मे पड गया। बोला—'इस झोपड़े पर मेरा खासा खर्चा आ गया है और यात्रा पर तुम जानो खाली हाथ तो जाया नही जाता। हरेक पर सौ सौ रुपया तो भी लगेगा। और सौ रुपया कोई छोटी रकम नही है।'

एलीशा यह सुनकर हँस पडा। बोला—'छोडो भी, कैसी बात करते हो। मुझ से दस-गुना तुम्हारे पास होगा। फिर भी पैसे की बात चलाते हो। मुझे बता दो कि कब चलना है, और आज पास कुछ नही तो क्या, तब तक मै चलने जोग कर ही लूंगा।'

एफिम भी इस पर हँसा। कहने लगा—'भई पता नही था कि तुम ऐसे रईस हो। अच्छा, यह रकम कहाँ से लाओगे ?'

'घर मे मिल-मिलाकर जमाँ-बटोर कुछ तो हो ही जायगा। वह काफी न हुआ तो कुछ मधुमक्खी के छत्ते एक पडौसी के हाथ उठा दूंगा। वह अरसे से लेना चाह भी रहा है।'

'अगर कही शहद उनसे पीछे खूब पका तो तुम्हे बेचने का अफसोस होगा।'

'अफसोस ? नही भई, अफसोस मै नही जानता। अपने पाप के सिवा मै किसी और बात के लिए पछतावा नही करता। भई अपनी आत्मा से बढकर तो दूसरा कुछ है नही।'

'सो तो ठीक है, फिर भी घर के काम-धाम का हर्ज करना भी ठीक नही लगता।'

'लेकिन आत्मा का हर्ज हो रहा है, सो ? यह तो उससे बुरी बात है ना। हम दोनो ने तीर्थ का सकल्प किया था। सो चलना ही चाहिए।'

[२]

एलीशा ने आखिर साथी को मोड ही लिया। खूब सोच-विचारने के बाद सबेरे के समय एफिम एलीशा के पास आये। बोले—'भई तुम्हारी बात सही है। चलो, चले। मौत-जिन्दगी परमात्मा के हाथ है। सो जब तक देह मे सामर्थ्य है और दम बाकी है तभी चल दो तो अच्छा है।'

'सो सात रोज के अन्दर दोनो जने प्रस्थान के लिए तैयार मिले। एफिम के पास नकद पैसा काफी हो गया। सौ-एक रुपया

उसने साथ ले लिया। दो सौ बीबी के पास छोड दिया।

एलीशा ने भी तैयारी कर ली थी। दस छत्ते उसने पडौसी को उठा दिये थे। जो नई मधुमक्खी की मुहाल पर उन छत्तो पर आकर लगे, वे भी उसी को। इस तमाम पर सत्तर रुपये उसे मिले। सौ मे के बाकी उसने अपने कुनबे के और लोगो से जमा बटोर कर पूरे कर लिए। इधर-उधर के और लोग सब खोखले ही रह गये। बीबी ने अपनी मौत के बाद क्रिया-कर्म के वास्ते बेचकर कुछ रख छोडा था सो सब दे दिया। बहू ने भी पास का सब कुछ सौप दिया।

एफिम ने अपने लडके को ठीक-ठाक पूरी तरह सब कुछ समझा-कर ताकीद दे दी थी कि कब और कितनी घास कहाँ से कटेगी, खाद का क्या इन्तजाम होगा और छत कैसी पडेगी। उसने एक-एक बात का विचार रक्खा था और पूरा बँदोबस्त समझा दिया था। दूसरी तरफ एलीशा ने अपनी बीबी को बस इतना कहा कि उन छत्तो को जो बेच दिये है न, अपनी मक्खी न लगने देना कि कही उनका शहद कम हो जाय। और देखना, सब छत्ते पूरे-के-पूरे पडौसी को मिल जायँ, कुछ अपनी तरफ से चूक न हो।

बाकी घर की और बातो के बारे मे एलीशा किसी तरह का कोई जिक्र भी मुँह पर नही लाया।

बोला—'जैसी जरूरत देखना, वैसा कर लेना। तुम्ही लोग तो मालिक हो। सो जो ठीक जानो अपने सोच-विचार कर वह कर ही लोगे।'

इस तरह दोनो वृद्ध जन तैयार हो गये। लोगो ने खाना बना-कर साथ बाँध दिया और पैरो के लिए पनहियाँ तैयार करके दे दी। जूते उन्होने एक जोडी पहन लिए, एक साथ रख लिए। परिवार के गाँव के किनारे तक साथ-साथ आये और वहाँ दोनो को विदा दी। दोनो जने अपनी यात्रा पर चल दिये।

एलीशा मन से हलका और प्रसन्न था कि घर-बार की सब बातें

उसने मन से भुला दी। उसको बस यह लगन थी कि अपने साथी को कैसे आराम से और खुश रक्खूं। किसी को कोई सख्त कडुआ शब्द न कहूँ और सारी यात्रा कैसी प्रीति और शान्ति से पूरी करूँ। सडक पर चलते हुए एलीशा या तो मन-मनमे प्रार्थना दुहराता रहता या सन्त-महात्माओ के जीवन पर विचार करता रहता। जो थोडा-बहुत उनके बारे मे उसने सुना-जाना था वही उसे बहुत था। रास्ते मे कोई मिलता और सबसे मीठे बैन बोलता। इस तरह मगन भाव से वह अपनी यात्रा पर आगे बढता रहा। एक बात बेशक उसके बस की नही हुई। सुघनी उससे नही छोडी गई। सुघनी की डिबिया तो उसने घर छोड दी थी, लेकिन उसके बिना अब उसे कल नही पडती थी। आखिर एक राहगीर ने उसे सुघनी दी। सुघनी पाकर वह फिर चलते-चलते राह मे रुक जाता कि कही उसके साथी को बुरा न लगे। या मन न चले। और पीछे रहकर सुघनी की वह जरा नक्की ले लेता और फिर आगे बढता था।

एफिम भी मजबूत तबियत से चल रहा था। कोई खोटा काम नही करता था और अहङ्कार के वचन नही बोलता था, लेकिन मन वैसा हलका नही था। घर की फिकर का बोझ उसके मन पर बना था। जाने घर पर कैसे चल रहा हो। देखो, बेटे से यह और कहने की याद न रही। और हाँ, वह भी नही बतलाया। लडका ठीक-ठीक चला भी लेगा कि नही। रास्ते में कही खाद की गाडी जाती उसे दीखती या आलू बोते हुए लोग मिलते तो एफिम के मनमें एकदम ख्याल होता कि घर पर हमारे सब काम ठीक-ठीक हो रहे होगे कि नही। उन्हे अपने हाथो से करके बता और समझा आऊँ।

इस तरह पाँच हफ्ते वे दोनो चलते गये। उनके जूतो के तले बेकार हो गये। छोटाकस आते-आते दूसरे जूतों के बँदोबस्त की उन्हें सोचनी पडी। घर से चले, तब से अब तक खाने और रात के ठहरने के उन्हें दाम देने हुआ करते थे। यहाँ आकर अब लोग उन्हे ठहराते,

खिलाते-पिलाते और बदले मे पैसा एक न छूते। इतना ही क्यो, आगे राह के लिए वे आग्रह के साथ खाना भी उनके साथ बाँध दिया करते थे।

कोई पाँच-सौ मील की यात्रा इन लोगो ने इस तरह वे-लागत की। इसके बाद जो जगह आई, वहाँ उस साल काश्त सूख गई थी। वहाँ के किसान लोग ठहरा तो मुफ्त लेते थे, पर खाना बेलागत नही दे सकते थे। सो कभी तो रोटी उन्हे मिलती भी नही थी। दाम देने को तैयार थे। पर रोटी मयस्सर नही होती थी। लोग बोले कि खेती पारसाल एकदम सत्यानाश हो गई। जिनके खलिहान भरे रहा करते थे, उन्हे ही अब घर का बासन-कूसन बेचना पड रहा है। उनसे कुछ उतरी हालत जिनकी थी, उनका हाल-बेहाल है। और जो गरीब थे, उनमे भाग गये सो गये, बाकी जो बचे माँग-ताँगकर पेट पालते या घर मे भूखो मर रहे है। जाडो मे तो चोकर और पत्तियाँ तन जोडे रहे।

एक रात दोनो आदमी देहात मे ठहरे। रात वहाँ नीद ली और अगले दिन तडका फूटने से पहले चल दिये। वहाँ से काफी रोटी ले रक्खी। धूप मे ताप पडने तक खासी राह उन्होने तय कर ली। कोई आठ मील चलने पर एक चश्मा आया। वहाँ दोनो जने बैठ गये और पानी लेकर उसके साथ रोटी भिगो-भिगोकर खाई। फिर पाँवो की पट्टी खोल जरा विश्राम किया। एलीशा ने अपनी सुँघनी की डिबिया निकाली देखकर एफिम ने ना पसन्दगी मे सिर हिलाया। कहा—'यह गन्दी क्या बात जी ? यह गन्दी लत तुम नही छोड़ पाते ?'

एलीशा ने कहा—'यह लत मेरे बस से भारी हो गई दीखती है। नहीं तो और क्या करूँ ?'

विश्राम के उपरान्त उठकर वे लोग वहाँ से आगे बढ़ लिये। कोई आठ मील चलने पर एक बडा गाँव और आया। जिसके ठीक बीच मे से गुजरना हुआ। अब घाम का ताप बढ गया था। एलीशा को थकान हो आई थी। और जरा वहाँ ठहर कर पानी पी लेने को उसका जी था। लेकिन एफिम बिना रुके चला जा रहा था। दोनो

मे एफिम अच्छा चलने वाला था और एलीशा को उसका हाथ पकडे रहने मे भी कठिनाई होती थी ।

एलीशा ने कहा—'जो कही यहाँ पानी मिल जाता तो अच्छा था ।'

एफिम ने कहा—'अच्छी बात, पियो पानी, पर मुझे प्यास नही है ।'

एलीशा ठहर गया । बोला—'तुम चलते चलो । मैं जरा उस झोपडी तक जाकर पानी पी आता हूँ । थोडी देर मे बढकर तुम्हारा साथ लूंगा ।'

'अच्छा ।'

यह कहकर एफिम सडक पर अकेला ही आगे बढ लिया । एलीशा झोपडी की तरफ मुडा । झोपडी छोटी-सी थी । दीवारें मिट्टी से पुती थी । फर्श काले रङ्ग का और इस्तेमाल से चिकना था । ऊपर सफेद पोता । लेकिन दीवारो की मिट्टी गिरने लगी थी । मालूम होता था, मिट्टी थोपे मुद्दत हो गई है । ऊपर एक तरफ से छप्पर-छत छिदीली थी । दरवाजे के आगे एक आँगन-सा था । एलीशा आँगन मे आया । देखा कि डण्डे का घेर जो घर के चारो तरफ खिचा हुआ है । उसके तले अन्दर एक आदमी ढेर की मानिन्द पडा है । देह का मज-बूत, दाढ़ी नही है, और कुर्ता पाजामे के अन्दर उडसा हुआ है । आदमी वह वहाँ छाया मे ही लेटा होगा, लेकिन अब सूरज घूमकर पूरा उसक ऊपर पड रहा था । वह सोया नही था, फिर भी पडा हुआ था । एलीशा ने उसके पास जाकर पानी माँगा । लेकिन आदमी ने कुछ जवाब नही दिया ।

एलीशा ने सोचा कि या तो बीमार है, या जान बूझकर सुनना नहीं चाहता । दरवाजे के पास गया तो अन्दर से एक बच्चे के रोने की आवाज आई । उसने कुण्डी पकड़ दरवाजे को खटखटाना शुरू किया ।

'भाई' कोई है ?'

एलीशा ने पुकारा । पर जवाब कोई नहीं । अपने डण्डे से किवाड़

को ठोकते हुए उसने फिर पुकारा, एजी, कोई सुनने वाला अन्दर है ?

पर कोई उत्तर नही ।

'ए सुनो, कोई है ?'

जबाब नदारद ।

एलीशा लौटने को हुआ । लेकिन तभी ऐसा मालूम हुआ कि जैसे दूसरी तरफ से कोई कराहने की आवाज उसके कान मे पडी हो ।

'कोई मुसीबत इन लोगो पर पडी मालूम होती है । चलूं । देखूं तो । और एलीशा झोपडी मे घुसा ।

खटका उसने खोला । दरवाजे की कुण्डी अन्दर से बन्द नही थी । वह सहज खुल गया और एलीशा जिस कमरे मे पहुंचा उसमे बाई तरफ एक चूल्हा था । सामने आले के ऊपर मसीह का क्रूस टंगा था । पास एक मेज थी, वही बेंच पडी थी । बेंच पर थी एक स्त्री । सिर उसका खुला था, तन पर अकेला एक कपड़ा । उमर की बुढ़िया थी । मेज पर सिर रक्खे झुकी बैठी थी । पास ही पोता मिट्टी-सा पीला दुबला एक बालक जिसका पेट आगे को निकला हुआ था । वह कुछ मांग रहा था और जोर-जोर से रो-कर बुढिया का पल्ला खीचता था, एलीशा घुसा तो हवा वहाँ की उसे बहुत गन्धीली मालूम हुई,उसने मुड़कर देखा तो चूल्हे के पास की धरती पर एक औरत और पडी थी आँखें बन्द थी, और गले मे कुछ घर-घर की आवाज हो रही थी । वह वहाँ चित्त पड़ी आसमान में रह-रहकर टाँगे फेंक रही थी । कभी उन टाँगो को सिकोडती, समेटती और फिर फेकने लगती । दुर्गन्ध वही से आ रही थी । मालूम होता था कि वह खुद उठ बैठ सकती है नही, न कोई और देखने-भालने वाला है । बुढ़िया ने सिर उठाया और आगन्तुक को देखा । बोली, 'क्या है ? कुछ चाहते हो ? यहाँ कुछ नही ।'

भाषा उसकी दूसरी थी । फिर भी एलीशा बात समझ गया । बोला, 'भगवान की दया हो । जरा पीने को पानी चाहता था ।'

'यहाँ कोई नहीं है, कुछ नहीं है । पानी काहे मे लाकर रक्खें ?

जाओ, रास्ता देखो।'

उस समय एलीशा ने पूछा—'क्यो जी, कोई तुममे नही जो यहाँ इस बिचारी बीमार को जरा सँभालने लायक हो ?'

'नही, कोई नही। लडका मेरा बाहर बेबस मर रहा है। यह यहाँ अन्दर मर रहे है।'

बच्चे ने एक नये आदमी को देखकर रोना बन्द कर दिया। लेकिन बुढिया बोली तो फिर उसने वही राग शुरू कर दिया। बुढिया का आंचल खीचकर बोला—'दादी रोटी, दादी रोटी।

एलीशा बुढिया से पूछने वाला था कि बाहर से वह आदमी लड-खडाता-लडखडाता वहाँ पहुँचा। वह दीवार को पकड़े-पकडे आ रहा था, पर कमरे मे घुसा कि देहली के पास धडाम से गिर पडा। फिर उठकर चलने और पास आने की उसने कोशिश नही की। वही से टूटती जवान मे बोलने लगा। एक शब्द निकलता कि फिर साँस लेने को वह रुक जाता और हाँफता हुआ फिर आगे का शब्द मुँह से बाहर होता।

बोला—'महामारी ने हमे पकड लिया है।'' और अकाल''''वह भूखा है ''''' ''' मर रहा है ''' ।'

इस पर उसने बच्चे की तरफ इशारा किया और खुद फूट-फूटकर रोने लगा।

इस पर एलीशा ने कन्धे पर लटके अपने बकुचे को पकड लिया और कमर पर से उतार कर धरती पर रख दिया। फिर बेंच पर उसे खोल उसमें से रोटी (डबल रोटी) निकाली। चाकू लेकर उसमे से एक टुकड़ा काटा और उस आदमी की तरफ बढ़ा दिया। लेकिन आदमी ने उसे तो लिया नही, बल्कि उस बच्चे और चूल्हे के पीछे दुबकी बैठी एक दूसरी लडकी को इशारे मे एलीशा को बताया।

मानो कहा—'देते हो तो उन्हें दो, उन्हें।'

यह देखकर एलीशा ने रोटी बालक की ओर बढ़ाई। रोटी का

देखना था कि बालक ने दोनो हाथ बढाकर उसे झपट लिया और नन्हे-नन्हे हाथो मे टुकडे को पकड उसमे ऐसा मुँह गाडकर खाने लगा कि उसकी नाक का पता चलना मुश्किल था। पीछे से लडकी भी चलती वहाँ आ पहुँची और रोटी पर आँख गाड़े खडी हो गई।

एलीशा ने उसे भी टुकडा दिया। फिर एक और टुकडा काटकर उस बुढिया स्त्री को दिया। वह बुढिया भी अपने बूढे मुँह से उसे कुतरकर खाने मे लग गई।

बोली—'जो कही थोडा इस वक्त पानी कोई और ले आता। तालू तो बेचारो के सूख रहे है। कल मैं पानी लेने गई थी, या आज, याद नहीं" सो बीच मे ही गिर पडी। आगे फिर जा नही सकी। डोल वही पडा रह गया। कोई ले न गया हो,कौन जाने वही पडा हो।

एलीशा ने कुएँ का पता पूछा। बुढिया ने बता दिया। सो एलीशा गया, डोल लिया, और पानी लाकर सबको पिलाया। बच्चों ने और बुढिया ने पानी आने पर उसके साथ फिर और कुछ रोटी खाई। लेकिन आदमी ने एक कन मुँह मे न डाला। बोला, 'मैं खा नही सकता।' अब तक वहाँ पडी दूसरी स्त्री को कोई होश नहीं मालूम होता था। वह वैसे ही अधर मे टाँग फेक रही थी। एलीशा तब फिर गाँव की एक दुकान पर गया। वहाँ से कुछ जई का चून लिया। नमक, दाल और तेल ले लिया। एक कुल्हाडी भी कही से खोज ली और काटकर लकडी जमा की। फिर आग जलाई। लडकी भी आकर उसमे मदद देने लगी। उपरान्त उन्होने खाना तैयार किया और भूखे जनो को खिलाया।

[५]

उस आदमी ने तो नाम मात्र खाया। बुढिया ने भी कम ही खाया। पर बच्चो ने तो बरतन चाटकर साफ कर दिया। फिर वे दोनों बालक आपस मे गलबाही डाले गुडी-मुड़ी होकर सो गये।

उस वक्त बुढ़िया स्त्री और उस आदमी ने एलीशा को अपने

दुःख की सारी कथा सुनाई कि कैसे उनकी यह दशा हुई। बोले—'गरीब तो हम पहले ही थे। पर साल के सूखे ने मुसीबत ला दी। जो जमा था कठिनाई से सर्दी तक चला। जाडो के दिन आते-आते यह नौबत हुई कि पडौसी से या जिस-तिस से माँगकर काम चलाना पडा। पहले तो उन्होने दिया, पीछे वे भी इन्कार करने लगे। चाहते थे कि दे, पर देने को उनके पास होता नही था। और हमे भी माँगते शर्म आती थी। सो कर्ज मे हम गले तक डूबते गये। एक-एककर सबका लेना हम पर हो गया। किसी का पैसा चाहिए था तो किसी का नाज बाजिब था और किसी तीसरे की और कोई चीज उधार चढ गई थी।

ऐसी हालत होने पर आदमी बोला, 'मैं काम की तलाश मे लगा। पर कोई काम नही मिला। पेट रखने जितना नाज मिल जाय, तो उसी मजूरी पर काम करने के लिए बेतादाद लोग तैयार थे, पर अभी कुछ काम मिला भी तो, अगले दिन फिर खाली। फिर और काम ढूंढो। मैं इस चक्कर मे बीत चला। बुढिया और लडकी ने उधर कही दूसरी जगह जा भीख माँगना शुरू कर दिया। पर कभी बेखाये, तो कभी अधपेट जीते ही गये। आस थी अगली फसल आने तक ज्यो-त्यो चले-चले तो फिर देखा जायगा। पर पतझड आने तक तो हमें भीख मे भी कुछ मिलना बन्द हो गया। ऊपर से बीमारी ने आ पकडा। हालत बद से बदतर होती गई। आज कुछ मिल जाता, तो दो दिन फाके के होते। आखिर घास खाकर हम लोग तन रखने लगे। मालूम नही घास की वजह थी कि क्या। मेरी बीबी बीमार पड़ गई। टाँगों पर उससे चला नही जाता, न खडी रह पाती है, मेरा भी दम क्षीण होता गया। और मदद कही कोई दीखती नही '' ''''।'

'तो भी' बुढ़िया बोली, 'मैं कुछ बची थी। पर निराहार काया कब तक चलती। आखिर मैं भी गिरती गई। लडकी यह दुबली हो गई और डरी सहमी-सी रहने लगी। मैं कहती कि जा, पडौसियो से

कुछ मांग-तांग ला। पर वह घर से बाहर न जाती और कोने में सरक कर गुम-दुबक बैठ जाती। अभी परसो एक पडोसन यहाँ घर झाँकने आई। पर यहाँ का हाल देख उल्टे पॉव चली गई। देखा कि यहॉ तो खुद सब बीमार थे और भूखे पडे है। असल मे उसके आदमी ने कहा था कि जा कही से इन नन्हो के मुँह डालने के लिये तो कुछ ला सो उस आसमे बेचारी आई थी। पर हम पहले ही यहाँ मौत की बाट देखते पडे थे।

उनकी यह दु ख कथा सुनी तो एलीशा ने उस रोज जाने और अपने साथी का सग पकडने का विचार छोड दिया। रात वह वही रहा। अगले सबेरे अँधेरे-दम उठा। और घर का काम-धाम सहारने लगा। काम मे वह ऐसे अनायास लगा कि उसी का घर हो। आग जलाई और आटा गूँदा। बुढिया उसका साथ देती जाती थी। फिर वह लडकी को साथ लेकर पास-पडोस से जरूरी चीज-बस्त लेने चला। क्योंकि घर मे कुछ था नही, नाज पाने मे सब कुछ बिक गया था। न दो बासन रह गये थे, न कोई वस्त्र सो एलीशा जरूरी सामान जुटाने लगा। कुछ अपने पास से मुहय्या हो गया, बाकी खरीद कर ला दिया। सो वहाँ वह एक दिन रहा, फिर दूसरे दिन, और फिर तीसरे दिन। छोटे बालक मे अब दम आ गया और एलीशा बैठा होता तो वह सरक-सरक कर उसकी गोद मे चढ जाता। लडकी का चेहरा भी खिल आया वह हर काम मे दौडकर मदद करने लगी। और जरा बात हो झट एलीशा के पास भाग आती। और कहती," दादा, ओ दादा !"

बुढ़िया मे भी अब ताकत आती जाती थी। और पास पडौस मे अब वह घूम आ सकती थी। आदमी के बदन मे भी बल आ रहा था और दीवार का सहारा लेकर अब वह चल फिर सकता था। बस उसकी बीवी चगी होने मे नही आ रही थी। लेकिन तीसरा दिन होते उसे भी होस हुआ और उसने खाने को माँगा।

एलीशा सोचने लगा कि रास्ते मे इतना वक्त बरबाद हो जायगा,

इसका भला क्या पता था। चलो अब बढना चाहिए।

चौथे रोज ईस्टर के व्रत-पर्व का आखिरी रोज था। वह रोज उपवास के पारण का दिन होता और लोग खा-पीकर खुशी मनाते हैं। एलीशा ने सोचा कि इस दिन को तो यही इन लोगो के साथ गुजारना चाहिये। जाकर दुकानसे इनके लिये कुछ ला-लू दू गा। और त्यौहारके आनन्दमे साथ दू गा। और निबटकर शामको अपनी राह चल दू गा। यह सोचकर एलीशा गाँव मे गया और दूध-सेवई का इन्तजाम किया और घर पहुँचकर अगले रोज के त्यौहार की तैयारी मे मदद देने लगा। कही कुछ उबल रहा है तो कुछ सिक रहा है। पर्व वाले दिन एलीशा गिरजे गया। आकर तब सबके सग-साथ मे उपवास तोडा और जीमन किया। उस रोज बीबी भी उठकर कुछ-कुछ टहलने लायक हो आयी थी, और पतिने हजामतकी और बुढिया ने धोकर कुर्ता नया कर रक्खा था सो पहना। तब वह गाँव के महाजनके पास क्षमावनी माँगने गया। जमीन और चरागाह उनकी उसी महाजन के यहाँ गिरवी रक्खी थीं। वह कहने गया था कि महाजन, खेत और जमीन बस एक फसल के लिए दे दो। लेकिन शाम को लौटा तो बडा उदास था। आकर वह आँसू गिराने लगा। असल मे महाजन ने कोई दया नही दिखलाई थी। सीधे कह दिया था कि पहले मेरा रुपया दो।

एलीशा इस पर सोच मे पड गया मनमे बोला कि अब ये लोग रहेंगे कैसे ? और जने काटकर घास तैयार करेंगे तब ये क्या करेंगे ? इनकी जमीन तो गिरवी रखी है जई पकने के दिन आये। और फिर इस साल देखो धरती-माता ने फसल मे क्या धन-धान उगला है, पर दूसरे लोग कटाई कर रहे होंगे और इन बेचारो के पास कुछ नही। इनकी तीन एकड जमीन महाजन के ताबे है। सो मेरे पीछे इन बेचारो की दशा वैसी ही न हो जायगी जैसी आने पर मैंने देखी थी ? सोचकर एलीशा दुविधा मे हो गया। आखिर तय किया आज शाम न जाऊँ कल तक और ठहर जाऊँ।

यह पक्का विचार करके वह रात मे सोने को वह ओसारे मे गया और प्रार्थना करके वह बिछावन पर लेट गया। पर वह सो नही सका एक तरफ तो सोचता था कि चलूँ क्योकि उसका यहाँ काफी समय और काफी पैसा लग गया था। पर दूसरी तरफ इन लोगो पर उसके मन मे करुणा भी आती थी और ˙˙ ।

मन मे बोला—'इसका तो कोई अन्त ही नही दीखता है। पहले तो मैंने इतना ही सोचा था कि ला कर इन्हे पानी दिये देता हूँ। और यह घास की रोटी। तब क्या जानता था कि बात ऐसी बढ जायगी। लो अब तो खेत और चराई की धरती को गिरवी से छुडाने की बात सामने आ गई है। यह किया तो फिर उनको गाय भी लेकर देनी होगी। फिर एक घोडा भी चाहिये जिससे गाडी मे लान-बान ढोया जा सके। वाह दोस्त एलीशा तुमने तो गले मे यह अच्छा फन्दा डाल लिया है। अपनी सुध बिसार तुम तो खासे गडबड़ झाले मे पड गये हो।" यह सोचता हुआ उठा और सिरहाने से कोट निकाल, तह खोल अपनी सुँघनी की डिबिया बाहर की और उसमे से एक नक्की ली। सोचता था कि सुँघनी से मदद मिलेगी और झमेले कट कर मन के लायक साफ होने मे आयेगे।

लेकिन कहाँ? बहुतेरा सोचा, बहुतेरा विचारा। पर निश्चय न होता था एक मन होता कि चल देना चाहिये। पर दया रोक लेती थी। उसे सूझ न पडती थी करूँ तो क्या। कोट की तहकर आखिर फिर उसने सिरहाने ले लिया। ऐसे बहुत देर पडा रहा। होते-होते मुर्गे की पहली बाग उसे सुनाई दी। तब उसकी पलको पर नीद उतरने लगी। पर सो न पाया होगा कि उसे ऐसा लगा कि किसी ने उठा दिया है। देखा, तो वह सफर के लिए तैयार है बकुचा कमर पर कसा है, हाथ मे लाठी लिये हैं। बाहर दरवाजा भी इतना खुला है कि तरकीब से चुप-चाप निकल जा सकता है। वह निकल कर जा ही रहा था कि कमर के बकुचे के बन्ध एक तरफ तार मे हिलग गये। वह उसे छुडाने लगा

कि इतने मे दूसरी तरफ बाये पैर की पट्टी अटक गई और खिचकर खुलने लगी। आखिर उचक कर बकुचे को उसने ठीक कमर पर लिया पर देखता क्या है कि तार ने उसे नही हिलाया, बल्कि छोटी लडकी उसे पल्ले से पकडे हुए है। कह रही है—"दादा रोटी ! दादा रोटी !"

फिरकर पैर की तरफ जो उसने देखा तो क्या देखता है कि छोटा बच्चा उसके पाँवकी पट्टी को पकडे हुए है। और बराबर की खिडकी मे से बुढिया और घर का मालिक वह आदमी, दोनो जने उसे जाते देख रहे है।

एलीशा इस पर जग आया। उठकर अपने आपसे ऐसे बोलने लगा कि दूसरा भी सुन ले। कहने लगा कि कल मैं उनके खेत उन्हे छुडा दूंगा और एक घोडा ले दूंगा। बच्चो के लिये एक गाय और फसल आने तक के लायक नाज भी भर दूंगा। नही तो मै उधर समदर पार भगवान को पाने जाऊँ, तो कही एसा न हो कि अदर के भगवान को ही मैं खो बैठूं।

इस विचार के बाद एलीशा अपनी गाढी नीद सो गया, तडका फूटने पर उठा। अध सबेरे ही उठ महाजन के पास जाकर उसने चराई की धरती और खेती की जमीन दोनो का पैसा चुकाकर छुडा लिया। फिर एक दरात ली। (क्योकि अकाल मे यह भी काम आ गई थी) और उसे साथ लेकर घर लौटा। आकर आदमी को तो कटाई करने भेजा और खुद गाँव की तरफ चला। वहाँ पता लगा कि चौपाल पर एक गाडी घोडा विकाऊ है। मालिक से भाव सौदा करके उसने दोनो खरीद लिए। फिर एक बोरा नाज भी ल लिया और उसे गाडी मे रखवा लिया। उसके बाद गाय की तलाश म चला जा रहा था कि दो औरतें मिली। आपस मे बात बतलाती जा रही थी। वे अपनी भाषा मे बोल रही थी, तो भी एलीशा समझ सका कि वे क्या कह रही है ?

"अरी पहले तो वे समझे नही कि कौन है। सोचा, आता जाता होगा भला मानस पीने को पानी माँगता आया था कि फिर वह वहीं

रह गया बहिन, सुना कुछ क्या-क्या सामान उनके लिये उसने ले डाला है। राम दुहाई कहते है कि एक घोडा और एक गाडी तो अभी सवेरे ही चौपाल मे उसने मोल लिये है। ऐसे आदमी दुनियाँ मे बिरले मिलते है। चलती हो, चलो उन पुण्यात्मा के दर्शन ही करे।"

एलीशा सुनकर समझ गया कि यह उसी की तारीफ की जा रही है सुनकर वह गाय लेने नही गया। लौटा, चौपाल पर आया, दाम चुकाये और गाडी जोतकर घर आ गया। गाडी मे उतरा तो घर के लोगो को यह घोडा देखकर अचभा हुआ। उन्होने सोचा कि कही सब यह उन्ही के वास्ते तो नही,—पर पूछने की हिम्मत नही हुई। इतने मे आदमी घर का दरवाजा खोल बाहर आया। बोला—"दादा यह घोडा कहाँ से ले आये ?" एलीशा ने कहा,"अजब सवाल करते हो। खरीदे लिये आ रहा हूँ, नही तो सस्ता बिका जाता था। अच्छा आओ और घास काटकर घास नाद मे डाल दो कि रात को इसके लिये हो जाय। और गाडी मे से यह बोरा भी उतार लो।"

आदमी ने घोडा खोल लिया और बोरा नाज का कोठे मे ले गया। फिर घास काटकर नाद मे डाल दी। आखिर निबट-निबटा सब जने अपने सोने चले गये। एलीशा आज रात सोने के लिये बाहर रास्ते से लगे ओसारे मे आ रहा था उस शाम उसने अपना बकुचा भी ले लिया। सबके-सब सो गये थे, उस वक्त उठा। बकुचा अपना संभाला और कमरपर कस लिया। पट्टियाँ टागों से बाँध ली कोट पहन लिया और जूते चढा आगे राह पर एफिम को पकडने बढ लिया।

(७)

एलीशा कोई ३ मील से ऊपर चलते चला गया होगा कि चाँदनी होने लगी। तब एक पेड के नीचे उसने अपना बकचा खोला और घास के पैसे गिने। कुल सात रुपये और पाँच आने के पैसे बचे थे।

सोचने लगा कि उतने पैसे लेकर समन्दर पार की यात्रा की सोचना वृथा है। अगर भीख माँगकर यात्रा पूरी करूँ तो उससे तो न

जाना अच्छा है । एफिम मेरे बिना भी यैरूशलम पहुँच ही जायेंगे और मन्दिर मे वहाँ मेरे नाम का भी एक दिया रख देंगे । और मेरी बात पूछी तो इस जन्म मे अपना प्रण पूरा करने को मुझे अब क्या मौका मिलेगा । बडा शुक्र कि प्रण और सकल्प मैने मालिक के सामने ही किये थे जो दयासागर है और पापियो के पाप माफ कर देते है ।

एलीशा उठा, झटेक कर फिर अपना बकचा कमर पर लिया, और वापिस मुड चला । वह यह नही चाहता था कि कोई मुझे पहचान ले । सो गाँव को बचाने के लिये चक्कर लेकर वह अपने देश की तरफ तेज चाल से चल दिया । घर की तरफ जाते इस बार वही रास्ता उसे हल्का लगा जो पहले कठिन मालूम हुआ था । पहले एफिम का साथ पकडे रहने से मुश्किल होती थी अब ईश्वर की दया ले लम्बी राह चलते उसे थकान न आती थी । चलना बालक का खेल-सा लगता था । लाठी हिलाता, एक दिन मे चालीस से पचास मील तक आसानी से नाप लेता था ।

देश अपने घर जाकर पहुँचा तो फसल पक चुकी थी । कुनबे के लोग उसे वापिस आया पाकर बहुत खुश हुए । सब पूछने लगे कि क्या हुआ कैसे बीती, कैसे पीछे और अकेले रह गये । येरूशलम जाये बिना क्यो लौट आये ? पर एलीशा ने कुछ कहा नही । इतना ही कहा कि भगवान की इच्छा नही थी कि मैं वहाँ पहुँचूं । सो राह मे मेरा पैसा जाता रहा और साथी का साथ छूट गया । भगवान मुझे माफ करेंगे और आप लोग भी माफ करे ।

इतना कहकर जो पैसा बचा था सब अपनी बुढिया बीबी के हाथ मे दे दिया । फिर घरबार के हाल अहवाल पूछे । सब ठीक चल रहा था । काम सबने पूरा किया था । किसी ने कोर कसर नही की थी और सब जने मेल और शान्ति से रहे थे ।

उसीदिन एफिमके घर के लोगो को भी लौटनेकी खबर मिली वे भी अपने दादा की खबर लेने आये, उनको भी एलीशा ने यही जबाब दिया ।

कहा—'एफिम तेज चलते हैं। सन्त पीटर के पर्व के दिन से तीन रोज इधर मेरा उनका साथ छूट गया। सोचता था मैं फिर साथ पकड लूँगा। लेकिन ईश्वर का चाहा होता है। मेरा पैसा जाता रहा और फिर आगे बढने लायक मैं नही रहा। सो अधबीच से लौट आया।'

लोग अचरज करते थे कि ऐसे समझदार आदमी होकर उन्होने क्या यह मूरख पने की बात की। चलने को चल पडे, पर जाना था वहाँ पहुँचे नही और रास्ते मे ही सब पैसा फूँक दिया। कुछ काल तो वे इस विस्मय मे रहे। फिर धीरे-धीरे सब भूल चले। एलीशा के मन से भी सब बिसर गया। वह अपने घर के काम धन्धे मे लग गया। अपने बेटे की मदद से जाडो के लिए लकडी काटकर भर ली। औरतो ने और सब ने मिलकर नाज गाह रक्खा, फिर बाहर के छप्पर को ठीक कर लिया। मक्खियो के छत्तो को छा दिया और पड़ौसी को उसने वे दस छत्ते दे दिये जो बेचे थे। उस पर जितना मधु-मुहाल आया, सब का सब ईमानदारी से पडौसी की तरफ कर दिया। बीबी ने कोशिश भी कि न बताऊँ कि छत्तो पर से कितने मधु-मुहाल हुए है। लेकिन एलीशा सब जानता था कि कौन छत्ते फले है, कौन नही। सो दस की जगह पडौसी को सत्रह भरे छत्ते मिले। जाडो की सब तैयारी करके उसने लडके को काम तलाश करने दिया। खुद मधु-मक्खी के कोटर तैयार करने और लकडी की खडाऊँ वगैरह बनाने के काम में जुट गया।

[८]

एलीशा इधर पीछे गाँव मे रह गया था तो उस दिन भर एफिम ने राह में उसका इन्तजार देखा। आगे कुछ ही कदम चलने पर बैठ गया था। बाट देखता रहा, बैठा रहा। झोक आई और एक नीद वह सो भी लिया। उठकर फिर बाट जोहने लगा। लेकिन उसका साथी नही लौटा। बाट देखते उसकी आँखें दु:ख आईं। उस पेड़ के

पीछे सूरज डूबने लग रहा था, पर एलीशा उस सडक पर न आता दीखता था न पता।

एफिम ने सोचा—'शायद हो कि इसी रास्ते वह मुझ से आगे निकल चला गया हो। क्या पता किसी ने अपनी गाडी पर बिठा लिया हो, मै सो रहा हूँ तभी बिना मुझे देखे आगे बढता गया हो। लेकिन ऐसा हो कैसे मकता है कि मैं उसे न देखूं। यहाँ तो पट पर मैदान मे दूर-दूर तक साफ दीखता है। चलूं लौटकर देखूं। लेकिन जो कही वह आगे बढ गया होगा तब तो फिर ऐसे हम दोनो बिछुड ही जायेगे और किसी को कोई न मिलेगा, सो अच्छा है मै चला ही चलूँ, रात को जहाँ पडाव होगा, वहाँ तो आखिर दोनो मिलेगे ही।'

सो चलते-चलते गाँव आया। वहाँ उसने चौकीदार से कहा कि इस-इस शक्ल का कोई मेरी उमर का आदमी चलता हुआ आयगा, तो उसे जहाँ मैं ठहरा हूँ वही ले आना। लेकिन एलीशा उस रात भी नही आया। एफिम अकेला आगे बढा। राह मे जो मिलते सबसे पूछता कि नाटे कद का, सिर साफ, बूढी उमर का कोई मुसाफिर तो तुमने देखा है? पर किसी ने उसे देखा नही था। एफिम को अचरज होता और अकेला आगे बढ लेता। सोचा कि आखिर ओडेसा पहुँचकर तो हम दोनो मिलेगे ही। नही तो जहाज पर मुलाकात पक्की है। यह सोच उसने फिर उस बाबत सब फिकर छोड दी।

चलते-चलते रास्ते मे इसे एक यात्री मिला जो एक लम्बी कफनी पहने था। बाल बड़े थे और सिर पर ऐसी टोपी थी जैसे उपदेशक हो। वह थौस के तीरथ की यात्रा मे आता था। वे दोनो रात एक ही जगह ठहरे थे, सो वहाँ मिल गये।

फिर तो साथ ही साथ चलने लगे।

सो देखा दोनो कुशल पूर्वक पहुँच गये। वहाँ जहाज के लिए तीन दिन बाट देखने मे रुकना पडा। जगह-जगह और दूर-दूर से बहुत से यात्री भी उसी जहाज की प्रतीक्षा मे थे। वहाँ फिर एलीशा के

बारे मे एफिम ने पूछताछ की पर किसी से कुछ पता नही मिला। एफिम ने वहाँ फिर पास पर सही कराई, जिसकी फीस पाँच रुपये बैठी। चालीस रुपये मे येरूशलम का वापिसी टिकट मिला। सफर के लिए खाने-पीने के लिए सामान भी साथ खरीदकर उसने रख लिया।

साथ के यात्री ने तरकीब बताई कि किस तरह बिना पैसे भी जहाज पर जाना हो सकता है। लेकिन एफिम ने उधर ध्यान नही दिया। बोला, मै खर्च के लिए तैयार होकर आया हूँ। सो मैं तो पैसा देकर चलूंगा।'

जहाज की सवारियाँ पूरी हो गईं और सब यात्री उस पर आ रहे। एफिम और उसके साथी भी उसमे थे। लँगर उठा और जहाज समन्दर मे बढ़ लिया।

दिन भर तो मजे मे चलता गया। पर रात हवा कुछ तेज उठ आई। पानी पडने लगा। और जहाज डगमग-डगमग होने लगा। लोग डर गये। स्त्रियाँ चीखने-चिल्लाने लगी और आदमियो मे जो कमज़ोर थे, वे भी बचने को जहाँ-तहाँ जगह ढूंढने भागने लगे। डर एफिम को भी लगा, लेकिन उसने जाहिर नही किया। डेक पर जहाँ पहले जमकर बैठ गया था, वही बैठा रहा। वहाँ पास टाँगो के और लोग भी बैठे थे। सो तमाम दिन और तमाम रात वे सब जने अपने-अपने थैले या बक्स से लगकर चिपके हुए चुपकी मार बैठे रहे। तीसरे दिन जाकर हवा थमी। समन्दर शान्त हो आया और पाँचवें दिन जहाज कुस्तुनतुनिया बन्दर पर जा लग गया। कुछ लोग उतर कर सन्त सोफिया के गिरजा के जो तुर्कों के अधिकार मे था, दर्शन करने उतर गये। और लोग तो गये, लेकिन एफिम जहाज पर ही रहा। उसने तो बस किनारे से ही कुछ रोटी खरीद कर कनात मानी। जहाज वहाँ चौबीस घण्टे रहा और फिर आगे बढ़ा। फिर ममनबिन्दर पर वह ठहरा। उसके बाद इलक्जेड्रीया। आखिर सब लोग सकुशल जाफा बन्दर पर आ पहुँचे। वहाँ सब यात्रियो को उतरना था। अभी वहाँ

से भी येरूशलम पक्की सड़क चालीस मील से कुछ ऊपर ही था। जहाज से उतरते भी लोगो को बडा डर लगा। जहाज ऊँचा था और नाव इतनी नीची कि जैसे नाव मे एक-एक करके वे लोग उतरे क्या गिराये जाते थे। और नीचे पानी मे खडी नाव इससे बडी डगमगाया करती थी। यह भी डर था कि जरा कुछ हो जाय कि नाव मे तो आदमी पहुँचे नही और पानी मे गिर जाय। एक दो एक आदमी इस तरह गिर कर भीगे भी। खैर, आखिर जैसे-तैसे सब लोग सकुशल किनारे पहुँच गये।

वहाँ से पाँव-पाँव चले और तीसरे दिन दुपहरी के वक्त येरूशलम पहुँच गये। शहर के बाहर रूस के लोगो के लिए एक जगह बनी थी। वहाँ सब जने ठहरे। सबके पासो पर वहाँ भी सही की गई। फिर खा-पीकर एफिम अपने उस यात्री के साथ तीर्थ-धाम देखने निकला। पर मन्दिर खुलने का यह समय नही था सो वे धर्माचार्य के रहने की जगह चले गये। वहाँ सब-के-सब यात्री जमा थे। स्त्री अलग और पुरुष अलग, सबको दो घेरो मे बैठाया गया था। जूते बाहर छोड़ने को कह दिया था। और सब वहाँ नगे पैर थे। बैठने के बाद एक साधु आये, जिनके कन्धे पर तौलिया था और साथ-साथ जल। उन्होने अपने हाथो से सबके पाँव धोये। तौलिये से पोछ और माथा नवाकर सबके चरण छुये। घेरो मे बैठे हुए स्त्री-पुरुष के साथ उन्होने ऐसा किया। औरो ने एफिम के पैर भी धोये और माथे से छुए गये थे। सो सबेरे-शाम प्रभु-कीर्तन मे एफिम शामिल हुए, प्रार्थना की और वेदी पर अपना दीपक जलाकर रक्खा। अपने माँ-बाप के नाम की, लिपि लिखकर पुरोहित को दी कि उसके नाम भी धर्म प्रार्थना के बीच ले लिए जायँ। धर्माचार्य के यहाँ सब यात्रियो को खाने-पीने को भी दिया गया।

अगले दिन सबेरे मिस्र की मरियम माता की गुहा देखने वे लोग गये। वहाँ ही माता मरियम ने तपस्या की थी। वहाँ भी उन्होंने

दीप जलाये और स्तुति पढी। वहाँ से हजरत इब्राहीम के मठ मे गये और वह जगह देखी जहाँ हजरत परमात्मा की भेट-स्वरूप, अपने पुत्र को मारने को तैयार हो गये थे। फिर वह स्थान देखा जहाँ मरियम मगदालिन को प्रभु ईसा के दर्शन मिले थे। जेम्स का चर्च भी उन्होंने देखा। इस तरह के यात्री ने एफिम को ये सभी स्थान दिखाये। वह बताते भी गये कि कहाँ क्या चढाना चाहिए। दोपहर बीते वे अपने स्थान पर लौटे और भोजन किया। उसके बाद लेटकर आराम करने की तैयारी कर रहे थे कि साथ का यात्री, चीखने-चिल्लाने लगा और अपने सब कपड़े फेक बिखेर कर टटोरने लगा। बोला—'मेरा बटुआ किसी ने चुरा लिया है। उसमे तेईस रुपये थे। दो तो दस-दस के नोट थे, बाकी खेरीज।'

वह यात्री झीकता-रोता रहा, पर रज मनाने से क्या होता था। कोई और चारा नही था। सो फिर चुपचाप अपनी जगह ही वह जा लेटा और नीद लेने की कोशिश करने लगा।

[६]

बराबर मे एफिम पडा हुआ था। उस समय उसके मनमे विकार हो आया।

वह सोचने लगा कि इसका किसी ने कुछ चुराया नहीं मालूम होता है। सब झूठ-मूठ की बात है। जान पड़ता है उसके पास था ही कुछ नही। देखो न, कही जो पैसा उसने दिया हो। जहाँ देना होता, पट्ठा मुझसे ही दिलवाता। और हो, मुझ से एक रुपया भी तो उधार ले रक्खा है।

यह ख्याल आया था कि एफिम ने मन की लगाम खींची। अपने को झिड़क कर कहा कि दूसरे आदमी के दोष देखने का मुझे क्या हक है। यह तो पाप की बात है। नही, मैं उसके बारे मे और ख्याल नहीं लाऊँगा। पर जैसे ही मन और तरफ फेरा कि छूटकर फिर वह वहीं अपने साथी की बात पर पहुँच जाता था। उसे ख्याल होता कि देखो

सत्ता कायम करने मे मदद मिलेगी—वैसे ही जैसे आग से सर्दी पाने की उम्मीद नही कर सकते। हमारा कोड हमे एक और स्पष्ट आज्ञा देता है। वही आज्ञा पुरुषत्व की, और मै समझता हूँ—बुद्धिमत्ता की भी है।

गि०—मैं बहस नही करता। लारेंजो भाई की राय मैं जानना चाहता हू।'

ला०—मुझे डर है कि हत्या हितकारी नही होगी। इससे मेरी राय नही है।'

गि०—'माइ एटिनो, अब मै यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि समिति हत्या के पक्ष मे न रहेगी। बहुमत यही है।'

ए०—'बहुमत को सिर झुकाता हूँ। पर एक सूचना अध्यक्ष को देना चाहता हू—

एक पन्ना उलटकर एटिनो पढना शुरू करता है—

'सोमवार ता० १६ मार्च को सभा हुई। उपस्थिति १०।

बेजिलो, सभापति।

'भाषणो के बाद, सर्व-सम्मति से तय पाया कि अलबर्ट को अपना सदस्य स्वीकार करना घोर अपराध था। वह अब पीडमोटका राजा बन गया है। राजा, खासकर वह जो आस्ट्रियन की अधीनता स्वीकार करता है, प्रजा सत्ता का दुश्मन है, इसलिये वह हमारा भी दुश्मन है। हमारी अक्षम्य गलती के प्रतिशोध और प्रजासत्ता एव क्रान्ति की हित-रक्षा का एक उपाय है, वह है एलबर्ट को नष्ट करना।'

'सम्मति जब ली गई तो केवल से०—विरोध में था।

'उसके लिए कई कानो दबी हुई 'ट्रेटर, (विश्वास-घातक) की आवाज गई।,

'सबको शान्त करके बेजिलो ने घोषणा की कि एलबर्ट की हत्या सभा द्वारा निर्णीत और उचित ठहराई गई।'

ए०—'इस सूचना के साथ मैं अध्यक्ष को अपने निणय पर फिर से विचारने का निवेदन करता हूँ।'

गि०—'मेरा वही मत है जो मैं दे चुका। और समिति का भी वही मत है। बेजिलो ने अधिकार से बाहर की बात की है। किसी दुराग्रह को बढने देना ठीक नही है। एटिनो भाई से मैं यह आशा करता हू कि वह बेजिलो को नायक का मत—और निर्णय—स्पष्ट शब्दो मे सुना देंगे।'

एटिनो खडा हो गया। एक गिलास खीचा, कुछ शराब उँडेली, फिर अपनी कुर्सी के पास आकर, पतलून की जेब मे एक हाथ डालकर बोला—'किन्तु मैं कहता हूँ, बँट जाकर हम गिरेगे, एक रहने मे हमारी विजय है। हममे फूट पडे, इससे कही अच्छा यह है कि हम अपने सिद्धान्तो मे तनिक अवकाश रखना सीखे, और अपने मत को बहुत तग और बहुत अन्तिम न बना दे।'

यह कहकर एटिनो ने गिलास ओठ से लगा लिया।

गिडिटो एकटक अपने सामने देखता रहा, बोला नही।

लारेजो ने जबाब दिया—'अनुशासन एक चीज है। उसमे ढील आई कि सगठन भी ढीला हुआ। हमे ऐसा एक्य चाहिये जो हमारे कर्तव्य को पुष्ट करे। कर्तृत्व को खोकर मेल बढाने से हम न बढ़ेगे। हमे विभिन्नता का ऐक्य न चाहिये। हमे एकता का एक्य चाहिये। हमारा मत एक हो, काम एक हो, लगन एक हो। और इसका नाम है, शक्ति। हमे वही चाहिये, और हम उसे कडाई से अनुशासन मे बांध रखेगे, बिखरने न देगे।'

इतना कहकर लारेजो ने भी अपना, गिलास सँभाला।

एटिनो ने कहा—'हम खबरदार रहे कि अपने ऊपर बहुत ज्यादा जिम्मा न ले लें। मतैक्य असम्भव है। जिस राय से यह सम्भव है उसका

नाम है बलात्कार, दमन, निरकुश एकतन्त्रता। क्या हम छत्र-तन्त्रता को मिटाकर स्वतन्त्रता को धरती पर ला देने के व्रती होकर ही यहाँ नहीं जमा हुए ? फिर क्यो हम ही अपने बीच निरकुश एकतन्त्रता-सी खडी कर रहे है ?'

गिडिटो ने स्थिर भाव से कहा—'क्या हम बहस ही करे? क्या हम निर्णय न करे ? निर्णय तो करना ही होगा। दायित्व से डरना कापुरुषता है। निर्णय एक ही तरह का होगा ! केवल निर्णय-हीनता ही है, जिसमे किसी को असतोष न हो, निर्णय मे विरोध अनिवार्य है। सबको सब-कुछ मानने और सब-कुछ करने देना हो तो भला है, हम निर्णय न करे। सबको सब-कुछ मानने और सब-कुछ करने देना था, तो भला था, हम समिति न बनाते, आडम्बर न करते, सीधी तरह घर बैठते। लेकिन नहीं एकबार एक जगह, एक शपथ के नीचे हम इकट्ठे हुए, तो अपनी जो-कुछ मानने और जो-कुछ करने की स्वतन्त्रता को होम कर इकट्ठे हुए। अपने को मिटाकर आज यहाँ हम जमा है। इसलिये हमारी अपनी स्वतन्त्रता कुछ नही है। आज देश की स्वतन्त्रता पर हमने अपनी स्वतन्त्रता को वारा है, धन्य होकर वारा है और इस तरह एक प्रकार की परतन्त्रता को अपने ऊपर स्वीकार कर एक बृहत् स्वतन्त्रता को हमने अपने लिये पहचाना और अपनाया है।""अब हम क्या निर्णय करे ? निर्णय का बोझ हम अपूर्ण प्राणियो के ऊपर पडा है, तो क्या हम उसे कन्धे पर से फेंक कर चलते बने ? जानता हूँ, बोझ भारी है। पर फेंक कर भागना भी नहीं हो सकेगा। अपनी परिमित बुद्धि के अनुसार ही हम फैसला करेंगे। पर हम सतर्क रहें कि उसमे हमारा अपना कुछ न हो, अहकार की गन्ध न हो, प्रमाद न हो, मोह न हो। ठीक का ठेका कौन ले सकता है; पर इतना कर चुकने पर, हमारा निर्णय गलत होगा, तो मानो हम उसकी गलती से अलिप्त रहेगे। पर, चूँकि हमारे निर्णय के अन्ततः गलत होने

की सभावना असम्भव नहीं है इसलिये हम निर्णय करने की जिम्मेदारी से ही छूटे, यह नही हो सकता। और जहाँ तक मेरी गति है, वहाँ तक देखकर मैं कहता हू कि बेंजिलो ने जो किया है वह करके भूल ही की है। तब यह देखने और मानने के बाद उस भूल को बढा देना हमारे लिये किसी प्रकार भी क्षम्य और सम्भव न होगा।'

एटिनो ने उत्तर न दिया, वह शराब ढालता रहा। लारेंजो भी इसी मे व्यस्त हो रहा।

गिडिटो खडा हो गया, नक्शे के सामने आ रहा और उसे आँख गाडकर देखता रहा, देखता रहा। मानो बेंजिलो के भाग्य को उस नक्शे मे से पढ लेना चाहता था।

४

सन्ध्या हो गई है। कमरे मे गिडिटो अकेला है। वह प्रतीक्षा मे है—कालेज चार घण्टो का खत्म हो चुका, बेंजिलो अब तक कहाँ रहा? लौटा नही! खाना ठण्डा हो रहा है। कमरे के छज्जे पर आकर उसने सडक के दोनो तरफ आँख फैलाकर देखा। बेंजिलो का कही पता नही!

वह आकर पलग पर बैठ गया। किताब खोल ली, लेकिन पाँच ही मिनट मे किताब बन्द कर देनी पडी। किताब के अक्षर जैसे तैरने लगते थे, उसका मन जैसे भागा-भागा फिरता था।

लैंड-लेडी बुलाया, कहा —'खाना परोसने की अभी जरूरत नहीं, लेकिन तैयार रहना चाहिये।' इतना कहकर जो हाथ पडा वही टोप ले पिस्तौल जेब मे डालकर बाहर आ निकला और मैरिथ के यहाँ पहुँचा।

मैरिथ वह है, जो यदि गिडिटो न होता तो बेंजिलो की विवाहिता होती। बेंजिलो रोज इसके यहाँ आता है और चला जाता है। मैरिथ अपने धनी माँ-बाप को छोड़कर यहाँ अपने काम पर अकेली रहती है—

और अपने दिन की राह देखती रहती है।

वह कुलीन है, और अपनी कुलीनता पर लज्जित है। सुन्दर है, और अपने सौन्दर्य को छुपा रखती है। कुलीनता के सम्बन्ध मे वह अपने को बिल्कुल उदासीन नही बना सकी, और सौन्दर्य के बारे मे सर्वथा अजानकार नही है। वह अपने से तग है। वह पुरुष हो रहना चाहती है, क्योकि वह स्त्री है। उसकी वृत्ति जोखम ढूँढती है। समिति की वह अत्यन्त तत्पर सदस्या है। उसे चैन नही है, इसलिए वह सदा उद्यत और गतिशील है। निम्नता मे आकर्षण खोजती है, क्योकि निम्नता मे उसे प्रीति नही है, क्योकि वह निम्न नही है। वह घर ही पढी है, और ललित कला मे उसने विशेष अभिरुचि पाई है। सङ्गीत सीखा है, और चित्र बनाये है। ताजे और हरे अपने स्वर-पर्ण के दोने बनाकर उसमे अपने भीतर का सुर्ख दर्द बूँद-बूँद खीचकर, भरकर रख दे कि किसी के ओठ उसे चखे—वय पाकर भूली-भटकी एकाकी घडियो मे यह भी उसने किया है, पर यौवन जब प्रमत्त था और स्वीकृति चाहता था और भीतर लहू की बूँद-बूँद मानो अपना रग देखने के लिए मचल रही थी, तभी विधि ने उसकी अजेयता पर एक ठेस पहुचाई। तभी क्रान्ति का कठोर कर्म-सन्देश उसे सुन पडा। उसने अपनी तूलिका तोड दी, वायोलिन फेक दी, और देश की स्वतन्त्रता के अर्थ मरने के लिए ही जीने के इरादे से अपने खाली मन को भरकर वह रहने लगी।

ऐसे ही समय बेजिलो पथ-प्रदर्शक बनकर उसके जीवन मे आ मिला। बेजिलो ने उसके इरादे के सामने कर्म की राह खोलकर मानो बिछा दी। यहाँ चलना ही चलना है। यहाँ करते रहना है, और मरते रहना है। अपने को याद करते हुए रहने की बात यहाँ नही है, अपने को सर्वश भूलकर यहाँ रहना होगा। जीवन इतना थोडा है कि मौत के कामो को पूरा करते रहने के उसके कर्तव्य मे से निकालकर एक भी अव-

काश का क्षण जीवन को अपने लिये नहीं दिया जा सकता।

और उसका परमात्मा जानता है, वह यही माँगती है। वह यही माँगती है। वह एक भी क्षण नही चाहती है। चाहती है, एक क्षण भी उसे न मिले। एक भी क्षण उससे कैसे उठाया जायगा? क्योंकि उसका क्षण उसका युग है। और उसकी तूलिका टूट चुकी है, और वायलिन फिक चुकी है। अब वह उस क्षण का क्या बनायेगी?

वह अपना मन, प्राण और समय किसी पर डालकर ही तो जी सकती है, क्योंकि वह क्या रह गई है जो कुछ अपने पास रख सके? किसी के लिये जीना चाहती थी—जब वह खो गया है तो वह अब मौत के लिये जियेगी और देश के लिये मरेगी।

इसलिये—'इन्कलाब जिन्दाबाद। वह सबसे अपने को तोड़कर इन्कलाब के लिये रहेगी, इस अनुष्ठान मे बेजिलो से दीक्षा का ऋण लेगी और उससे उऋण होने मे लगी रहेगी। क्रान्ति पर अपना जीवन वारेगी। देश पर अपने को भूल जायेगी!

और कुछ ही दिनों बाद, अपने घर से अलग, इस स्थान पर उसने अपने को समिति मे और समिति के काम मे पाया।

पर, हाय!

यहाँ गिडिटो

५

गिडिटो ने कहा—मैरिथ, बेंजी अभी घर नहीं पहुँचा! यहाँ भी नही आया?'

मैरिथ—'नही, यहाँ तो नही आया। पर तुम आओ, बैठो। शायद आता हो।'

'बैठने की फुर्सत तो कम है।'

क्यो जी, बेंजिलो को अपने हाथ मे रखने से क्या तुम्हारी मुट्ठी पूरी भर जाती है ? क्या उसमे और किसी के लिये समाई नही है।'

'मैरिथ, बेजी ने अपना सारा प्यार तुम पर बार रक्खा है। इटली को स्वतन्त्र होने दो, देखो मैं खुद अपने हाथो तुम्हारा ब्याह करूँगा। उससे पहले ब्याह करके बेजी अपना नाश कर लेगा। मैरिथ, वह नेपोलियन बनना चाहता है—नेपोलियन !'

'और, क्यो जी, तुम क्या बनोगे ? तुमने अपना प्यार किसी पर बार रखा है ?'

'सो तुम नही जानती ?—नेपोलियन पर !'

'तुम भी आदमी हो !'

'कौन कहता है ? मै स्त्री होता तो ज्यादा ठीक रहता।·· अच्छा अब मैं चला।'

'तनिक ठहरो तो। बेजी आना ही चाहता होगा ! इतने, थोड़े आतिथ्य ही स्वीकार कर लो।'

'अच्छा लाओ, पाँच मिनट बैठता हूँ। लाओ क्या देती हो ?'

'नही, उतावले मत बनो। लेकिन हाँ, तुम शराब तो पीते ही नही।'

मैरिथ ने कुछ रूखे बिस्कुट ला रखे। बिस्कुट की जल्दी-जल्दी मे नक्काशीदार चीनी की एक बढ़िया तश्तरी गिरकर फूट गई। दो-तीन बिस्कुट भी गिरकर चूर हो गये। बिस्कुट रखकर मिनट-भर पड़ौसी से टोस्ट और चाय ले आई।

सब कुछ चखकर गिडिटो ने घडी की तरफ देखकर कहा—'ओह ! अब तो जाना ही होगा। क्षमा !' कहकर प्रतीक्षा नही की, उठकर सीधा चल दिया।

'ठहरो तो ·· अरे, ठहरो··· अच्छा बस, पाँच मिनट !'

'अब नही मैरिथ, देखो बना तो फिर आऊँगा।'

गिडिटो नहीं ठहरा। जीने पर उतरते-उतरते उसने मन मे कहा—'मुग्धा मैरिथ!'

: ५ :

गिडिटो फिर सडक और गली, गली और सडक लाँघता हुआ एक अँधेरी गली मे जा पहुँचा। और वहाँ से फिर उस कमरे मे जहाँ सभा जुडी हुई थी। बेजिलो अध्यक्षासन पर तमतमा रहा था।

गिडिटो जब यहाँ दाखिल हुआ तो सभा एकदम रुक गई। अयाचित उसका पहुँचना शायद वांछनीय न था।

अध्यक्षासन पर से बेजिलो ने कहा—'गिडिटो, किसकी इजाजत से तुम अन्दर आये?'

'बेंजी, चलो खाना ठण्डा हो रहा है। पहले खालो, तब और कुछ करना।'

'गिडिटो, बेवकूफ मत बनो। कैसे तुम यहाँ घुस आये।'

'इन्तजार करते-करते नही तो रात-भर बैठा रहता क्या? भूख लगी, तुम्हे ढूँढता-ढाँढता चला आया।'

'भाड मे जाय तुम्हारी भूख। मै जरूरी काम कर रहा हूँ।'

'कोई जरूरी काम नही है। अभी तो तुम्हारा खाना सबसे जरूरी है।

'गिडिटो, मै प्रेसीडेंट हूँ। कहता हूँ तुम अभी चले जाओ।'

'तुम्हे कुछ खयाल भी है? कालेज खतम हुए पाँच घण्टे हो चुके! तबसे भूखे हो, कुछ नही खाया। तुम्हे भूखे छोड़कर मै कैसे चला जाऊँ?'

'गिडिटो, बेवकूफी करोगे तो सख्ती करनी पडेगी।'

'करो सख्ती, कौन मना करता है। पर परमात्मा के लिये भूखे मत रहो।'

बेंजिलो ने झल्लाकर कहा—'बेजमिन, गिडिटो को हम यहाँ नहीं

चाहते तुम उसे बाहर निकाल सकते हो ?'

बेजीमिन नाम का व्यक्ति उठा। उठकर देखा और फिर बैठ गया—'जी नही।'

'नही !'—अध्यक्ष ने कहा,—'कोई है जो इसे बाहर कर दे ?'

दो व्यक्ति आगे बढे। वह काफी पास आ गए कि गिडिटो ने रिवाल्वर उनकी तरफ तान कर कहा—'चलो, लौट जाओ अपनी जगह पर ! खबरदार, जो कदम भी आगे रखा।'

फिर बेजिनो के पास पहुँचकर और उसकी बाँह पकड कर कहा—'चलो बेजी, तमाशा न करो। घर चलो।'

बेजिनो ने उसे जोर से धकिया दिया। गिडिटो गिरते-गिरते बचा। इतने मे ही सभा के दो-तीन सदस्य उसकी तरफ लपके। उसने भीतर की जेब से एक तिरङ्गा कपडे का टुकडा निकाला और दोनो हाथो से ऊपर उठाकर चिल्लाया—'सभ्यो, यह देखो। देखकर चाहो तो गोली मार दो,—मेरे दोनो हाथ ऊपर है। नही तो उसका सम्मान रखो और इस सभा को बरखास्त करदो।'

सभ्य, जो बडे असभ्य हो रहे थे, अब सब-के-सब सुन्न बैठ गये।

'सुनो, नायक की आज्ञा है, यह सभा यही बरखास्त होती है। मेरे तीन कहते-कहते सब यहाँ से चले जायँ। ए क। दो ...।....'

कमरा बिल्कुल खाली था।

गिडिटो ने अब बेजिनो से कहा—'चलो बेजी, खाना खाने चले।'

बेजिनो भौचक था। पूछा—'तो नायक तुम हो ?'

'हूँ तो हूँ—पर चलो, भूख लग रही है।'

'कहाँ चलूँ ?'

'घर।'

'मैरिय के यहाँ नही ?'

'जहाँ चाहो, वहाँ जाओ।'
'तुम न चलोगे ?'
'मै अभी वही से आया था।'
'मैरिथ के यहाँ से आये थे ?'
'हाँ'
'अब न जाओगे ?
'नही।'
'घर पर मिलोगे ?'
'जरूर।'
'मैं घर पर न आया तो ?'
'तो बुरा होगा।'
'क्या होगा ?'
'बुरा होगा।'
'तो मैं घर पर न आ सकूँगा।'
'न आ सकोगे ?—कहाँ रहोगे ?'
'सो बतलाने की जरूरत नही।'
'तो मैं भी साथ चलता हूँ।'
दोनो साथ मैरिथ के स्थान की ओर चले।
मैरिथ के घर पर—
बे०—मैरिथ, तुम्हे पता है हमारे नायक गिडिटो महाशय है ?

मैरिथ को यह पता न था, पर यह पता था कि बेजिलो नायक के प्रति बहुत सद्भावना नही रखता। नायक के नरमपन, ढीलेपन और सुस्ती पर बेजी अपने तीक्ष्ण-कटु विचार मैरिथ के सामने कई बार उत्तेजना के साथ प्रकट कर चुका था। इसलिये जब गिडिटो के नायक होने की सूचना उसे मिली, तो वह प्रसन्न न हो सकी। न जाने क्यो, उल्टी पीली

पड गई । उसने आतक से गिडिटो की ओर देखा । इस दृष्टि मे भरे प्रश्न को अच्छी तरह न समझ कर उसने कहा—'नायक कितना भोला भलामानस है, यह तुम शायद जानते ही नही ?'

बेजिलो ने कहा—'मै खूब जानता हूँ । उसके भोलेपन पर मैरिथ के सामने कई बार तरस खा चुका हूँ ।'

इस पर मैरिथ फिर दहल सी उठी । कुछ लेने गयी तो गिडिटो के कान मे कह गई—खबरदार रहना ।' लौटकर आई तो गिडिटो ने कहा—बेजी, क्या नेपोलियन से खबरदार रहना होगा ?'

बेजिलो ने उत्तर दिया—'नेपोलियन खुद अपने को नही जानता । लेकिन खबरदार रहना अच्छा ही है ।'

काफी रात बीते वे अपने डेरे को चले । पर रास्ते मे ही न जाने कब बेजिलो बेपता हो गया ।

७

रात अँधेरी है, सुनसान है । पतलून की दोनो जेबो मे पिस्तौल है । बेजिलो महल के दरबाजे तक आ गया है । दरबाजे पर सन्तरी टहल-टहल कर पहरा दे रहा है ।

बेजिलो के आने पर सन्तरी ने सलाम किया ।

'सब ठीक है ?'

'बिल्कुल ।'

'उसी कमरे मे ?'

'हाँ ।'

रास्ते मे जितने मिले उनमे से किसी का अभिवादन लेकर, किसी को फुसलाकर, कुछ को डरा-धमकाकर,और बाकी बचे दो एक को ठण्डा करके बेजिलो, उस कमरे के दरवाजे पर आ गया । कमरा प्रकाशित था ।

एलबर्ट अकेला रहता था, अभी तक उसने व्याह न किया था ।

बेजिलो ने केवल झपे हुए दरवाजे को खोलकर कहा—'आ सकता हूँ ?'

उत्तर मिला, 'आइए' ।

उत्तर सुनने-न सुनने की परवाह किये बिना वह अन्दर दाखिल हो गया ।

एलबर्ट इतनी रात गए भी एक कुर्सी पर बैठा था । सामने छोटी-सी मेज थी । उस पर कुछ कागज रंग-बिरंगे बहुत बड़े शख से दबे हुए थे । पास ही एक ऊँचे स्टूल पर शेडदार लैम्प था, जो अच्छा खुशनुमा था, पर राजाओ के लायक बिलकुल न था । एलबर्ट का सिर अपने दोनो हाथो मे थमा हुआ था । एक कोहनी मेज पर रखी थी, दूसरी कुर्सी की बाँह पर, उनके माथे पर बल थे । ऐसे बैठे-ही-बैठे अनायास ही उसने 'आइये' कहा था ।

आगत व्यक्ति को जब उसने देखा, तो वह बिलकुल बदल गया । हाथ दोनो कुर्सी की बाँहो पर आराम करने लगे । सिर सीधा हो गया, और वह थोड़ा हँसा ।

'ओहो, बेजिलो है !—मै तो तुम्हे भूला जा रहा था ।'

'मै भूलने दूँ तब न !'

'यह भी ठीक है । आज शाम को मुझे खबर मिली थी कि आप रात को दर्शन देंगे, पर अभी-अभी तो मुझे इसका ध्यान उतर ही गया था ।'

'आपकी खबर ठीक थी । क्या इसके आगे और कुछ खबर भी थी ?'

'उसे मैं आपसे जानने की आशा रखता हूँ ।'

'आशा तो आप गलत नही रखते ।'

'तो आज्ञा हो मेरे लिये—'

'एलबर्ट, अभी जल्दी काहे की है ? तुम्हें जल्दी हो तो बात दूसरी ।'

'बडा सतोष है कि आपको जल्दी नही। नही तो जल्दी आपके मिजाज मे एक खास चीज है। फिर निश्चय के बाद देरी का कारण भी क्या।'

'एलबर्ट, मालूम होता है, तुम अपने भाग्य से परिचित हो। शायद समझते हो, प्रयत्न करने से भाग्य तो टलेगा ही नही, इसलिये इस तरह यहाँ निश्चिन्त बैठे हो। पर भाग्य को तुम्हारे प्रयत्नो की या निश्चिन्तता की कुछ भी परवाह नही।'

'बेजिलो, तुम जानते हो, मैं भाग्य मे विश्वास करता नही, पर अब मालूम होता है जैसे उसे मानना अच्छा है! मुझे भी विश्वास होता जा रहा है—होनहार टलता नही।'

'जाने दो, इन बातो को। तुम आज राजा हो, कल हमारे साथ मिलकर राजा की दुश्मनी का दम भरते थे! यह क्या धोखा नही है—और तुम इस पर दुख नही करते?'

'यही तो मुश्किल है कि अफसोस मैं नहीं कर पाता। धोखा-बोखा मैं जानता नही, लेकिन मालूम होता है, इस तरह अपने देश के लिये मैं शायद कुछ कर सकूँ।'

'एलबर्ट, तुम्हें शर्म नहीं आती? राजा बने बैठे हो जबकि सैकडो-हजारो तुम्हारे साथी तुम्हारी ही जेलो मे सड-गल रहे है। तुम्हारे देश-वासी गुलामी और दरिद्रता के नीचे कुचले जा रहे है, तब तुम ऐशोइश-रत में पड़े हो, और आस्ट्रियन के जूते के नीचे अपने उन भाइयो पर हुकूमत चलाते हो?'

'भाई, लाज आती अगर नही,तो क्या करूँ? मैं उसे जबरदस्ती बुलाने की आवश्यकता नहीं समझता। आज इस कुर्सी पर से सब देश सेवकों को नही, तो कुछ को तो मैं जेल से छुडा ही सकता हूँ, पर तुम क्या कर सके हो, क्या कर सकते हो?....और यह कुर्सी महल मे तो रखी है;

पर खूब देख लो, बिल्कुल मामूली है। क्या आधी-रात तक ऐसी कुर्सी पर जागते बैठना तुम्हारी निगाह मे पाप है ? और तुम यह नही जानते कि हुकूमत करने वालों को अपने सिर पर का जूता ज्यादा खलता है। क्या मैं तुम्हें बताऊँ कि आस्ट्रियन मुझसे जितना डरते हे,—तुमसे उतना नही।'

'तुम आज गद्दी के मोह मे पड़कर इटली को बेच रहे हो।'

'हूँ ?'

'तुम यह नही समझते ?'

'अभी तक नही।'

'लेकिन तुमको समझने के लिये ज्यादा वक्त नही दिया जा सकता।'

'ठीक है, मैं पहले ही काफी ले चुका हूँ।'

'लेकिन तुम्हे अपना अधिकार है, राष्ट्र को खो देने का नही।'

'राष्ट्र को न समझने का जैसा तुम्हे अधिकार है, वैसा मुझे भी तो उसे समझने का अधिकार है।'

'हम इसको बर्दाश्त नही कर सकते।'

'बर्दाश्त की आदत पैदा करनी चाहिये।'

'वह आदत अभी पैदा करने का वक्त नही है। अभी समय है कि अपनी गति पर पछताओ, लजाओ, और पीछे मुडो।'

'नही तो ?'

'... नही तो परिणाम भयङ्कर होगा। हम अपने देश का नाश नही देख सकते।'

'बेशक तुम अपने देश का नाश या लाभ नही देख सकते।'

'जो हो, अब वक्त कम है। बोलो क्षमा,—या दण्ड ?'

'तुम्हें ऐसा अधिकार किसने दिया ?'

'समझो कि पहली घड़ी से जीवन की अन्तिम घड़ी तक एक—बस

एक—राष्ट्र की चिन्ता रखने वाले तरुणो ने।'

'तो उनसे कहो, उन्होने भूल की। ऐसा अधिकार परमात्मा के हाथ से छीनने की आवश्यकता नही।'

'खैर, हुआ'—इस भाव से और इस ध्वनि से बेजिलो ने कहा—'बोलो, क्षमा या दण्ड ?'

'दण्ड या पुरस्कार जो भी होगा जरूर मिलेगा, पर क्षमा !·· क्षमा नही।'

'क्षमा नही ?··'

यह कहकर उसने जेब मे हाथ डाल दिया। एलबर्ट ने सब कुछ देखा। वह भी देखा जो बेजिलो नही देख पा रहा था। बोला—बेजिलो, एलबर्ट मे सीजर का खून है, और इटली का देश-प्रेम है। क्षमा नही।

'नही ?—तो लो।'

यह कहा और पिस्तौल खीच ली। इतने मे ही किसी ने कसकर बाँह को पकड लिया। घोडा दबा। गोली शेड और लैम्प को चूर चूर करती हुई निकल गई। रोशनी बुझ गई। घुप्प-अन्धेरा हो गया।

गिडिटो ने पिस्तौल बेजिलो के हाथ से छीनकर फेक दी। यह झन-झनाहट फर्श पर पडी।

कुछ भी न दीख पड रहा था। बेजिलो ने कहा—'कौन है ? अलग हट जाओ, नही तो सिर फोड़ दूंगा।' इतना कहकर दूसरी जेब मे हाथ डाल दिया।

गिडिटो ने एक जोर की चपत उसकी कनपटी पर जड दी।

'कम्बख्त।—यहाँ आया है मरने। चल घर, चल भाग।'

जब चलने और भागने मे देर लगी तो कान पकड कर उसे ढकेलते हुए कहा—'अरे भागता है या नही ? भाग जा झटपट, नही तो मर जायगा।'

इतने ही मे एक गोली सनसनाती हुई गिडिटो की बाँह को आर-पार कर गई और बेजिलो भाग गया।

● ★ ●

शोर मचाकर जब नौकर-चाकर सिपाही-प्यादे इकट्ठे-के-इकट्ठे वहाँ हाजिर हुए और रोशनी की, तो गिडिटो बाँह पकडे जहाँ-का-तहाँ खडा था, और एलबर्ट कुरसी पर वही-का-वही पिस्तौल ताने बैठा था।

गिडिटो पकड लिया गया।

बेजिलो बेतहाशा घबराया-सा दौडकर जब सदर दरवाजे के बाहर आया, तो किसी ने पुकारा—'बेजो।'

देखा कि सामने मैरिथ चिन्ता-व्यग्र खडी है। मैरिथ ने पूछा 'बेजी, गिडिटो कहाँ है ?'

'गिडिटो ?'

बेंजिलो की घबराहट मैरिथ से छिपी न रह सकी। उसने जोर देकर कहा—'हाँ, गिडिटो।'

'वह तो मुझे अन्दर नही मिला।'

'अन्दर नही मिला !'

'मुझे नही मालूम।'

उसने चिल्लाकर पूछा—'नही मालूम ?'

'नही !....लेकिन तुम इस वक्त यहाँ कहाँ घूम रही हो। चलो, घर चले।'

गिडिटो रात-रात भर तुम्हारी तलाश मे घूमे,—और तुम्हे अब चैन की सूझे। ऐसे ही हो तुम ?....सच बताओ, गिडिटो कहाँ है ?'

'मुझे कैसे मालूम ?'

'यही खत्म हो जाओगे।— बोलो नही मालूम ?'

बेजिलो ने देखा, पिस्तौल सीधी उसके मुँह की तरफ तनी है,

देखने और बुद्धि लगाये रखने से उसने अपनी आँख भी और बुद्धि भी दोनो को खो दिया, सो वह अन्धा हो गया तो उसे और पक्का हो गया कि सूरज की रोशनी कोई सत् वस्तु ही नही है।

'इस अन्धे आदमी के साथ एक दास भी था। उसने मालिक को नारियल के पेडो की छाह मे बिठा दिया था और जमीन पर से एक नारियल उठाकर रात के लिए रोशनी का इन्तजाम करने लगा। बट-कर नारियल की जटा की उसने बत्ती बनाई, गिरी को कुचलकर उसी के खोल मे तेल निकाल लिया और बत्ती को उस तेल में भिगोकर रख दिया।

'वह दास वहाँ बैठा जब यह कर रहा था तभी उसका अन्धा मालिक उससे बोला कि क्योरे तुझे ठीक कहा था कि सूरज नही है। देखो यह कैसा गुप अँधेरा चारो तरफ है। फिर भी लोग कहते है कि सूरज है ...... अगर है तो भला क्या है ?

दास बोला—'यह तो मै नही जानता कि सूरज क्या है। सो जानने से मुझे है भी क्या ? पर रोशनी है तो मै जानता ही हूं। यह मैंने अपना दीया तैयार कर लिया है। उसके सहारे उँगली पकडकर मैं आपको राह दिखाने के काम भी आ जाऊँगा। और रात को झोपडी मे उससे जो चीज आप चाहे पाकर दे भी सकूँगा।'

'इतना कहकर उसने अपने नारियल के दीपक को ऊपर उठा लिया। बोला—सो मेरा तो यही सूरज है।

'पास ही वहाँ एक लँगड़ा आदमी भी बैसाखी रक्खे बैठा था। यह सुनकर वह हँस दिया। और अन्धे आदमी से बोला—'मालूम होता है तुम जन्म के अन्धे हो। तभी तो यह नही जानते कि सूरज क्या है ? मैं बताता हूं, क्या है ? वह एक आग का गोला है। हर सबेरे समन्दर मे से उगता है और शाम हमारे टापू की पहा-डियो मे जाकर छिप जाता है। हम यह रोज देखते है। आखे होतीं तो तुम भी देख लेते।'

'यह बातचीत एक महुआ मल्लाह भी सुन रहा था। वह लँगडे

आदमी से बोला कि दीखता है तुम अपने इस छोटे-से टापू से बाहर कभी कही गये नही हो। जो तुम लँगडे न होते और मेरी तरह डोंगी लेकर बाहर निकल सकते तो देखते कि सूरज तुम्हारी पहाडियो में जाकर नही छिपता है। लेकिन जैसे ही हर सवेरे वह निकलता समन्दर से है, वैसे ही हर रात डूबता भी समन्दर मे है। जो कह रहा हूँ उसको तुम बिल्कुल सच्ची बात मानना। क्योंकि हर रात मैं यह अपनी आँखो देखता हूँ।

'उस समय हमारे दल मे एक हिन्दुस्तानी भी थे। बात के बीच में पडकर वह बोले—'कोई समझदार आदमी तो नासमझी की ऐसी बात कर नही सकता। तुमने जो कहा उस पर मुझे अचरज होता है। आग का गोला पानी मे उतरे तो भला बिना बुझे कैसे रहेगा? असल मे वह गोला नही है, न आग है। वह तो एक देवता है जो सात घोडो के रथ मे बैठकर स्वर्ण-पर्वत मेरू की प्रदक्षिणा करते है। कभी राहु और केतु नामक असुर उन देवता पर चढाई करते है और ग्रस लेते हे। तब दुनिया पर अन्धकार छा जाता है। लेकिन हमारे पण्डित-पुरोहित होम-स्तवन आदि करते है। उससे देवता मुक्त हो जाते है। और फिर प्रकाश देने लगते हैं। तुम जैसे अनजान लोग जो बस अपने द्वीप के इर्द-गिर्द रहते है। और आगे का कुछ नही जानते। वही ऐसी बचपन की बात कह सकते हैं कि सूरज उन्ही के देश के लिए होता है।'

'एक मिस्त्री सज्जन भी वहाँ मौजूद थे। उनका पहले अपना जहाज था। अपनी बारी लेकर वह बोले—'तुम्हारी बात भी सही नही है। सूरज कोई देवता नही है। और न तुम्हारे हिन्दुस्तान के या तुम्हारे स्वर्ण-पर्वत के चारों तरफ ही घूमता है। मैं दूर-दूर घूमा हूँ। काले सागर गया हूँ, अरब का किनारा मैंने देखा है, मेडागास्कर और फिलिपाइन टापू भी मैंने घूमे हैं। सूरज हिन्दुस्तान को ही नही सारी धरती को रोशनी देता है। कोई एक पहाड का चक्कर वह नही करता, पर पूरब से दूर कही जापान के टापू के पार वह उगता है और

पश्चिम मे इधर इग्लिस्तान के द्वीपो के परली तरफ कही छिपता है। जभी तो जापान के लोग अपने देश को निपन' कहते है। जिसका मतलब होता है सूर्योदय। मैं इस बात को पूरे भरोसे से कह सकता हूँ, क्योकि अव्वल तो मैने खुद कम नही देखा-जाना है। और फिर अपने दादा से सुनकर भी मै बहुत जानता हूँ। ओर से छोर तक समन्दर तमाम हमारे बाबा का छाना हुआ था।

'अभी वह मिस्त्री सज्जन और भी आगे कहते। लेकिन हमारे जहाज के एक अँग्रेज नाविक जो वहाँ थे, बीच मे काटकर बो लेने लगे—

'असल मे तो हमारे इग्लैण्ड देश के रहने वाले लोगो मे से सूरज की गति के बारे मे ज्यादा और कोई नही जान सकता। हमारे मुल्क का बच्चा-बच्चा जानता हे कि सूरज न कही से निकलता है, न कही छिपता है। वह तो सदा पृथ्वी के चारो तरफ घूमता रहता है। इसका पक्का सबूत यह है कि हमने धरती का पूरा चक्कर लगाया है, पर सूरज से जाकर हम कही नही टकराये। जहाँ गये, सूरज सबेरे दीखने लगता और रात को छिप जाता। ठीक जैसा कि यहाँ होता है।

'यह कहकर वह अँग्रेज छडी से रेत मे नक्शा बनाकर अपनी बात समझाने लगा कि किस तरह चारो तरफ आसमान मे चक्कर लगाता है। लेकिन वह साफ-साफ नही समझा सके। इससे जहाज के बड़े अफसर को बताकर बोले कि वे मुझसे ज्यादा इन बातो को जानते है। वह ठीक-ठीक समझा सकेंगे।

'वह सज्जन, समझदार और बुर्दबार थे। अब तक चुपचाप सब सुने जा रहे थे। खुद कहे जाने से पहले वह नहीं बोले थे। अब सबका उनसे अनुरोध होने लगा। इसलिए बोले—

'आप सब लोग एक दूसरे को असल में बरगला रहे हैं और खुद भी धोखा खा रहे है। सूरज धरती के चारो तरफ नही घूमता, बल्कि धरती उसके चारो तरफ घूमती है। इस सफर मे वह खुद भी अपनी धुरी पर घूमती जाती है। उसका एक चक्कर चौबीस घण्टे मे पूरा

होता है। इतने समय मे न सिर्फ जापान, फ़िलिपाइन या जहाँ हम बैठे है, वह सुमात्रा का टापू है, सूरज के सामने आ जाते है, बल्कि अफ्रीका, यूरोप, अमरीका या और जो मुल्क हो उस सूरज के सामने ही रहते है। सूरज किसी एक पहाड़ या टापू या एक समन्दर या एक धरती के लिए ही नही चमकता बल्कि हमारी पृथ्वी की तरह और ग्रह हैं, उनको भी वह चमकाता है। अगर आप अपने पैर के नीचे की धरती के बजाय ऊपर आसमान पर भी निगाह रक्खा करे तो आप सभी लोग यह आसानी से समझ सकते है। तब यह मानने की जरूरत आपको न रहेगी कि सूरज आपके लिए या आप ही के लिए उगता और प्रकाश करता है।'

'जगत के देश-देश देखे हुए और ऊपर आसमान पर भी निगाह रखने वाले उन अनुभवी ज्ञानी ने उनको यह सद्बोध दिया।'

कनफ्यूशस के चेले वह चीनी महोदय ऊपर की कहानी सुनाकर अन्त मे बोले—'इस तरह मत-मतान्तर के बारे मे यह अहङ्कार ही है जो हममे फूट डालता है और भूल करवाता है। सूरज की उपमा से ईश्वर को भी जान लीजिए। सब लोग अपना-अपना परमात्मा बनाना चाहते है। या कम-से-कम अपने देश जगत के लिए एक विशेष ईश्वर को मानना चाहते है। हरेक मुल्क और जाति के लोग ईश्वर को अपने मन्दिर-गिरजो मे घेरकर बाँध लेना चाहते है, जो सारे ब्रह्माण्ड से भी बड़ा है। और कुछ जिससे खाली नही है।

'क्या आदमी का बनाया कोई मन्दिर-गिरजा इस कुदरत के मन्दिर की बराबरी कर सकता है?'

खुद भगवान ने यह जगत सिरजा है कि सब लोग यहाँ एक रहे और सिरजनहार माने। अरे, आदमी के तमाम देवालय उसी की नकल तो हैं। और भगवान का आलय स्वयं यह जगत है। मन्दिर क्या होता है? उसमे आँगन होता है, छत होती है, दीपक होते है, मूर्ति-चित्र होते हैं। वहाँ उपदेश लिखे मिलते हैं, शास्त्र-पुराण रक्खे

होते है । वेदी होती है, पुजारी होते है और पुजापे की भेट-पूजा चढती है । लेकिन किस देवालय का समन्दर जैसा खुला आँगन है ? आकाश के चाँदो जैसा किस मन्दिर का कलश है ? सूरज, चाँद और तारे किसके प्रकाश दीप हे ? सजीव भक्ति से भीगे उदार सन्तो के समान स्फूर्तिदायक चित्र मूर्तियाँ और कहाँ है ? आदेश और आलेख्य ईश्वर की महिमा के ऐसे सुलभ और कहाँ है जैसे इस जगती पर ? यहाँ हर कही तो उन दयाधाम की दया के अनुकम्पा के स्मृति चिह्न है । और कहाँ वह नीतिशास्त्र है जिसका वचन आदमी के भीतर की वाणी जितना स्पष्ट और अविरोधी है ? कौन पूजक और कौन पुजारी उस आत्माहुति से बढकर है जो इस पृथ्वी पर स्त्री-पुरुष नित्य एक-दूसरे के प्रति दे रहे और देकर जी रहे हे ? और कौन वेदी है जो सत्पुरुष के हृदय की वेदी की उपमा मे ठहर सके, कि जहाँ का चढा उपहार स्वय भगवान ग्रहण करते है ?

'ईश-कल्पना जितनी ही ऊँची उठती जायगी उतना सद्ज्ञान बढेगा । उस ज्ञान के साथ-साथ मनुष्य स्वय उत्तरोत्तर वैसा ही होता जायेगा । उसी महामहिम की भाति कल्याणमय, दयामय और प्रेम-मय । फिर वह जीवमात्र को उसी की भाँति स्नेह करेगा ।

'इसलिए सब जगह जो उसी का प्रकाश और उसी की महिमा देखता है, वह किसी की त्रुटि नही निकालेगा, न किसी को हीन मानेगा । जो उस ज्योति की एक रेख लेकर, मूर्ति बना उसी मे भगवान को देख लेता है, उसकी श्रद्धा भी स्खलित नही करेगा । न तो वह उस नास्तिक को हीन भाव से देखेगा जो दुर्दैव से ही अन्धा होकर सूरज की रोशनी से अकस्मात वञ्चित बन गया है ।'

इन शब्दो मे कनफ्यूशस के शिष्य चीन के उस सत्पुरुष ने अपनी मान्यता प्रकट की । सुनकर वहाँ मौजूद सब आदमी शान्त और गम्भीर हो आये और मत-मतान्तरो के बारे मे अपना सब विवाद भूल गये ।

●

: १७ :

लाल सरोवर

कमल के फूलो से भरे इस लाल सरोवर की कथा भाई, प्राचीन है और परम्परा के अनुसार सुनाता हूँ।

बहुत पहले यहाँ से उत्तर-पूरब की तरफ एक नगर बसा हुआ था। उसके बाहर खण्डहर की हालत मे एक शिवालय था। नगर के लोग उधर तब आते-जाते नही थे। वह उजाड जगह थी और कहा जाता था कि वहाँ भूत का वास है।

उस शिवालय मे जाने कहाँ से एक सन्यासी जाकर बस गया। वह यहाँ अकेला रहता था। मधुकरी के लिए कभी नगर मे आ जाता तो आ जाता, नही तो अपने ही स्थान पर नित्य भजन-प्रार्थना मे लीन रहता था। इस भाँति वहाँ रहते हुए उसे दस वर्ष हो गये। इधर बहुत काल हुआ, वह नगर मे भी नही गया था। लोग शिवालय पर ही आकर उसे भोजन दे जाते थे। वह कुछ नही बोलता था। धन्य-वाद या आशीष-वचन भी नही देता था। दिन मे वह जङ्गल और खेतो की तरफ निकल जाता और अचरज से सब कुछ देखा करता था। सुबह शाम प्रार्थना मे, कभी आँख मीचकर तो कभी दरवाजे के बाहर की ओर एकटक निगाह से देखते हुए, बिना कुछ कहे आँसू ढाल कर रोया करता था। पर उसके मन मे प्रीति बहुत मालूम होती थी।

उसके बारे में कोई कुछ नही जानता था कि वह पहले कहाँ

रहता था, क्यों यहाँ आया और भविष्य के बारे मे उनके क्या विचार है ?

इस तरह उसे पाँच साल और बीत गये। एक दिन सबेरे के वक्त उसके पास दर्शनार्थ गाँव के लोग आये हुए थे कि उनमे से एक बोला, 'महाराज, ईश्वर के जगत मे बुराई का फल बुरा और नेकी का फल अच्छा होता है। हम आँखो से देखते है कि जो पाप-कर्म करता है, उसकी पीछे बडी दुर्गति होती है।'

उस आदमी ने अपनी इस बात के समर्थन मे उदाहरण दिया कि—हमारे ही नगर के बाहर एक कोढ़िन रहती है। वह पहले वेश्या थी। अब सारे तन-बदन से उसके कोढ चू रहा है और वह अपनी मौत के दिन गिर रही हैं।

उस बैरागी ने सुनकर कुछ नही कहा। जब लोग चले गये तो उसके मन मे यह बात घूमती रही। पाप का फल दुख और पुण्य का फल सुख होता है। यही बात उसक मन मे चक्कर काटती रही। उस कोढिन की बात उसके मन से दूर नही होती थी, जो अब नगर के बाहर पड़ी अपनी मौत के दिन गिन रही है। उस रात वह रोज से अधिक प्रार्थना मे लीन रहा और रोता रहा। शायद उसको रात को भी ठीक तरह नीद नही आई। वह कल्पना मे उस कोढिन को देखने लगा। उसको मालूम होता था कि उस स्त्री की देह से दुर्गन्ध निकल रही है, तन छीज रहा है और कोई सेवा क लिए उसक पास नहीं हे ! फूंस की झोपडी है और चारो तरफ गूदड इकट्ठे हो रहे है। बास फैली है। कही थूक है, कही मैल है और वह कोढिन अकेले रहते-रहते बड़ी चिड़-चिड़ी हो गई है।

कल्पना मे देर तक वह उस स्त्री को देखता रहा। यहाँ तक कि मन मे बड़ा कष्ट हो आया।

रात को वह सोया। तब भी वह स्त्री उसके स्वप्न मे दूर नहीं हुई, पर उनको ऐसा मालूम हुआ कि कोई उससे कह रहा है—'तू

वैरागी है, क्योकि तुझे खाने-पीने को आराम से मिल जाता है। तू भगत है, क्योकि लोग तेरी श्रद्धा मानते है। पर तू मेरा भगत नही है, तन का भगत है।'

उसे मालूम हुआ जैसे उसे कोई उलाहना दे रहा हे और कह रहा है कि तू अच्छे फल के लिए ही अच्छे काम करता है ना! तू स्वार्थी है और कुछ नही है।

सबेरे जब वह उठा तो उसे कल की बात याद आई थी। इस-लिए शिवालय से उतर कर नगर की ओर मुँह करके वह चल दिया। उसे ठीक पता नही था, पर जैसे पैर अपने आप उठे जाते थे।

उसी नगर मे एक आदमी रहता था। उसका नाम था मगल-दास। मगलदास साधु-सन्तो मे भक्ति-भाव रखता था। समझता था कि तपस्या की बडी महिमा है और सन्त लोगो पर ईश्वर की दया रहती है। उनके सत्सङ्ग से क्या जाने मुझे भी कुछ लक्ष्मी पाने का सौभाग्य मिल जाय। मगलदास आदमी समझदार था, विद्वान और हुनरमन्द था और इज्जत-आबरू वाला था। शिवालय मे आकर एकात मे बसने वाले उस वैरागी की सेवा मे सदा भेट-उपहार लाया करता था। सोचता था—अब फल मिलेगा, अब फल मिलेगा। मगलदास आज सबेरे ही जल्दी उठ गया था। रात भर उसके मन मे दुविधा रही थी। ये दिन ऐसे ही थे। बाजार मे तेजी-मन्दी हो रही थी। सट्टे के काम मे छन में वारे-न्यारे हो जाते थे। आँखो देखते कुछ ने प्रचुर धन बटोर लिया था और कुछ कुबेर जैसे धनी पामाल हो गय थे। पर मगलदास को भरोसा नही जमता था और खतरा नही उठाना चाहता था। इन मौनी वैरागी पर उनको श्रद्धा थी। सोचता था कि सबेरे ही उसके दर्शन करके जो दाँव लगाया उसका फल जरूर अच्छा ही आयेगा। सबेरे ही सबेरे चलकर मगलदास शिवालय पर आया तो रास्ते मे क्या देखता है कि एक-एक कदम पर एक एक अशर्फी पड़ी है! उसे बड़ा अचम्भा और खुशी हुई। अशर्फी उठाता गया और शिवालय

पर आया । पर वहाँ वैरागी नही थे । लौटकर वह उसी रास्ते अशर्फियो के पीछे चला । अशर्फी उठाकर रखता चला जाता था । इतने मे क्या देखता है कि एक ग्वाले का लडका रास्ता काटकर चला जा रहा है और उसने दो अशर्फियाँ उठा ली है । मगलदास ने बढकर उस बालक को पकड लिया ।

'वह तूने क्यो उठाई है रे ?'

ग्वाले ने कहा, 'रास्ते मे पडी थी । मैने उठा ली ।'

मगलदास ने उसे बहुत धमकाया, 'ऐसे क्या किसी की भी चीज उठा लोगे ?' फिर कहा, 'अशर्फियो की बात किसी से कहना मत ।'

इस तरह मगलदास अशर्फियाँ बीनता-बीनता एक फूँस की नीची-सी मडिया पर जा पहुचा । पर वहाँ उसे बडी दुर्गन्ध आई । वहाँ खडा रहना उसके लिए मुश्किल था लेकिन उसे ऐसा मालूम हो रहा था कि यही कही सोने का खजाना है । फिर भी उसके पास की बास और गन्ध के मारे वह अन्दर नही गया । उसे पता था कि यही वह कोढिन वेश्या अपनी आयु के अन्तिम दिन गिर रही है ।

मगलदास दूर एक जगह बैठकर अपनी अशर्फियाँ देखने और गिनने लगा । वह अपने भाग्य पर बडा प्रसन्न था । तीन सौ से ऊपर अशर्फियाँ आज सबेरे कैसे अनायास ही मिल गई । उसे तो उन्हे साथ बाँधे रखना मुश्किल हो रहा था ।

इतने मे देखता क्या है कि वेश्या की झोपडी मे से शिवालय वाले वैरागी निकले है । उन्होने झोपडी के चारो तरफ की धरती को साफ किया । मैला उठाकर दूर जगह गड्ढा खोदकर उसमे गाड दिया । यह सब करके फिर दुबारा वह कुटी के अन्दर गये । कुछ देर अनन्तर वैरागी बाहर आकर अपने शिवालय की तरफ चल दिये ।

मगलदास उनके पीछे-पीछे चला तो क्या देखता है कि जहाँ वैरागी का पैर पडता है वही एक अशर्फी हो जाती है । उसका मन हर्ष से भर गया । पर मुँह से उसने साँस भी नही निकलने दी । वह

जल्दी-जल्दी अशर्फियाँ बीनता हुआ वैरागी के पीछे-पीछे कुटी तक गया। लेकिन इस भाँति कि वैरागी को पता न चले। बीच-बीच मे यह देखता भी जाता था कि कोई देख तो नही रहा है। और जब सब बीन चुका तो लौटकर सीधा अपने घर गया और सब अशर्फियो को अच्छी तरह उसने धरती मे गाड दिया।

फिर वैरागी के पास शिवालय पर आकर उनके चरणो मे फल-फूल रखे और कहा, 'महाराज' इन्हे स्वीकार करें।

वैरागी ने प्रीतिभाव से मगलदास को देख लिया, पर बोला नही।

मगलदास ने कहा, 'महाराज' हम ससार मे कर्मबन्ध करते हुए रहते है। मैं अब इस ससार मे राग नही रखना चाहता हूँ। आपको इस निर्जन स्थान मे बडा कष्ट होता होगा। मैं आपकी सेवा मे उपस्थित रहना चाहता हूँ। मजूर हो तो सेवक यहाँ शरण मे पडा रहे।'

वैरागी फिर बिना कुछ बोले मगलदास को देखते रह गये, जैसे उनकी समझ मे कोई बात नही आ रही थी।

असल मे मगलदास यह नही चाहता था कि वैरागी के चलने से बनने वाली दौलत किसी और के भी हाथ लगे।

उसने कहा, महाराज! आपकी सेवा कर पाऊँगा तो मेरा जीवन सफल हो जायेगा?'

वह वैरागी पुरुष इस पर बहुत हँसा और हाथ हिलाकर कहा, 'यहाँ किसी की जरूरत नही है।'

तब मगलदास ने कहा, 'पास ही फूँस की झोपडी डाल कर अलग पड़ा रहूँगा। मैं तो अपनी आत्मा की भलाई चाहता हूँ। आपकी दया होगी तो जन्म सुधर जायेगा।

वैरागी जबाब मे हँस दिये और कुछ नही बोले और मगलदास ने वहाँ आकर डेरा डाल लिया। वह बडी लगन से वैरागी की सेवा करता और हर घडी बिना पलक मारे हाजिरी मे खडा रहता था।

वैरागी नित्य सबेरे उस कोढ़िन के पास जाते थे और थोडी देर

रहकर चले आते थे । हर रोज हर कदम पर अशर्फी बनती थी, जिनको मगलदास होशियारी से बटोर लेता था। बटोर-कर घर मे दाब आता था ।

एक बार की बात है कि चलते-चलते वैरागी को पीछे कुछ झगडा होता हुआ मालुम हुआ। उन्होने लौटकर देखा कि बात क्या है। देखते है तो तीन जने आपस मे झगड रहे ह और रास्ते पर कुछ पीले सोने के टुकडे पडे हुए है ।

वैरागी को मुडते देखकर झगडने वाले तीनो आदमी चुप हो गये और उनको सिर झुका दिया ।

वैरागी वहाँ खडे देखते रहे । उन्होने पूछा, 'क्या बात है ?'

जब तीनो मे से कोई कुछ नही बोला, तब वैरागी ने मगलदास को इशारा किया कि इन पीले टुकडो को इन दोनो को दे डालो ।

मगलदास ने वैरागो के कहे मुताबिक उन अशर्फियो को उठाया और दोनो को दे दी ।

वैरागी आगे बढे लेकिन उन्हे फिर झगडा सुनाई दिया। इस बार बात और बढ गई थी। पर वैरागी ने ध्यान नही दिया और कोढिन की कुटिया की तरफ बढते चले गये ।

जब वापिस चलने का समय आया तो मगलदास आकर वैरागी के चरणो मे गिर पडा—'महाराज! आपको पैदल चलने का कष्ट नही होने दूंगा। मेरा सिर पाप से मलिन है। अपने कन्धे पर बिठा कर महाराज को मैं ले चलूंगा, तो मेरा तन इससे पवित्र होगा।'

वैरागी हँसते रह गये ।

असल मे मगलदास यह नही चाहता था कि अशर्फियाँ बने तो किसी और को भी मिल जाये। उसने आग्रह पूर्वक वैरागी को कन्धों पर बैठाया और दूसरे लोगो को विजय के भाव से देखते हुए उन्हे शिवालय तक ले आया ।

लोगो को यह बडा बुरा मालूम हुआ। लेकिन वे कर क्या

सकते थे। वे सभी अशर्फियाँ चाहते थे, पर कोई यह नही चाहता कि वैरागी को अपने चलने से अशर्फियाँ पैदा होने की बात मालूम हो। क्योंकि ऐसा होने पर अशर्फियाँ किसी के हाथ नही लगेगी और वैरागी अपना घर भर लेगा। मूरख अनजान है, तभी तो यह आदमी इतना सूखा, दीन और वैरागी बनकर रहता है।

अशर्फी की बात नगर-भर मे फैल गई थी। मगलदास को बडी कसक रहने लगी। इसके बाद से वह वैरागी को कन्धे पर ही ले जाया करता था। उसके मन मे तरह-तरह के विचार होते। कई हजार अशर्फियाँ उसके पास हो गई थी, लेकिन उसका बढना रुक गया था। इससे उसके मन को बहुत क्लेश था। उसने सोचा, वैरागी को यहा से कही और ले चलूँ। जहाँ अशर्फी की बात किसी को मालूम न हो। लेकिन कैसे ले चलूँ? कोढिन को छोडकर क्या वैरागी कही जाने को राजी होगा?'

मगलदास ने नगरवासियो की एक रोज वैरागी से बहुत बुराई की। कहा, 'यह नगर सन्तो के योग्य बिलकुल नही है, महाराज! अब आप किसी दूसरे देश चलिये। आपका यह सेवक साथ है।'

वैरागी सुनकर हसता रहा। वह बोलता नही था।

मगलदास खुलकर कुछ कह नही सकता था। उसे यह डर रहता था कि कही अपनी मर्जी से पैदल चलने की हठ वैरागी न कर बैठे। एस भेद खुल जाता। इससे वह कभी बात बढ़ाता नही था।

आखिर सोचते-सोचते मगलदास को एक बात सूझी। सोचा कि कोढिन अपना कोढ़ लिए क्यो जिये जा रही है? शिवालय से उसकी झोपडी तक लोगो की आँखे बराबर लगी रहती है। वैरागी को यहाँ से वहाँ तक रोज-रोज कन्धे पर ले जाने से मेरा बदन भी दुखने लगा है और अशर्फियाँ भी नही मिलती है। इससे क्या फायदा है?

कोढ़िन के दिन निकट आ गये थे और वैरागी की सेवा भी उसके बहुत काम नही आ सकी। वह असल मे मरना ही चाहती थी वह

ईश्वर की या दुनिया के लोगो की, किसी की क्षमा नही चाहती थी। उसे अपने पापो का ख्याल था और जानती थी कि यह उसकी सजा है। जब से वैरागी उसके पास आने लगा था तब से उसकी आदत बदलने लगी थी। पहले वह सबको फूहड गालियाँ दिया करती थी और दिन भर बकती रहती थी। वैरागी ने हर तरह की गालियाँ खाकर उसे कोई चिढाने की बात नही कही, बल्कि बिना कुछ बोले वह उसकी कुटिया की सफाई कर देता था, उसका थूक-मैल उठा देता था और उसके गन्दे कपड़े धो देता था तो यह देखकर कोढिन को पहिले तो कुछ ठीक तरह समझ मे नही आया। थोडे दिन बाद कोढिन मानने लगी कि मेरी मौत जल्दी क्यो नही हो जाती है मेरी वजह से इन भलेमानस को दु ख उठाना पड रहा है। वह हर घडी ईश्वर से अपनी मौत की याचना करती थी, क्योकि इन वैरागी की सेवा उससे नही सही जाती थी और वह मन ही मन अपने को बहुत धिक्कारती थी।

इधर वह कोढिन मरना चाह रही थी, उधर मंगलदास ने सोचा कि जब तक वह कोढिन यहाँ है, वैरागी इस नगर से टलने का नाम नही लेता दीखता है। इसलिए इसको खत्म करना चाहिए।

यह सोचकर मगलदास एक रोज रात को चुपचाप आया और सोती हुई कोढिन का गला दबाकर उसे दु ख-सन्ताप से छुडा दिया।

अगले रोज मगलदास के कन्धे पर बैठकर वैरागी बाबा कोढिन की कुटिया पर गये और देखा कि वह मर गई है। तब उन्होने मगल को कहा कि 'कपड़े-लत्ते जमा करके जला दो। इस फूंस की कुटिया को भी जला दो और इस कोढिन के शरीर की क्रिया-कर्म का बन्दो-बस्त करो।'

मगलदास को यह बहुत बुरा मालूम हुआ। लेकिन वह क्या कर सकता था। आखिर उसने खर्च का बहाना किया। कहा कि, 'महाराज, मैं तो इधर आपके पास रहता हूँ और कमाने की ओर से मैंने मुंह मोड़ लिया है। देखिए, नगर मे जाकर किसी से कहूंगा ?'

वैरागी सुनकर हँस दिया और बिना कुछ कहे मुडकर नगर की तरफ चल दिया ।

मगलदास बडा खुश हुआ । क्योकि इस समय नगरवासी तथा और कोई पास नही था और वैरागी के चलने पर हर कदम पर जो अशर्फी बनती बस वही उठाता और बटोरता जाता था ।

क्रिया-कर्म के अनन्तर शिवालय पर आकर मगलदास ने कहा, 'महाराज, अब यहाँ से अन्यत्र पधारना चाहिए । यह नगर आपके योग्य नही रहा है ।

मगलदास सोचता था—'यही रहकर मैं जायदाद बनवाऊँगा तो सब लोग ईर्ष्या करेगे और कहेगे कि वह रुपया इसने कहाँ से पाया ? तब आखिर इन वैरागी को भेद मालूम हो जायगा । तब मेरे पास कुछ नही रह पायेगा । इसीलिए वह सोचता था—'यहाँ से दूसरी जगह जाकर मै बडी हवेली बनवा लूँगा और एक कोठरी मे इस वैरागी को जगह दे दूँगा । बस वहाँ श्रद्धालु जन आया करेंगे और भेंट-पूजा भी चढावेगे । ऐसे वैरागो से मुझको खूब आमदनी हुआ करेगी ।'

मगलदास के घर मे उसकी स्त्री थी और माता थी । रुपये की बात उसने अपनी माँ को नही बतलाई थी । बस स्त्री को बतलाई थी । जब नगर वालो ने देखा कि मगलदास वैरागी से किसी दूसरे को नही मिलने देता है तो उसके दुश्मन हो गये । उनकी कोशिश रहने लगी कि इनके घर मे फूट पड जाय ।

ऐसी सस्ती आमदनी की वजह से मगलदास पहले से कजूस हो गया था । वह माता की बेकदरी करता था । काम तो उस खूब करना होता था, पर खाने को रूखा-सूखा ही मिलता था । नगर वालो ने मंगलदास की माँ को कहा, 'तुम्हारे बेटे को इस वक्त खूब मुफ्त की दौलत मिल रही है । तुम्हारे वारे-न्यारे है ।'

माँ ने समझा—लोग हमारी गरीबी की हँसी उड़ाते है । उसने कहा, 'भैया गरीबी के दिन जैसे-तैसे हम लोग काटते है । हमारे पास धन

कहाँ है। गरीब की हँसी नही करनी चाहिए।'

सब नगर वालो ने कहा, 'मगलदास तुम्हारे साथ धोखा करता है। उसने जरूर धन कही छिपा रखा है।'

होते-होते माँ को भी इस बात का विश्वास आ गया है और वह अपने बेटे की बहू से झगडा करने लगी। नतीजा यह हुआ कि रोज कलह होती और घर मे अशान्ति बनी रहती।

मगलदास को अब इस नगर मे रहने का बिल्कुल चाव नही रह गया था। गाँव के लोग तो दुश्मन थे ही और घर मे भी अनबन रहा करती थी। सो उसने वैरागी को बहुत कहा सुना कि इस नगर को छोड कर चलना चाहिए।

वैरागी ने कुछ नही कहा। वह नित्य प्रार्थना मे लीन रहता था। और कोढिन की आत्मा के लिए शान्ति की दुआ किया करता था।

मगलदास ने कहते कहते जब वैरागी के लिए चैन का अवसर ही नही छोडा तो वैरागी ने कहा, 'तुम क्या चाहते हो?'

मगलदास बोला, 'यहाँ के लोग अब आपको धर्म-ध्यान नही करने देगे। मैं जो आपकी सेवा मे आ गया हूँ इससे वे मुझसे दुश्मनी रखने लगे है। इसलिए आप इस नगर से कही दूसरी जगह चलिए।'

वैरागी ने कहा, 'तुम मेरे पीछे गृहस्थ क्यो छोड रहे हो?'

मगलदास, 'महाराज, घर-गृहस्थी का बन्धन तो माया का बन्धन है। मुझे तो आपकी सेवा मे सुख मिलता है।'

वैरागी, 'घर मे तुम्हारे कौन-कौन है?'

मगलदास, 'माता है, स्त्री है।'

वैरागी, 'उनको अकेला नही छोडना चाहिए। जाओ, उनकी चिन्ता करो। तुम्हारे पीछे उनका गुजारा कैसे होगा?'

मंगलदास, 'महाराज, यह कैसी बात करते है। गुजारा कौन किसका करता है। सब ईश्वर का दिया खाते है। आप ही की शिक्षा तो है कि सबका पालनहार वही है। यह तो अहङ्कार है कि मैं किसी

का पालन कर सकता हूँ। मुझे अब ससार से मोह नही है। मैं तो आपके चरणो का सेवक होकर प्रसन्न हूँ।'

वैरागी सुनकर हँस दिया। बोला, 'अच्छा, समझो कि अपनी माता और पत्नी की सेवा भी मेरी ही सेवा है। यह समझकर जाओ, उन्ही के पास रहो।'

वैरागी के यह वचन सुनकर मगलदास को बडी निराशा हुई। उसके मन मे तो महल बनने लगे थे। इन वचनो से उनकी बुनियाद ही खतम हुई जा रही थी। मगलदास ने वैरागी के चरण पकड लिए। कहा, 'महाराज की मुझ पर अदया क्यो है?'

वैरागी ने कहा, 'अगर ससार की तृष्णा नही है, तो सेवा की भी तृष्णा नही होनी चाहिए। ईश्वर तो सब कही है। तुम्हारे घर मे नही है और ईश्वर यहाँ इस कुटिया मे ही है, अगर ऐसा मानते हो तो तुम्हारी बडी भूल है। मेरी सेवा तुम करना चाहते हो तो क्या बतला सकते हो कि क्यो चाहते हो?'

मगलदास— महाराज, मुझे अपनी मुक्ति की इच्छा है। आपकी सेवा से मेरी मुक्ति का मार्ग खुल जायगा।'

वैरागी—'मुक्ति का मार्ग घर मे रहकर अगर बन्द होगा तो उसे बन्द करने वाले तुम्ही हो सकते हो। अन्यथा वह वहाँ भी खुला है। जाओ, मुझको छोडो। मेरी सेवा अब तुम क्या कर सकते हो? यह मेरा तन सेवा के लायक नही है। यह दूसरों के काम आ सके—इसीलिए मैं धारण किये हुए हूँ कि अगर तुम इसमे मोह रखोगे तो मेरा अपकार करोगे।'

लेकिन मगलदास भक्ति-भाव से उनके चरणों मे नमस्कार करके कहने लगा, 'महाराज मुझ पर अदया न करे। मै तुच्छ ससारी जीव हूँ। मुझे फिर वापिस ससार के नरक मे आप न भेजे।'

वैरागी फिर हँसने लगे। बोले, 'जैसी तुम्हारी इच्छा। लेकिन आगे हर कष्ट के लिए तुम्हे तैयार रहना चाहिए।'

अगर साधु के पास से अशर्फियाँ बराबर मिलती जाया करे तो कष्ट की गिनती करने वाला मगलदास नही था। वह जानता था कि एकबार कष्ट उठाकर अगर बहुत-सा धन हाथ आ जायेगा तो जन्म-जन्म के सङ्कट उसके दूर हो जायेगे। दुनिया मे सोना ही इज्जत है। सोने के सब है—स्त्री है, भाई है, बन्धु है, सगे-सम्बन्धी है। वह गाँठ मे नहीं है तो कोई भी किसी को नही पूछता है।—यह सोचकर मगलदास ने कह दिया, 'महाराज, आपके साथ रहकर तो शूल भी मेरे लिए फूल बन जायेगे। मुझे इस जगत मे और किसी चीज की इच्छा नहीं है। सन्त-समागम ही मेरे लिए परम सौभाग्य है।'

इतना कहने पर वैरागी उस नगर को छोडने को राजी हो गया। दोनो उस नगर से चल दिये। वहाँ से थोडी दूर चले होगे कि साधु की काया बिगडने लगी। रास्ते मे पानी की एक नहर पडती थी। साधु जी उस नहर के किनारे बैठ गये। उन्होने कहा, 'मगलदास, अब तो मुझसे चला नही जाता है। तुम लौटकर जाना चाहो तो अभी भी जा सकते हो। नही तो मेरे लिए यही कुछ व्यवस्था करनी होगी। मैं शरीर से आगे नही चल सकता।'

मगलदास वैरागी से जरा पीछे रहकर उनके हर एक कदम पर जो अशर्फी बनती थी उठाता चला आ रहा था। इसलिए यह सुनकर भी वह वैरागी को अकेला नही छोड सकता था। उसने बड़ी खुशी से कहा, 'महाराज, यहाँ विश्राम कीजिए। मैं सब व्यवस्था किये देता हूँ।'

यह कहकर मंगलदास वापिस अपने घर लौट आया और वहाँ स्त्री को अपने साथ की अशर्फियाँ सौंप दी। कहा, 'तुम मेरी चिन्ता न करना, जब तक बेवकूफ साधु के पास हूँ, तब तक समझो कि हर दिन के हिसाब से सैकडो रुपये मैं कमा रहा हूँ। लौटूंगा तो खूब धन भरकर लौटूंगा। समझी या नही। यही किसी पास के बड़े नगर मे हवेली चिनवा लूंगा और तुमको भी वही बुलवा लूंगा। तब हम दोनों राजसी ठाठ से रहेंगे!'

लौटकर मगलदास वैरागी के पास पहुँचा तो हाँफ रहा था। उसने कहा, 'महाराज, मैं आस-पास गाँवो मे घूमकर आया हूँ। लोग बडे अश्रद्धालु है। साधुओ की महिमा नही जानते है। कही से कुछ भी सहायता मैं नही पा सका। चलिये, यहाँ से दो कोस पर एक गाँव है, वहाँ तक चले चलिये। वहाँ सब इन्तजाम हो जायेगा।'

वैरागी ने कहा, 'मुझसे अब नही चला जायगा। मैं इस पेड के नीचे ही रह जाऊँगा। तुम अभी भी चाहो तो जा सकते हो।'

मगलदास के मन मे था कि आगे के गाँव तक पहुँचते-पहुँचते जाने कितनी अशर्फियाँ और हो जायें। लेकिन यह वैरागी पेड के नीचे बैठकर आराम से सो गया।

मगलदास तब उठकर गया और गाँव मे पहुँचकर वैरागी की बडी तारीफ की, बात का हुनर तो उसके पास था ही। थोडी देर में गाँव वालो की सहायता से नहर के किनारे एक झोपडी तैयार हो गई और श्रद्धा से भागे हुए गाँव के दो-एक आदमी सेवा के लिए उत्सुक होकर वहाँ रहने लगे।

वैरागी की तबियत संभलती नही दीखी। उनको बार-बार क होती थी और दस्त होते थे और वे कुछ खाते-पीते न थे। मगल-दास ने उस साधु की प्रशसा मे जो कुछ कहा था गाँव वालो ने वैसी कुछ भी महिमा इन साधु मे नही देखी। इसलिए वे एक-एक कर उन्हे छोडकर चल दिये।

असल मे मगलदास किसी को साधु के बहुत निकट नही आने देना चाहता। क्योंकि अगर साधु की असली महिमा का भेद किसी को चल जाय तो इसमे मगलदास को बहुत नुकसान था। इसलिए इस आस मे कि साधु कभी अच्छे होंगे, मंगलदास उनकी सेवा-टहल करने लगा। कै होती तो उसको अपने हाथों से साफ करता। इसी तरह और भी सब सेवायें करता। दिन-पर-दिन हो गये। साधु क्षीण होकर ठठरी की भाँति रह गया। लेकिन मगलदास की आशा नहीं

सूखी और वह साधु की सेवा से विमुख नही हुआ।

देखा गया कि वैरागी कमजोर होकर अब बहुत चिडचिडे हो गये है। जरा-जरा सी बात पर मगलदास को वह बहुत सख्त-सुस्त कहते है। कोई भूल हो जाती है तो बहुत डॉटते-डपटते है। कहते है, अभी तुम सामने से चले जाओ। लेकिन मगलदास सब दुर्वचन नम्रता के साथ स्वीकार करता है। उत्तर कुछ नही देता और सेवा मे कोई त्रुटि नही आने देता।

मगलदासकी ऐसी एक-मन सेवा देखकर गाँव वालो पर इसका बहुत प्रभाव पडा और वे साधु को छोडकर मगलदास की ही श्रद्धा करने लगे। वे उसकी बडी बडाई मानते थे और उसको अपनी श्रद्धा से तरह-तरह का उपहार देते थे।

जब उसकी अपनी बडाई होने लगी तब उसने सोचा कि यह तो नया रास्ता दौलत मिलने का हो रहा है। अब साधु का मैं साथ क्यो पकडे रहूँ। यह सोचकर उसने साधु से अलग एक अपनी कुटिया बना ली और अधिक काल वही रहने लगा। देखते-देखते उसकी प्रशसा आस-पास चारो तरफ फैल गई और लोग उसके दर्शन को आने लगे।

इधर बराबर की झोपडी मे वह वैरागी पडा ही था। अब भी मगलदास रात को आकर उसकी शुश्रूषा किया करता था ताकि ऐसा न हो कि कही वह वैरागी उठकर यहाँ से चल दे। लेकिन अब मगलदास को यह ख्याल रहता था कि कही ये एकदम चगे न हो जावें कि उसके काबू से बाहर ही हो जाये।

होते-होते वैरागी अकेले पड़ गये और मगलदास की कुटिया श्रद्धालु लोगों से भरी रहने लगी।

अकेले पडकर वैरागी की तबियत धीरे-धीरे ठीक होने लगी।

एक दिन बहुत सबेरे कुछ दर्शनार्थी लोग मगलदास के पास आये कि रास्ते मे क्या देखते है कि थोडी-थोडी दूर पर एक-एक अशर्फी पडी है। उनको बड़ा अचम्भा हुआ। उन्होने सोचा कि जरूर इसमे कुछ

मगलदास की महिमा है। इसलिए आकर उन्होंने वे अशर्फियाँ मगलदास के सामने रखी और नमस्कार करके कहा—'महाराज, आपकी ओर आते हुए रास्ते मे ये अशर्फियाँ हमको मिलीं। जरूर आपके दर्शनो के पुण्य का यह प्रताप है। इससे ये आपकी भेंट है।'

मगलदास सुनकर कुछ नही बोला। उसका माथा ठनक गया। उसने जान लिया कि वैरागी यहाँ से कही चला गया है। इसलिए लोगों के चले जाने पर चुपचाप उसने वैरागी को ढूंढना शुरू किया। पर आस-पास की अशर्फियाँ उठ गई थी। इससे उसे कोई सहारा खोजने को नही मिला।

तब अगले दिन सवेरे उसने गाँव वालो से कहा, 'मैं कल मन्त्र का अभ्यास कर रहा था। उसके बाद जो हाथ में भस्म उठाई तो वह सोना बन गया। मालूम होता है वह जो बीमार वैरागी पास मे रहता था रात को उन सोने के सिक्को को चुराकर भाग गया है। मैं तो सोचता था कि तुम लोगों को वे सिक्के बाँट दूँगा। लेकिन वह वैरागी तुम लोगों का हिस्सा लेकर भाग गया है। उसको तलाश करना चाहिए।

यह सुनकर गाँव वाले बड़े उत्साह से उस साधु की खोज करने निकले। आखिर अशर्फियो के निशान से साधु को पा लेने मे कठिनाई नही हुई। वह एक जगह पेड के नीचे जाकर सो गया था। गाँव वाले उसको पकडकर और बाँधकर मगलदास के पास ले आये।

अब तक मगलदास अपनी प्रतिष्ठा के बारे मे निश्चिन्त हो गया था। एकान्त पाकर उसने वैरागी से कहा, 'तुम मुझे बगैर साथ लिए अगर कही जाओगे तो जैसी तुम्हारी दुर्गति होगी, वह तुम जानते ही हो। मैंने कहा था कि मुझे तुम अपनी सेवा से अलग मत करो। अब तुम देखते हो कि अगर तुम मेरी उपेक्षा करते हो तो मेरी महिमा तुमसे कम नहीं है। देखो गाँव वाले मुझको पूजते हैं और तुम्हारी इज्जत उनके मन में कुछ भी नहीं।'

वैरागी ने कहा, 'मैं अब रोगी नहीं हूँ। अपना सब काम कर सकता हूँ। तब तुमको अपने साथ रखने का मुझको क्या अधिकार है? फिर अब तुमको मेरी आवश्यकता भी क्या है। धर्म का अभ्यास तुमको हो ही गया है। मालूम होता है सिद्धि भी तुमको मिल गई है। अब तुम्हारी लोग सेवा करने लगे है तो ठीक भी है। तुम्हे अब दूसरे की सेवा करने की चिन्ता क्यो होनी चाहिए?'

मगलदास ने अपने आसन पर से ही बैठे-बैठे कहा, 'नही वैरागी, मुझे अपनी इस मान प्रतिष्ठा मे कुछ भी रस नही है। ये तो सब जबरदस्ती मुझको देते है। मेरा मन कुछ तुम्हारी प्रीति मे भर गया है। देखो न अपने ऊपर पाप का बोझ लेकर भी तुम्हे मैंने अपने पास पकड बुलाया। अब बोलो, अगर मुझको साथ लेकर चलना चाहते हो तो मैं यहाँ की सब मान-पूजा को छोडकर आज ही तुम्हारे साथ चल सकता हूँ।

वैरागी ने कहा, 'मेरा कोई आश्रम-स्थान नही है। क्या ठिकाना है कि मैं कहाँ भटकता फिरूँ। प्रभु का नाम ही मेरा सब कुछ है और मेरे पुराने पाप मुझे एक क्षण के लिए भी चैन नही लेने देते है। इस-लिए मैं अपनी बे-ओर-छोर की भटकन मे तुम्हे कहाँ साथ रखूं? तुम जानते हो कभी मैं खाना पाता हूँ, कभी नही पाता। मुझे कोई कला नही आती। दीन-दुखियो मे मेरा गला खुलता है। बड़े लोगो मे मेरे मुँह से बोल भी नही निकलता है। देखो खुद ही सोचो कि उन दीन-दुःखी लोगो मे जाकर मेरे से तुम्हे क्या आशा हो सकती है?'

इसी तरह वैरागी अपने सम्बन्ध मे हीनता की बाते बहुत देर तक कहता रहा।

तब मंगल ने कहा, 'वैरागी इसकी चिन्ता न करो। जगत मे सोने की कीमत तुम जानते हो। वह एक मुट्ठी मैं तुम्हे दे दूंगा। उससे फिर तुम्हें कष्ट नहीं होगा।'

वैरागी ने आश्चर्य से कहा, 'तुम्हारे पास सोना है। तब तुम

मेरे साथ क्यो रहते हो ? मेरे साथ तो कुछ भी नही है।'

मगलदास ने कहा, 'मेरे पास सोना है, फिर भी जो मैं तुम्हारे साथ रहने को कहता हूँ, इसका मतलब यही है कि तुम्हारे पास सोने से बडी चीज है।'

वैरागी ने कहा, 'तुम अगर कोई बडी चीज मानते हो और उस बडी चीज को चाहते तो फिर सोने को क्यो अपने पास रखे हुए हो ? मुझको नही मालूम था कि तुम सोने को पास रखकर चलते हो।'

मगलदास को यह सुनकर बडा अचम्भा हुआ। बोला, 'ये सोने की मोहरे गाँव-वाले कल सबेरे मेरे पास डाल गये है। मै इनका क्या करूँ ? दुनिया मे जो कष्ट होता है वह अधिकतर इस सोने के अभाव से होता है। इसलिए कहता हूँ कि मुझको तो कोई कष्ट है नही। गाँव वाले सभी कुछ दे जाते हैं। लेकिन तुम पर मुझको दया आती है। तुम एकदम अनजान आदमी हो। क्या तुम समझते हो कि तुम्हारी किसी महिमा के कारण मैं तुम्हारे साथ रहना चाहता हूँ ? नही, मैं धर्मात्मा आदमी हूँ। मेरा हृदय कोमल है। तुम पर मुझे दया होती है। तुम एकदम निरीह मालूम होते हो। ईश्वर का आदेश है कि गरीब और असहाय पर दया करनी चाहिए। इसी वजह से मैं तुम्हारे साथ रहना चाहता हूँ कि जिससे तुम्हारी बीमारी मे मै तुम्हारे काम आऊँ और मुझे सन्तोष है कि ईश्वर के अनुसार मैं तुम जैसे असहाय प्राणी की मदद करता हूँ।'

बैरागी यह सुनकर मंगलदास का बड़ा कृतज्ञ हुआ।

उसने कहा, मैं सचमुच बडा पापी हूँ। लो तुम जो मेरे साथ हुए तो मैं उसमे अपनी बडाई मानने लगा। मैं तुमसे अपने को मन-ही-मन मे विशेष गिनता था। लेकिन अब तुमने मेरी आँखे खोल दी है। तुम्हारा बडा उपकार मानता हूँ। अब मालूम होता है कि तुम सिर्फ दया-भाव से मेरे साथ थे और यह तुम्हारी मुझ पर कृपा थी। दया की अब भी मै तुमसे, जगत् से और ईश्वर से अपने लिए याचना

करता हूँ। लेकिन मेरा तन इस योग्य नहीं है कि इसकी चिन्ता की जाय। जब तक चलता है, चलता है। एक दिन तो इसको गिर ही जाना है। ईश्वर जब भी वह दिन लाये। इसलिए इसकी मुझे फिक्र नही है। घूमता, भटकता फिर कभी भाग्य हुआ तो मैं आपके दर्शन करने आऊँगा। अभी तो मुझको आगे चलने दीजिए।'

मगलदास ने कहा, 'वैरागी, तुम मेरी धर्मभावना मे बाधा डालने की कोशिश करते हो। मैं ईश्वर की आज्ञा का पालन कर रहा हूँ। तुम्हारी मुझको बिल्कुल चिन्ता नही है! तुम्हारे जैसे बहुतेरे ढोंगी फिरते हैं यह तो ईश्वर की मुझे आज्ञा है कि मै तुम पर दया दिखाऊँ। इसी से मै उस आज्ञा को टाल नही सकता, नही तो तुम्ही सोचो कि मुझे यही भजन प्रार्थना का सब सुभीता है। मैं छोडकर जाने वाला नही हूं। इसीलिए सुनते हो वैरागी, अगर तुम भलमनसाहत से रहना चाहते हो तो बिना मुझसे अनुमति लिए और बिना मुझे साथ लिए कहीं मत जाना! नही तो तुम मेरी शक्ति को जानते हो यहाँ गाँव-वालो को इशारा-भर करने की जरूरत है। तुम्हारा फिर कहीं तक पता नही मिलेगा।'

वैरागी की समझ मे मगलदास की बात बस इतनी ही आई कि मगलदास ईश्वर की प्रार्थना का पालन करना चाहता है और उसमे मुझे बाधक नही बनना चाहिए। यह सोचकर वैरागी वहाँ रहने लग गया और मगलदास की सेवा-सुश्रूषा करने लगा!

तब उस मगलदास ने गाँव के एक जवान लडके को एकान्तमे अपने पास बुलाकर कहा कि 'देखो यह हमारा चेला हो गया है हमारी बड़ी भक्ति-श्रद्धा रखता है। इसलिए हमने उनको वरदान दिया है कि जब यह किसी शुद्ध प्रयोजन से कहीं जायेगा तो इसके हर एक कदम रखने पर एक-एक अशर्फी बन जायगी। देखी तुमने भक्ति की शक्ति! यह तपस्या का प्रताप है। अब तुम एक काम करो। जहाँ कहीं वह जाये, उसके पीछे-पीछे जाया करो अशर्फियाँ उठा लिया करो। कोशिश यह

करना कि उसको या किसी और को पता न चले। बात यह है कि यदि उसको पता चलेगा तो उसमे अहङ्कार का उदय हो सकता है। अहङ्कार से फिर साधना नष्ट हो जाती है। इसलिए शिष्य का भला इसमे ही है कि उसको अपनी सफलता का पता न चले !'

गाँव का वह जवान, जिसका नाम सुमेर था, इस बात को सुनकर बहुत प्रभावित हुआ और बडा खुश हुआ। वह वैरागी के साथ रहता और रास्ते मे जो मोहरे बनती सब उठा लेता। पहले रोज उसने सब मोहरे अपने गुरु जी को दे दी। लेकिन एक बचाकर रख ली। सोचा, 'अपने घर मे माँ को दिखाऊँगा और देखकर वह अचरज मे आँख फाडती रह जायगी तब मुझे कितनी खुशी होगी। वह पूछेगी, कहाँ से आई ?'

मैं कुछ उत्तर न दूँगा।

आखिर सोचेगी कि मैं कही से चुराकर तो नही ले आया ? लेकिन तब भी मैं उत्तर नही दूँगा। वह भला क्या जान सकती है। मुझे साक्षात् देवता-स्वरूप गुरु मिल गये है। तब भला सोने की मोहरो की क्या बात है।

लेकिन धीरे-धीरे सुमेर ने देखा कि गुरु जी पूरा-पूरा हिसाब लेते है कि बताओ चेला कितनी दूर गया था, वह जगह कितने गज है, उसमे कितने कदम होगे, इत्यादि। इस तरह सोने की मोहर का महत्व कुछ बढने लगा। तब उसने कुछ मोहरे अपने पास रखनी शुरू कर दी। उन्हे जाकर चुपके से एक घडे के अन्दर छिपा देता था और किसी से नही कहता था।

एक रोज की बात है कि उसकी स्त्री ने घड़े मे से सामान निकाला, तब मुहरे भी उसमे से निकली ! यह देखकर खुशी के साथ उसे गुस्सा भी हुआ और उसने शाम को पति के आने पर खूब झगड़ा मचाया। कहने लगी कि तुम यों तो पैसे-पैसे के लिए मुझसे झूठ बोलते हो, मेरा हाथ तङ्ग रहता है, कमाई मे कुछ नही मिलता है, इस तरह

के बहाने बनाते हो और यहाँ घर मे मोहरें छिपा रखी है ।

बात अडोस-पडोस वालो ने भी सुनी, अशर्फी का नाम सुनकर लोग बडे उत्सुक हुए और जब सुमेर ने कुछ नही बताया तो चोर समझकर मारने-पीटने लगे । और तब उसने कहा, मैं चोर नही हूँ । साधुजी ने मुझको ये मोहरे दी है ।'

इससे गाँव के लोगो मे मगलदास का प्रताप और चढ-बढ गया । वह बहुत सादे ढङ्ग से रहता था। इतना धनी होकर भी सादगी से रहना कम बात नही है । सच्चे त्यागी पुरुष ही ऐसे रहा करते है । यह सोचकर गाँव वालो की भक्ति सन्त मगलदास मे और गहरी हो गई ।

उधर वह वैरागी जगल से लकडी चुनकर लाता । कण्डे बीनता और उनसे भोजन बनाता और साधु की हर तरह की टहल चाकरी करता ।

लेकिन धीमे-धीमे उसको इस बात का बडा अचरज होता जाता था कि मेरे साथ साधु जी का आदमी क्यो चलता है ? उसने सोचा कि मेरे काम में कुछ त्रुटि रहती होगी । इसीलिए साधु जी दया-भाव के कारण आदमी को मेरे साथ भेजते है ।

लेकिन जब भेद खुल गया तब सुमेर के लिए मौन बने रहने का कारण भी नही रह गया । गुरुजी मे उसकी बराबर श्रद्धा कम होती जा रही थी । इसलिए अपने एक बचपन के साथी चन्दन से उसने सच्ची-सच्ची बात कह दी । तब चन्दन भी उस वैरागी के पीछे सुमेर के साथ रहने लगा, अब वे दोनो जितनी अशर्फियाँ बनती उनमे से नाम के लिए कुछ गुरुजी को दे देते थे, बाकी सब अपने पास रख लेते थे ।

सुमेर और चन्दन दोनों ही उस वैरागी को बुद्धू मानते थे । लेकिन जब कई दिन हो गये और दोनों ने चुपके-चुपके आधी मोहरें अपने पास जमा कर ली, तब उनको उस वैरागी पर बड़ी दया आई । एक दिन जंगल मे रोककर उन्होने उस वैरागी से कहा, 'वैरागी, ये लो

मोहरें। ये तुम्हारी है।'

वैरागी सुनकर सन्न खडा रह गया, जैसे कि उस पर बिजली गिरी हो। उसने कहा, 'बाबा मेरा सोने से क्या काम है?'

चन्दन ने कहा, वैरागी, हम सच कहते है। ये हमारी अशर्फियाँ नही है, तुम्हारी है।'

वैरागी ने कहा, 'बाबा वैरागी से ऐसी हँसी नही करनी चाहिए। सोने से मन पर मैल चढता है।'

चन्दन ने कहा, 'वैरागी, तुम हमे रोज ही तो देखते होगे, हम तुम्हारे पीछे-पीछे चलते है। बताओ भला क्यों? भेद यह है कि तुम जहाँ पैर रखते हो वही एक मोहर बन जाती है। उसी लालच मे हम तुम्हारे पीछे-पीछे चला करते है। हमने इस तरह बहुत-सी मोहरे जमा कर ली है। यह एक तरह हमने चोरी ही की है। लेकिन तुम्हारी दीनता देखकर हमको अब शरम आती है। ये लो, हम सच कहते है, ये तुम्हारी है। इनको रखो और अपनी हालत सुधारो, सँभालो। किसलिए इतनी कडी मेहनत करते हो और दिन-रात उस साधु की सेवा मे रहते हो?

वैरागी सोने की मोहरो की बात सुनकर और उन्हे सामने देख कर हैरत मे रह गया था। उसको कुछ जबाब नही सूझा।

चन्दन ने कहा, 'वैरागी, तू हमारी बात झूठी मानता है। लेकिन हम सच कहने है।'

थोडी देर वैरागी गुम-सुम खडा रहा। लेकिन फिर वही एकदम गिरकर हाथों मे मुँह लेकर रोने लगा।

सुमेर और चन्दन वैरागी की यह हालत देखकर अचकचा गये। उनकी कुछ समझ में नही आया कि क्या करे।

वैरागी ने कुछ देर बाद ऊपर को मुँह उठाकर आसमान मे देखते हुए रोकर प्रार्थना की, 'हे ईश्वर, हे मालिक, अब यह सजा तुम मुझे किस पाप की देते हो? सोने को मेरे तन और मन से कब बिल्कुल

छुडा दोगे ? यह मैं क्या देखता हूँ कि अब भी सोने से मेरा पीछा छूटा नही है। भगवान, क्या तुम चाहते हो कि मै यही जान दे दूँ ? नही तो अब से कभी सोने की बात मेरे साथ लगी हुई मुझे नही सुनाई देनी चाहिए ?'

इस तरह वह कुछ देर प्रार्थना करता रहा। फिर चन्दन और सुमेर के साथ वापिस चल दिया।

चन्दन और सुमेर ने देखा कि अब वैरागी के चलने पर मोहरे नही बनती है, बल्कि एक सचमुच का फूल बन जाता है जो गुलाबी रग का होता है, नन्हे हृदय के आकार का।

मगलदास के डेरे पर पहुँचकर इस बार सुमेर ने एक भी मोहर अपने गुरु को नही दी। कहा, 'अब वैरागी के चलने पर अशर्फी नही बनती।'

मगलदास यह सुनकर नाराज हो गया और दुर्वचन कहने लगा। इस पर चन्दन और सुमेर दोनो ही बिगड गये और वे साधु से सवाल-जबाब करने लगे। सुनकर वैरागी वहाँ आया। उस वक्त मगलदास ने बात का ढग बदलकर कहा, 'वैरागी, ये दोनो लडके तुम्हारी रोज चोरी किया करते थे और इनको रोज समझाता था कि वैरागी की चीज वैरागी को ही देनी चाहिए। लेकिन ये बडे धूर्त है। तुमको अब तक इन्होने नही बतलाया कि तुम्हारी वजह से कितना सोना इन्होने पा लिया है। लाओ रे लडको !, जितनी अर्शाफियाँ तुम्हारे पास है सब यहाँ रखो। नही तो चोर कहलाओगे !' सुमेर तो इस पर लाजबाब-सा रह गया। लेकिन चन्दन ने कहा, 'गुरु जी, अपना भला चाहो तो बदजुबानी मत करो। मैं सुमेर नही हूँ और तुम्हारा गुरुपन भी नही समझता हूँ। इन बेचारे सीधे वैरागी की बदौलत ही तुम चैन कर रहे हो। मैं अब सब समझ गया हूँ, अपनी खैर चाहो तो चुप रहो। नही तो अभी गाँव वालो को बता दूँगा और तुम्हारी वह दुर्गति होगी कि याद रखोगे !'

इस बात के बीच मे वैरागी खडा हुआ ईश्वर से प्रार्थना कर रहा था कि हे भगवान, मुझ पर दया कर मुझे क्षमा कर !

मगलदास उस वक्त तो अपनी फजीहत को पी गया, लेकिन रात को जब अकेला रहा तब उसने वैरागी से कहा कि सब कुकर्म की जड तुम हो ! बोलो, अब तुम्हारा क्या किया जाये ?

वैरागी सचमुच सब दोष अपना ही मान रहा था। उसने कहा कि आप मुझ पर अब तक दया-भाव ही रखते है। अब भी दया करो और मेरी सजा का निर्णय आप ही करे। सचमुच दोष मैं अपना मानता हूँ कि अब तक भी मेरे कारण सिक्का इस जगत मे बनता और बढता रहा।

मगलदास ने कहा, 'अब तक का क्या मतलब ?'

वैरागी, 'जब से मुझे मालूम हुआ है, मैंने भगवान से प्रार्थना की है और मेरा यह अभिशाप प्रभु ने कृपा पूर्वक दूर कर दिया है। अब मुझसे स्वर्ण का सम्बन्ध नही रहेगा।'

वैरागी ने कहा, 'आपको आगे मुझ पर रोष करने के लिए कोई कारण न होगा।'

मगलदास को बडा गुस्सा आ रहा था। उसने हिसाब लगा रखा था कि दो वर्ष के अन्दर वह कम-से-कम आस-पास मे तो सबसे बडा धनी हो ही जायेगा। लेकिन यहाँ तो अभी मेरी सोने की खान खत्म हुई जा रही है। उसने गुस्से मे भरकर कहा कि वैरागी, तुमको हया-शर्म नही है। मैंने कितने दिन तुम्हे साथ रखा। अब आज तुम इस तरह धोखा देना चाहते हो, तुम्हारा क्या इरादा है ! क्या तुम यहाँ से चले जाओगे ? याद रखो, मैं तुम्हें नहीं जाने दूँगा।

वैरागी ने कहा कि आप क्या आज्ञा देना चाहते है कि मुझे क्या करना चाहिए ?'

मगलदास विद्वान पण्डित भी था। उसने कहा, 'प्रार्थना करो कि ईश्वर फिर वैसा ही हर कदम पर तुम्हारे अशर्फी पैदा किया करें।

तुम मुक्ति चाहते हो यह तुम्हारा स्वार्थ है। तुम इतनी जल्द मुक्त हो जाना चाहते हो। देखो, मैं तुम्हे धर्म बताता हूँ। अपने से स्वर्ण पैदा होने दो। उस स्वर्ण से दुनिया का काम निकलता है। दुनिया की रगो मे उससे तेजी आती है। तुमको स्वर्ण मे लगाव नही है, बस इतना काफी है। तुम उससे कुछ लगाव न रखो। लेकिन सच्चा धर्मात्मा दूसरे की आत्मा का ठेका नही लिया करता है। इसलिए अगर तुम सच्चे धार्मिक हो तो यह जिद तुम कभी नही रख सकते कि दूसरे आदमी तुम्हारी ही भावना रखे और सोने को लेकर लाभ न उठावे। तुमको यह जानने की आवश्यकता है कि किस प्रकार सृष्टि मे स्वर्ण तृष्णा पैदा करता है। तृष्णा मे चैतन्य होता है। चैतन्य द्वारा ही ईश्वर की पूजा हो सकती है। जगत मे जो कुछ लहलहाता हुआ दीखता है स्त्री की सेवा, बालक की क्रीडा और बडो का वात्सल्य-वह सब उसी अमृत के सिञ्चन से है। स्वर्ण माता लक्ष्मी का प्रसाद है। बडे कारोबार चल रहे है, सरकार चल रही है, उद्धार चल रहा है, जातियाँ चल रही है, धर्म चल रहा है, जानते हो किस मन्त्र से? लक्ष्मी के स्वर्ण मन्त्र से ही यह सब हो रहा है। देखो वैरागी, समझ से काम लो। तुम्हे कुछ नही करना है। तुम भक्ति मे रहे जाओ। बाकी झझट मैं भुगतता रहूँगा।

मगलदास ने अपनी बात खतम करते हुए कहा, 'सुना तुमने? अब तुम तय कर लो, अगर तुम अपनी बात पर अडे रहे तो वैसा होगा। तुम ईश्वर के पास जाना चाहते हो न? तो अच्छी बात है। मौत के हाथो देकर मैं यम देवता से कह दूँगा कि इसको ईश्वर के पास ले जाओ और मेरा कहा कहोगे तो तुम भक्ति और सुख पाओगे। तुममे कोई कमी न रहेगी और मुझे माला-माल करने के पुण्य के भी तुम भागी होगे।'

वैरागी सब सुनता रहा मन मे कह रहा था, 'हे भगवान, तुम्हीं हो। पापी भी तुम्ही मे होकर है।'

मगलदास ने पूछा, 'बोलो, क्या कहते हो ?

वैरागी मन मे कह रहा था, पाप को अपनी क्षमा मे सहने वाले हे प्रभु, पापी को अपनी दया मे ही रखना। क्योकि वह नही जानता है।

वैरागी को चुप देखकर जोर से मगलदास ने कहा, क्यो वैरागी, नही सुनते ?'

वैरागी अपनी प्रार्थना मे लीन था। वह कह रहा था, 'हे प्रभु, इस पर अपनी अनुकम्पा रखना, क्योकि वह अपनी तृष्णा के कारण अबोध बना हुआ है।'

वैरागी को बराबर चुप देखकर मगलदास को क्रोध चढ आया। उठकर उसने एक जोर से उसे थप्पड दिया और लात घूँसो से भी खूब मारा।

अन्त मे बोला, 'अब तो समझे, ओ वैरागी !' पर वैरागी तो अपने मनमे कह रहा था, 'प्रभु सबमे तुम्ही हो, तुम्ही हो !'

मार के कारण वैरागी को चोट तो आई, पर बहुत नही आई। इसमे दोष वैरागी का नही था। असल मे मगलदास के मन मे समझदारी के कारण कुछ त्रुटि रह गई थी। मगलदास बुद्धिमान था। उसने सोचा सोने का अण्डा देने वाली मुर्गी को मारकर कहानी वाले आदमी ने कुछ नही पाया था। इसलिए वैरागी को मारकर बे-काम खत्म कर दूंगा तो इससे तो मेरा ही काम बिगडेगा। यह मूर्खता मुझे नही करनी चाहिए।

अगले सबेरे गाँव वाले वहाँ आये। आये तो उनका और ही रग-ढग दिखाई दिया। आते ही जो मुँह मे आया उन्होने बकना शुरू किया और झोंपडी की सब चीजे बिखेर डाली। उस समय वही बाबा की गद्दी के नीचे से कितनी ही अशर्फियाँ निकलीं। गाँव वालो ने अशर्फियो पर हाथ डालने से पहले उस साधु की मरम्मत बनाई।

उधर वह वैरागी अलग खड़ा होकर ऊपर आसमान मे निगाह

जमाकर कह रहा था, 'हे भगवान ! हे भगवान !'

वह प्रार्थना कर रहा था, 'अनेकानेक अनर्थों का मूल यह स्वर्ण कहाँ से मुझमे आ गया ! हे भगवान, मुझ को ऐसा कठिन दण्ड तुमने क्यो दिया ?'

मगलदास को आगे बढकर शिक्षा और दण्ड देने के काम मे चन्दन प्रमुख था। चन्दन की सीख मे आकर लोगो ने यह भी तय किया कि जितना सोना उस गुरु के पास मिलेगा वह सब बेचारे वैरागी को सौंप दिया जाना चाहिए। गाँव वाले यह तय करके आये थे। लेकिन जब मगलदास से निपटकर लोग अशर्फियो के ढेर को सन्मान पूर्वक वैरागी को समर्पण करने के विचार से चले तो क्या देखते हैं कि वहाँ तो एक भी अशर्फी नही है, बल्कि गुलाबी फूलो का एक सरोवर-सा लहलहा रहा है। वे गुलाबी फूल हृदय के आकार के है और मानो मुकुलित होने की बाट देख रहे है !

जब गाँव वालो ने यह देखा तो उनको अचरज हुआ और वैरागी मे उन्हे सच्ची भक्ति हो गई।

पर वैरागी ने कहा, 'तुम लोगो ने जिस दोष के लिए उस बेचारे साधु को बाँधकर डाल दिया है उस दोष का तो अब मूल ही नही रह गया। इसलिए तुम्हे चाहिए कि अब जाकर तुम उन्हे खोल दो।'

चन्दन ने कहा, 'वह आदमी चालाक है, ढोंगी है।'

वैरागी ने कहा, 'जिस चीज के लिए हम सब चालाक और ढोंगी बनने को तैयार हो जाते है वह चीज अब यहाँ कहाँ है ? इसलिए वह अब किस वजह से छली या ढोंगी बनेगा। यो तो हम मे से कौन, समय पर ढोंग और चालाकी नही कर जाता है। जाओ, उसको खोल दो।'

वैरागी के कारण अनमने मन से गाँव वाले गये और मगलदास के बन्धन खोल दिये।

मगलदास पर इसका बहुत असर हुआ और वह वैरागी के चरणो

मे गिरकर माफी माँगने लगा ।

फिर गाँव वालो ने मिलकर अपनी श्रद्धा की मेहनत से वहाँ पक्के घाट का तालाब तैयार किया और अनगिनती कमल के फूलो से लाल-लाल वह लाल सरोवर अब भी उस जगह लहरा रहा है । ●

: १८ :

कितनी जमीन

[१]

दो बहनें थी । बडी का कस्बे मे एक सौदागर से विवाह हुआ था । छोटी देहात मे किसान के घर ब्याही थी ।

बडी का अपनी छोटी बहन के यहाँ आना हुआ । निबटकर दोनो जनी बैठी तो बातो का सूत चल पडा । बड़ी अपने शहर के जीवन की तारीफ करने लगी—देखो, कैसे आराम से हम रहते हैं । फैंसी कपडे और ठाठ के सामान ! स्वाद-स्वाद की खाने-पीने की चीजे और फिर तमाशे-थियेटर, बाग-बगीचे ।

छोटी बहन को बात लग गई । अपनी बारी पर उसने सौदागर की जिन्दगी को हेय बताया और किसान का पक्ष लिया । कहा—मैं तो अपनी जिन्दगी का तुम्हारे साथ अदला-बदला कभी न करूँ । हम सीधे-सादे और रूखे से रहते हैं तो क्या, चिन्ता-फिकर से तो छूटे हैं । तुम लोग सजी-बजी रहती हो, तुम्हारे यहाँ आमदनी बहुत है । लेकिन एक रोज वह सब हवा भी हो सकता है, जीजी, कहावत ही है--हानि-लाभ दोई जुडवाँ भाई । अक्सर होता है कि आज जो अमीर है, कल

वही टुकडो को मोहताज है। पर हमारे गाँव के जीवन मे यह जोखिम नही है। किसानी जिन्दगी फूली और चिकनी नही दीखती तो क्या, उमर लम्बी होती है और मेहनत से तन्दुरुस्ती भी बनी रहती है। हम मालदार न कहलायेगे, लेकिन हमारे पास खाने की कमी भी कभी न होगी।

बडी बहन ने ताने से कहा 'बस-बम पेट तो बैल और कुत्ते का भी भरता है। पर वह भी कोई जिन्दगी है ? तुम्हे जीवन के आराम, अदब और आनन्द का क्या पता ? तुम्हारा मर्द जितनी चाहे मेहनत करे, जिस हालत मे तुम जीते हो, उसी हालत मे मरोगे, वही चारों तरफ गोबर, भुस, मिट्टी ! और यही तुम्हारे बच्चो की किस्मत मे बदा है।'

छोटी ने कहा, 'तो इसमे क्या हुआ ? हाँ, हमारा काम चिकना-चुपडा नही है, लेकिन हमे किसी के आगे झुकने की भी जरूरत नही है। शहर मे तुम हजार लालच से घिरी रहती हो आज नही तो कल को क्या खबर है। कल तुम्हारे आदमी को पाप का लोभ-जुआ, शराब और दूसरी बुराइयाँ फँसा सकती है, तब घडी भर मे सब बरबाद हो जायगा। क्या ऐसी बातें अक्सर होती नही हैं ?'

घर का मालिक दीना ओसारे मे पडा औरतो की यह बात सुन रहा था। उसने सोचा कि बात तो खरी है। बचपन से माँ धरती की सेवा में हम इतने लगे रहते हैं कि कोई व्यर्थ की बात हमारे मन मे घर नही कर पाती है। बस, है तो मुश्किल एक है। वह यह कि हमारे पास जमीन काफी नही है। जमीन खूब हो तो मुझे किसी की परवा न रहे, चाहे शैतान ही क्यों न हो।

औरतों में फिर इधर की, उधर की, घर की और परिवार की सब बातचीत हुई। आखिर अलग होकर वे आराम करने लगीं।

लेकिन वही कोने में शैतान दुबका बैठा था। उसने सब कुछ सुना। वह खुश था कि किसान की बीबी ने गाँव की बड़ाई करके

अपने आदमी को डींग पर चढा दिया। देखो न, कहना था कि जमीन खूब हो तो फिर चाहे शैतान भी आ जाय तो परवा नहीं।

शैतान ने मनमे कहा कि अच्छा हजरत, यही फैसला सही। मैं तुमको काफी जमीन दूंगा और देखना है कि उसी से तुम मेरे चगुल मे होते हो कि नही।

[२]

गाँव के पास ही जमीदारी की मालकिन की कोठी थी। कोई तीन सौ एकड उनकी जमीन थी। उनके अपने आसामियो के साथ बडे अच्छे सम्बन्ध रहते आये थे, लेकिन उन्होने एक कारिंदा रक्खा, जो पहल फौज मे रहा था। उसने आकर लोगो पर जुर्माने ठोकने शुरू कर दिये।

दीना का यह हाल था कि वह बहुतेरा करता, पर कभी तो उसका बैल जमीदार की चरी मे पहुंच जाता, कभी गाय बगिया को चरती पाई जाती। और नही तो उसकी रखाई घास मे बछिया-बछडा ही जा मुंह मारते। हर बार दीना को जुर्माना उठाना पड़ता। जुर्माना तो वह देता, पर बे-मन। वह कुन-मुनाता और चिढा हुआ-सा घर पहुँचता और अपनी सारी चिढ घर मे उतारता। पूरे मौसम कारिंदे की वजह से उसे ऐसा त्रास भुगतना पडता। जाडो का पत-झड आने पर वह खुश होता कि चलो, अब जानवरो को अन्दर बन्द रखना पडेगा। ढोर तब बाहर चर सकते नही थे और उन्हे घर मे रखकर खिलाना पडता था। पर चलो, दीना को जुर्माने की चिन्ता से तो मुक्ति मिल जाती थी।

अगले जाडो मे गाँव मे खबर हुई कि मालकिन अपनी जमीन बेच रही है और मुन्शी इकरामअली से सौदे की बातचीत चल रही है। किसान सुनकर चौकन्ने हुए। उन्होने सोचा कि मुन्शी जी की जमीन होगी तो वह जमीदार के कारिन्दे से भी ज्यादा सख्ती करेंगे और जुर्माने बढावेंगे और हमारी तो गुजर-बसर इसी जमीन पर है।

यह सोचकर किसान मालकिन के पास गये गये । कहा कि मुन्शी जी को जमीन न दीजिए । हम उससे बढती कीमत पर लेने को तैयार है । मालकिन राजी हो गई । तब किसानो ने कोशिश की कि मिल-कर गॉव पचायत की तरफ से वह सब जमीन ली जा सके ताकि वह सभी की बनी रहे । दो बार इस पर विचार करने को पचायत जुडी, पर फैसला न हुआ । असल मे शैतान की सब करतूत थी । उसने उनके बीच फूट डाल दी थी । बस, तब वे मिलकर किसी एक मत पर आ नही सके । तय हुआ कि अलग-अलग करके ही वह जमीन ले ली जाय हर कोई अपने वित्त के हिसाब से ले । मालकिन पहले की तरह इस बात पर भी राजी हो गई ।

इतने मे दीना को मालूम हुआ कि एक पडौसी इकट्ठी पचास एकड जमीन ले रहा है और जमीदारनी राजी हो गई है कि आधा रुपया अभी नकद ले ले बाकी साल भर बाद चुकता हो जायगा ।

दीना ने अपनी स्त्री से कहा कि और जने खरीद रहे है । हमे बीस या इतने एकड जमीन लेनी चाहिए । जीना वैसे भार हो रहा है और वह कारिंदा जुर्माने पर जुर्माने करके हमे बरबाद कर देगा । उन दोनो ने मिलकर विचार किया कि किस तरकीब से जमीन खरीदी जाय ।

सौ कलदार तो उनके पास बचे हुए रक्खे थे । एक उन्होंने उमर पर आया अपना बछडा बेच डाला, कुछ माल बन्धक रक्खा । अपने बडे बेटे को मजदूरी पर चढ़ाकर उसकी नौकरी के मद्दे कुछ रुपया पेशगी ले लिया । बाकी बचा अपनी स्त्री के भाई से उधार ले लिया । इस तरह कोई आधी रकम उन्होने इकट्ठी कर ली ।

इतना करके दीना ने एक चालीस एकड का जमीन का टुकडा पसन्द किया जिसमें कुछ हिस्से मे दरख्त भी खडे थे । मालकिन के पास उनका सौदा करने पहुँचा । सौदा पट गया और वहीं-के-वहीं नकद उसने साई दे दी, फिर कस्बे मे जाकर लिखा-पढ़ी पक्की कर ली ।

अब दीना के पास अपनी निजी जमीन थी। उसने बीज खरीदा और इसी अपनी जमीन पर बोया, इस तरह वह अब खुद जमींदार हो गया। अपनी जमीन जोतता और बोता। अपनी जमीन पर चारा उगाता, फल के पेड लगाता। ईंधन भी वही हो जाता था और उनके ढोरो को चराई के लिए बाहर नही जाना पडता था। अब वह अपने खेतो की तरफ जाता, या लहराती फसल को निहारता, या हरी घास की चरागाहो पर नजर फैलाता तो उसका मन हर्ष से भर जाता था। यह बिछी घास, उगते पौधे और फलते फूल ऐसे मालूम होते थे कि और सबसे बढकर। पहले जब वह वहाँ से गुजरता था, तो यह जमीन बिलकुल ऐसी मालूम होती थी जैसी और जमीन। लेकिन अब बात ही दूसरी हो गई थी।

[३]

इस तरह दीना काफी खुशहाल था। उसके सन्तोष मे कोई कमी न रही, अगर बस पडोसियो की तरफ से पूरा चैन मिल सकता। कभी-कभी उसके खेतो पर पडोसियो के मवेशी आ चरते। दीना ने बहुत विनय के साथ समझाया, लेकिन कुछ फर्क नही हुआ। उसके बाद, और तो और, घोसी-छोकरे गाँव की गायो को दिन दहाडे उनकी जमीन में छोड देने लगे। रात को बैल खेतो का नुकसान करते। दीना ने उनको बार-बार निकलवाया और बार-बार उसने उनके मालिको को माफ किया। एक अर्से तक वह धीरज रक्खे रहा और किसी के खिलाफ कार्रवाही नही की। लेकिन कब तक? आखिर उसका धीरज टूट गया और उसने अदालत मे दरख्वास्त दी। मन में जानता तो था कि मुसीबत की वजह असली यह है कि और लोगो के पास जमीन की कमी है, जान-बूझ कर दीना को सताने की मशा किसी की नही है। लेकिन उसने सोचा कि इस तरह मैं नरमी दिखाता जाऊँगा तो वे लोग शह पाते जायेंगे और मेरे पास जितना है सब बरबाद कर देंगे। नही, उनको एक सबक सिखाना ही चाहिए।

सो उसने ठान ली। एक सबक दिया, दूसरा दिया। नतीजा कि दो-तीन किसानों पर अदालत से जुर्माना हो गया! इस पर तो पास पडौस के लोग दीना से कीना रखने लगे। अब आप कभी-कभी जान बूझकर भी तङ्ग करने के लिए अपने मवेशी उसके खेतो मे छोड देते। एक आदमी गया और उसे जरूरत अगर घर मे ईंधन की थी तो उसने रात मे जाकर सात पूरे शीशम के दरख्त काट गिराये। दीना ने सबेरे घूमते हुए देखा कि पेड कटे हुए है। वे धरती से सटे है और उनकी जगह खड़े ठूँठ मानो दीना को चिढा रहे है। देखकर उसको तैश आ गया।

उसने सोचा कि अगर दुष्ट ने एक यहाँ का तो दूसरा दूर का पेड काटा होता तो भी गनीमत थी। लेकिन कम्बख्त ने आस-पास के सब पेड काटकर बगिया को बीरान कर दिया। पता लगे तो खबर लिए बिना न छोड़ूँ। उसने जानने के लिए सिर खुजलाया कि यह करतूत किसकी हो सकती है। आखिर तय किया कि हो-न-हो यह धुन्नू होगा और कोई ऐसा नहीं कर सकता। यह सोच धुन्नू की तरफ गया कि शायद कुछ सूत पकडाई मिले, लेकिन वहाँ कुछ चोरी का सबूत मिला नहीं और आपस मे कहा-सुनी और तेजा-तेजी के सिवा कुछ नतीजा न निकला। तो भी उसके मनमे पक्का हो गया कि धुन्नू ने ही यह किया है और जाकर रपट लिखा दी। धुन्नू की पेशी हुई, मामला चला। एक अदालत से दूसरी अदालत हुई। आखिर मे धुन्नू बरी हो गया, क्योंकि कोई सबूत और गवाह ही नही थे। दीना इस बात पर और भी झल्ला उठा और अपना गुस्सा मैजिस्ट्रेट पर उतारने लगा।

इस तरह दीना का अपने पडोसियों और अफसरो से मनमुटाव होने लगा, यहाँ तक कि उसके घर मे आग लगाने की बाते सुनी जाने लगी। अगर्चे दीना के पास अब जमीन ज्यादा थी और जमींदारो में गिनती थी, पर गाँव मे और पचो मे पहला-सा उसका मान न रह गया था।

इसी बीच अफवाह उड़ी कि कुछ लोग गाँव छोड-छोडकर कहीं जा रहे है।

दीना ने सोचा कि मुझे तो अपनी जमीन छोडने की जरूरत है नही। लेकिन और कुछ लोग अगर गाँव छोडेगे तो चलो, गाँव मे भीड ही कम होगी। मैं उनकी जमीन खुद ले लूँगा। तब ज्यादा ठीक रहेगा। अब तो कुछ तगी मालूम होती है।

एक दिन दीना घर के औसारे मे बैठा हुआ था कि एक प्रदेशी-सा किसान उधर से गुजरता हुआ उसके घर उतरा। वह वहाँ रात भर ठहरा और खाना भी वही खाया। दीना ने उससे बातचीत की कि भाई, कहाँ से आ रहे हो? उसने कहा कि दरिया सतलज के पास से आ रहा हूँ। वहाँ बहुत काम है। फिर एक मे से दूसरी बात निकली और आदमी ने बताया कि उस तरफ नई बस्ती बस रही है। उसके अपने गाँव से कई और लोग वहाँ पहुँचे हैं। वे सोसायटी मे शामिल हो गये है और हरेक को बीस एकड जमीन मुफ्त मिली। जमीन ऐसी उम्दा है कि उस पर गेहूँ की पहली फसल जो हुई तो आदमी से ऊँची उसकी बाले गईं और इतनी घनी कि दरात के एक काट मे एक पूला बन जाय। एक आदमी के पास खाने को दाने न थे। खाली हाथ वहाँ पहुँचा। अब उसके पास दो गाये है, छः बैल और भरा खलिहान अलग।

दीना के मन मे भी यह अभिलाषा हुई। उसने सोचा कि मैं यहाँ तग सकरी-सी जगह मे पड़ा क्या कर रहा हूँ, जबकि दूसरी जगह मौका खुला पडा है। यहाँ की जमीन, घर-बार बेच-बाच कर नकदी बना वही क्यो न पहुँचूँ और नये सिरे से शुरू करके देखूँ। यहाँ लोगो की गिचपिच हुई जाती है। उससे दिक्कत होती है और तरक्की रुकती है, लेकिन पहिले खुद जाकर मालूम कर आना चाहिए कि क्या बात है। सो बरसात के बाद तैयारी करके वह चल दिया। पहले रेल मे गया, फिर सैकड़ों मील बैलगाड़ी पर या पैदल सफर करता हुआ

सतलज पार वाली जगह पर पहुँचा। वहाँ देखा कि जो उस आदमी ने कहा था, सब सच है। सबके पास जमीन है। हरेक को सरकार की तरफ से बीस-बीस एकड जमीन मिली हुई है, या जो चाहे खरीद सकता है और खूबी यह कि कौडियो के मोल जितनी चाहे जमीन और भी ले लो।

जब जरूरी बाते मालूम करके दीना जाडो से पहले-पहल घर आ गया। आकर देश छोडने की बाते सोचने लगा। नफे के साथ उसने सब जमीन बेच डाली। घर मकान मवेशी-डगर सबकी नकदी बना ली और पचायत से इस्तीफा दे दिया और सब कुनबे को साथ ले सतलज पार के लिए रवाना हो गया।

[४]

दीना परिवार के साथ उस जगह पहुँच गया। जाते ही एक बडे गाँव की पचायत मे शामिल होने की अर्जी दी। पचो की उसने खूब खातिर की और दावते दी। जमीन का पट्टा उसे सहज मिल गया। मिली-जुली जमीन मे से उसके और उसके बाल-बच्चो के इस्तेमाल के लिए पाच हिस्से यानी सौ एकड जमीन उसको दे दी गई। वह सब इकट्ठी नही थी, टुकडे कई जगह थे। अलावा इसके पचायती चरागाह भी उसके लिए खुला कर दिया गया। दीना ने जरूरी इमारते अपने लिए खडी की और मवेशी खरीद लिए। शामलात जमीन मे से ही अब उसको इतना मिल गया था कि पहले से तिगुनी और जमीन उपजाऊ थी। वह पहले से कई गुना खुशहाल हो गया। उसके पास चराई के लिए खुला मैदान-का-मैदान पडा था और जितने चाहे वह ढोर रख सकता था।

पहले तो वहाँ जमने और मकान-वकान बनवाने का उसे रस रहा। वह अपने से खुश था और उसे गर्व मालूम होता था। पर जब वह इस खुशहाली का आदी हो गया तो उसे लगने लगा कि यहाँ भी जमीन काफी नही है, और होती तो अच्छा था। पहले साल उसने

गेहूँ बुवाया और जमीन ने अच्छी फसल दी। वह फिर गेहूँ बोने जाना चाहता था, पर उसके लिए और पडता जमीन काफी न थी। जो एक बार आ चुकती थी वह उस तरफ एक साथ दोबारा गेहूँ नही देती थी। एक या दो साल उससे गेहूँ ले सकते थे, फिर जरूरी होता था कि धरती को आराम दिया जाय। बहुत लोग ऐसी जमीन चाहने वाले थे, लेकिन सबके लिए आती कहाँ से? इससे बदाबदी और खीचातानी होती थी। जो सम्पन्न थे, वे गेहूँ उगाने के लिए जमीन चाहते थे। जो गरीब थे, वे अपनी जमीन से जैसे-तैसे पैसा वसूल करना चाहते थे, ताकि टेक्स वगैरह अदा कर सके। दीना और गेहूँ बोना चाहता था। इसलिए एक साल के लिए किराये पर उसने और जमीन ले ली। खूब गेहूँ बोया और फसल भी खूब हुई। लेकिन जमीन गाँव से दूर पडती थी और गल्ला मीलो दूर से गाडी मे भर-भर कर लाना होता था। कुछ दिनो बाद दीना ने देखा कि कुछ बडे बडे लोग अलग फार्म डालकर रहते है और वे खूब पैसा कमा रहे है। उसने सोचा कि अगर मैं इकट्ठी कायमी जमीन ले लूँ और वही पर बसकर रहूँ तो बात दूसरी हो जाय।

इस तरह इकट्ठी और कायमी जमीन खरीदने का सवाल बार-बार उसके मन मे उठने लगा।

तीन साल इस तरह निकले। जमीन किराये पर लेना और गेहूँ बोता। मौसम ठीक गये, काश्त अच्छी हुई और दीना के पास माल जमा होने लगा। वह इसी तरह सन्तोष से बढता जा सकता था, लेकिन हर साल और लोगों से जमीन किराये पर लेने और उसके लिए कोशिश और सिरदर्दी करने के काम से वह थक गया था। जहाँ जमीन अच्छी होती, वहाँ लेने वाले दौड़ पडते। इससे बहुत चौकस-चौकन्ना और होशियार न रहा जाता तो जमीन मिलना असम्भव था। यह परेशानी की बात थी, तिस पर तीसरे साल ऐसा हुआ कि दीना ने एक महाजनके साझे मे कुछ काश्तकारो से एक जमीन किराये पर ली।

जमीन जोत गाडकर तैयार हो चुकी थी कि कुछ आपस मे तनातनी हो गई और किसान लोग झगडा लेकर अदालत पहुँचे। अदालत मे मामला बिगड गया और की-कराई मेहनत बेकार गई।

दीना ने सोचा कि अगर जमीन मेरी कायमी मिल्कियत की होती तो मैं आजाद होता और काहे को यह पचडा बनता और बखेडा बढता।

उस दिन से वह जमीन के लिए निगाह रखने लगा। आखिर एक किसान मिला जिसने एक हजार एकड जमीन खरीदी थी, लेकिन पीछे उसकी हालत सँभली न रही। अब मुसीबत मे पडकर वह उसे सस्ती देने को तैयार था। दीना ने बात उससे चलाई और सौदा करना शुरू किया। आदमी मुसीबत मे था इससे दीना भाव-दर मे कसा-कसी कर सका। आखिर कीमत एक हजार रुपये तय पाई। कुछ नकद दे दिया जाय, बाकी फिर। सौदा पक्का हो गया था कि एक सौदागर अपने घोडे के दाने-पानी के लिए उसके घर के आगे ठहरा। उससे दीना की बातचीत जो हुई तो सौदागर ने कहा कि मैं नर्मदा नदी के उस पार से चला आ रहा हूँ। वहाँ १५०० एकड उम्दा जमीन कुल पाच सौ रुपये मे मैंने खरीदी थी। सुन कर दीना ने उससे फिर और सवाल पूछे। सौदागर ने कहा—

'बात यह है अफसर-चौधरी से मेल-मुलाकात करने का हुनर चाहिए। सौ से बढती रुपये तो मैंने रेशमी कपडे और गलीचे देने मे खर्च किये होगे। फिर शराब, फल-मेवो की डालियाँ, चाय-सेट वगैरह के उपहार अलग। नतीजा यह कि फी एकड मुझे जमीन आनो के भाव पड गई।' कहकर सौदागर ने अपने दस्तावेज सब दीना के सामने कर दिये।

फिर कहा 'जमीन ऐन नदी के किनारे है और सारे के सारा किला इकट्ठा है। उपजाऊ इतना कि क्या पूछो।'

दीना ने इस पर उत्सुकता-पूर्वक सौदागर से सवाल पर सवाल किये। उसने बताया—

'वहाँ इतनी जमीन है, इतनी, कि तुम महीनो चलो तो पूरी न हो। वहाँ के लोग ऐसे सीधे है जैसे भेड और जमीन समझो मुफ्त के भाव ले सकते हो।'

दीना ने सोचा, यह ठीक रहेगा। भला अब मैं कुछ हजार एकड के लिए हजार रुपये क्यो फँसाऊँ? अगर वहाँ जाकर इतना रुपया जमीन मे लगाऊं तो यहाँ से कई गुनी ज्यादा जमीन मुझे पड जायगी।

[५]

दीना ने पूछताछ की कि उस जगह कैसे जाया जाये। सौदागर ने सब बतला दिया। वह चला गया तो दीना ने भी अपनी तैयारी शुरू की। बीबी को कहा कि घर देखना-भालना और खुद एक आदमी साथ ले यात्रा को निकल पडा। रास्ते मे एक शहर मे ठहरकर, वहाँ से चाय के डिब्बे और शराब और इसी तरह और उपहार की चीजे जो सौदागर ने बताई थी, ले ली। फिर दोनो बढते गये, बढते गये। चलते-चलते आखिर सातवे रोज वहाँ पहुँचे जहाँ से कोल लोगो की बस्ती शुरू होती थी। देखा तो वहाँ सौदागर ने बताई वही बात थी। दरिया के पास जमीन-ही-जमीन थी। सब खाली। ये लोग उससे काम न लेते थे। कपडे या सिरकी के तम्बू मे रहते शिकार करते, मवेशी पालते और ऐसे ही मौज करते थे। न रोटी बनाना जानते थे, न नाज उगाना सीखे थे। दूध का छाछ-मट्ठा बनाते, पनीर बनाते, और उसी की एक तरह की शराब भी तैयार कर लेते थे, ये सब काम औरते करती। मर्द खाने-पीने और फुर्सत के वक्त बैन की बसरी बजाने मे रहते। वे लोग मजबूत और स्वस्थ थे और काम-धाम के नाम बिना कुछ किये मगन रहते थे। अपने से बाहर उन्हे कुछ पता न था। पढना-लिखना सीखे नही थे और हिन्दी तक न जानते थे। पर थे भले सीधे स्वभाव के। दीना को देखते ही वे अपने तम्बुओ से निकल आये और उसके चारो तरफ जमघट लगाकर खडे हो गये। उनमे से एक दुभाषिये की मार्फत दीना ने बतलाया कि मैं जमीन की

खातिर आया हूँ। वे लोग बड़े खुश मालूम हुए। बडी आवभगत के साथ वे उसे अपने अच्छे-से-अच्छे डेरे मे ले गये। वहाँ कालीन पर बिछे गद्दे पर बिठाया और खुद नीचे चारो ओर घिरकर बैठ गये। उसे पीने को चाय दी और दारू भी। उसकी मेहमानी मे बढ-चढकर दावत हुई। दीना ने भी गाडी मे से अपने पास से भेट की चीजे निकाली और सबको थोडी-थोडी चाय बाँटी। कोल लोग बडे खुश थे। उन्होने आपस मे इस अजनबी की बाबत खूब चर्चा की। फिर दुभाषिये से कहा कि मेहमान को सब समझा दो।

दुभाषिये ने कहा कि ये लोग कहना चाहते है कि हम आपके आने से खुश है। हमारे यहाँ का कायदा है कि मेहमान की खातिर जो हमसे बन सके करे। आपकी कृपा के हम कृतज्ञ है। बतलाइये कि हमारे पास कौन-सी चीज है जो आपको सबसे पसन्द है, ताकि हम उसी से आपकी खातिर कर सके।

दीना ने जवाब दिया कि जिस चीज को देखकर मैं बहुत खुश हूँ, वह आपकी जमीन है। हमारे यहाँ जमीन की कमी है और वह उपजाऊ भी इतनी नही होती, लेकिन यहाँ उसका कोई पार नही है और वह जमीन उपजाऊ भी खूब है। मैंने तो अपनी आँखो से यहाँ जैसी धरती दूसरी देखी नही।

दुभाषिये ने दीना की बात अपने लोगो को समझा दी। कुछ देर वे आपस मे सलाह करते रहे। दीना समझ नही सका कि वे क्या कह रहे है। लेकिन उसने देखा वे बहुत खुश मालूम होते है, बडे हँस रहे है और जोर-जोर से बोल रहे है। अनन्तर वे चुप हुए और दीना की तरफ देखने लगे।

फिर आपस मे बात करने लगे। मालूम पडा कि जैसे उनमे कुछ दुविधा है। दीना ने पूछा कि उन लोगो मे अब किस बात की अटक है। दुभाषिये ने बताया कि उनमे कुछ की राय है कि सरदार से जमीन देने के बारे मे और पूछ लेना चाहिए, गैरहाजिरी मे कुछ कर

डालना ठीक नही है। दूसरो का ख्याल है कि इस बात मे सरदार के लौटने की राह देखने की जरूरत नही है, जरामी तो बात है।

[६]

यह विवाद चल रहा था कि एक आदमी बडी सी बालदार टोपी पहने वहाँ आ पहुचा। सब चुप होकर उसके सन्मान मे खडे हो गये। दुभाषिय ने कहा कि यही हमारे सरदार है।

दीना ने फौरन अपने सामान मे से एक बढिया लबादा निकाला और चाय का एक बडा डिब्बा और ये चीजे सरदार को भेट की। सरदार ने भेट स्वीकार की और अपने आसन पर आ बैठा। बैठते ही कोल लोगो ने उससे कुछ कहना शुरू किया। सरदार कुछ देर सुनता रहा। फिर उसने उन्हे चुप रहने का इशारा किया। उसके बाद दीना की तरफ मुखातिब होकर हिन्दुस्तानी मे कहा—

'इन भाइयो ने जो कहा, जो ठीक है जमीन चाहे चुन लो। हमारे यहाँ उसका घाटा नही है।'

दीना ने सोचा कि मै मन चाहे जितनी जमीन कैसे ले सकता हूँ। पक्का करने के लिए दस्तावेज वगैरह भी तो चाहिए। नही तो जैसे आज इन्होंने कह दिया कि यह तुम्हारी है, पीछे वैसे ले भी सकते है।

प्रकट मे उसने कहा, 'आपकी दया के लिए मैं कृतज्ञ हूँ। आपके पास बहुत धरती है और मुझे थोडी-सी चाहिए। लेकिन मुझे भरोसा होना चाहिए कि मेरा अपना छोटा टुकडा कौन-सा है और यह कि वह मेरा ही है। क्या ऐसा नही हो सकता कि जमीन को नाप लिया जाय और टुकडा फिर मेरे हवाले कर दिया जाय ? मरना-जीना ईश्वर के हाथ है और ससार मे यही चक्कर चलना है। आप दयावान लोग हो तो मुझे यह देते है, पर हो सकता है कि पीछे आपकी औलाद उसी को वापिस ले लेना चाहे। तब—'

सरदार ने कहा, 'तुम्हारी बात ठीक है ? जमीन तुम्हारे हवाले

करदी जायगी।'

दीना ने कहा, 'सुना है, यहाँ एक सौदागर आया था उसको आपने जमीन दी थी और उस बावत कागज पक्का कर दिया था। वैसे ही मै चाहता हूँ कि कागज पक्का हो जाय।'

सरदार समझ गया।

बोला, 'हाँ, जरूर। यह तो आसानी से हो सकता है। हमारे यहाँ एक मुन्शी है, कस्बे मे चलकर लिखा-पढी पक्की कर ली जायगी और रजिस्ट्री हो जावेगी।'

दीना ने पूछा, 'कीमत की दर क्या होगी ?'

'हमारी दर तो एक ही है। एक दिन के एक हजार रुपये।'

दीना समझा नही। बोला, 'दिन ! दिन का हिसाब यह कैसा है। बताइए कितने एकड ?'

सरदार ने कहा, 'यह सब गिनना-गिनाना हमसे नही होता। हम तो दिन के हिसाब से बेचते है। जितनी जमीन एक दिन मे पैदल चलकर तुम नाप डालो, वही तुम्हारी। और कीमत है दिन भर की एक हजार।

दीना अचरज मे पड गया। कहा, 'एक दिन मे तो वहुत सारी जमीन को घेरा जा सकता है।'

सरदार हँसा। कहा, 'हाँ' क्यो नही। बस, वह सब तुम्हारी। लेकिन एक शर्त है। अगर तुम उसी दिन उसी जगह न आ गये, जहाँ से चले थे तो कीमत जब्त समझी जायगी।'

'लेकिन मुझे पता कैसे चलेगा कि मै इस जगह से चला था।'

'क्यों, हम सब साथ चलेंगे और जहाँ तुम ठहरने को कहोगे ठहरे रहेंगे। उस जगह से शुरू करना और वही लौट आना। साथ फावड़ा ले लेना। जहाँ जरूरी समझा निशान लगा दिया। हर मोड पर एक गड्ढा किया और उस पर घास को जरा ऊँचा चिन दिया। पीछे फिर हम लोग चलेंगे। और हल से इस निशान से उस निशान तक हदबन्दी

खीच देगे। अब दिन भर मे जितना चाहो बडे-से-बडा चक्कर तुम लगा सकते हो। पर सूरज छिपने से पहले जहां से चले थे वहाँ आ प चना। जितनी जमीन तुम इस तरह नाप लोगे वह तुम्हारी हो जायगी।

दीना खुश हुआ। तय हुआ कि अगले सवेरे ही चलना शुरू कर दिया जायगा। फिर कुछ गपशप हुई, खाना-पीना हुआ। ऐसे ही करते रात हो गई। दीना के लिए उन्होने खूब आराम का परो का बिस्तर लगा दिया और वे लोग रात भर के लिए विदा हो गये। कह गये कि पौ फटने से पहले ही वे आ जायेंगे ताकि सूरज निकलने से पहले-पहले मुकाम पर पहुँच जाया जाय।

[७]

दीना अपने परो के बिस्तरे पर लेट रहा, पर उसे नीद न आई। रह-रहकर यह जमीन के बारे मे सोचने लगता था—

'चलकर मैं कितनी जमीन नाप डालूंगा, कुछ ठिकाना है। एक दिन मैं पैंतीस मील तो आसानी से कर ही लूंगा। दिन आजकल लम्बे होते है। और पैंतीस मील!—कितनी जमीन उसमे आ जायेगी। उसमे से घटिया वाली तो बेच दूंगा या किराये पर उठा दूंगा। लेकिन जो चुनी हुई उम्दा होगी वहाँ अपना फार्म बनाऊँगा। दो दर्जन तो बैल फिलहाल काफी होगे। दो आदमी भी रखने होंगे। कोई डेढ़ सौ एकड मे तो काश्त करूंगा। बाकी चराई के लिए।'

दीना रात भर पडा कुलाबे मिलाता रहा। गई रात कही थोडी नीद आई। आँख झपी होगी कि उसे एक सपना दिखाई दिया वह उसी डेरे मे है""कि किसी की बाहर से खिलखिलाकर हँसने की आवाज उसके कानों मे आई। अचरज हुआ कि यह कौन हो सकता है? उठकर बाहर आकर देखा कि कोल लोगो का वह सरदार ही बाहर बैठा ठट्ठा दे-देकर हँस रहा है। हँसी के मारे अपना पेट पकड लेता है। पास जाकर दीना ने पूछा, 'आप ऐसे हंस क्यो रहे?'

लेकिन अभी पूछ पाया नही था कि देखता क्या है कि वहाँ सरदार तो नही, बल्कि वह सौदागर बैठा है जो अभी कुछ दिन पहले उसे अपने देश मे मिला था और जिसने इस जमीन की बात बताई थी। तब दीना उससे पूछने को हुआ कि यहाँ तुम कैसे हो और कब आये। लेकिन देखा तो वह सौदागर भी नही, बल्कि वह पुराना किसान है जिसने मुद्दत हुई तब सतलज पार की जमीन का पता दिया था। लेकिन फिर जो देखता है तो वह किसान भी नही है, बल्कि खुद शैतान है. जिसके खुर है और सींग है। वही वहाँ बैठा ठट्ठा मारकर हँस रहा है। सामने उसके एक आदमी पडा हुआ है—नगे पैर, बदन पर बस एक कुरता धोती। जमीन पर वह आदमी औंधे मुँह बेहाल पडा है। दीना ने सपने मे ही ध्यान से देखा कि ऐसा पडा हुआ आदमी वह कौन है और कैसा है? देखता क्या है कि वह आदमी दूसरा कोई नही, खुद दीना ही है और उसकी जान निकल चुकी है। यह देख मारे डर के वह घबरा गया। इतने मे उसकी आँख खुल गई।

उठकर सोचा कि सपने मे आदमी जाने क्या-क्या वाहियात बाते देख जाता है। अह यह सोचकर मुँह मोड दरवाजे के बाहर झाँककर जो देखा तो सवेरा होने वाला था। सोचा, समय हो गया। उन्हें अब जगा देना चाहिए। चलने मे देर ठीक नही।

वह खडा हो गया और गाडी मे सोते हुए अपने आदमी को जगाया। कहा कि गाडी तैयार करो। खुद कोल लोगो को बुलाने चल दिया।

जाकर कहा, 'सबेरा हो गया। जमीन नापने अब चल पडना चाहिए!' कोल लोग सब उठे और इकट्ठे हुए। सरदार भी आ गये। चलने से पहले उन्होने चाय की तैयारी की और दीना को चाय के लिए पूछा। लेकिन चाय मे देर होने का ख्यालकर उसने कहा, 'अगर जाना है तो हमको चल देना चाहिए। वक्त बहुत हो गया।'

कोल तैयार हुए और सब चल पड़े। कुछ घोडे पर, कुछ गाडी मे। दीना नौकर के साथ अपनी छोटी बहली मे सवार था। फावडा उसने साथ रख लिया था। खुले मैदान मे जब वे पहुँचे, तडका फूट ही रहा था। पास एक ऊँची टेकडी थी, पार खुला बिछा मैदान। टेकडी पर पहुँचकर गाडी-घोडो से सब उतर आये और एक जगह जमा हुए। सरदार ने फिर आगे जाने कितनी दूर तक फैले मैदान की तरफ हाथ उठाकर दीना से कहा कि देखते हो? यह सब, आँख जाती है वहाँ तक, हम लोगो की जमीन है। उसमे जो तुम चाहो ले लो।

दीना की आँख चमक उठी। धरती एक दम अछूती थी। बस हथेली की तरह हमवार और मुलायम। काली ऐसी कि बिनौना। और जहाँ कही जरा निचान था वहाँ छाती-छाती जितनी तरह-तरह की हरियाली छाई थी।

सरदार ने अपने सिर की रुयेदार टोपी उतारी और धरती पर रख दी। कहा, 'यह निशान रहा। यहाँ से चलो और यही आ जाओ। जितनी जमीन चल लोगे वही तुम्हारी हो जायेगी।'

दीना ने भी रुपये निकाले और टोपी पर गिनकर रख दिये। फिर उसने पहना हुआ अपना कोट उतार डाला, धोती को कस लिया। अँगोछे मे रोटी रक्खी, आस्तीने चढाई, पानी का बंदोबस्त किया, आदमी से फावडा लिया और चलने को तैयार हो गया। कुछ क्षण सोचता रहा कि किस तरफ को चलना बेहतर होगा। सभी तरफ का लालच होता था।

उसने तय किया कि आगे देखा जायेगा, पहले तो सामने सूरज की तरफ ही चला चलूँ। एक बार पूरब की ओर मुँह करके खड़ा हो गया, अँगड़ाई लेकर बदन की सुस्ती हटाई और धरती के किनारे सूरज के मुँह चमकने का इन्तजार करने लगा।

सोचने लगा मुझे वक्त नहीं खोना चाहिए और ठण्ड-ठण्ड मे

रास्ता अच्छा पार हो सकता है। सूरज की पहली किरण का उनकी ओर आना था कि दीना कन्धे पर फावडा सँभाल, खुले मैदान मे कदम बढाकर चल दिया।

शुरू मे वह धीमे चला, न तेज। हजार-एक गज चलने पर वह ठहरा। वहाँ एक गड्ढा किया और घास ऊँची चिन दी कि आसानी से दीख सके। फिर आगे बढा। अब उसके बदन मे फुर्ती आ गई। उसने चाल तेज कर दी। कुछ देर बाद दूसरा गड्ढा खोदा।

अब पीछे मुडकर देखा। सूरज की धूप मे टेकडी साफ दीखती थी। उस पर आदमी खडे थे। और गाडी के पहियो के अरे तक चमकते थे। कोई अन्दाज तीन मील तो वह आ गया होगा। धूप मे ताप आता जाता था कुर्ते पर से वास्कट उतारकर उसने कन्धे पर डाल ली और फिर चल पडा। अब खासी गरमी होने लगी। उसने सूरज की तरफ देखा। वक्त हो गया था कि कुछ खाने पीने को भी सोची जाती।

'एक पहर तो बीत गया। लेकिन दिन मे चार पहर होते है। अह, अभी क्या लौटना! अभी जल्दी है। लेकिन जूते उतार डालूँ। यह सोच उसने जूते उतारकर धोती मे खोस लिए और बढ चला। अब चलना आसान था।

सोचा, 'अभी तीन-एक मील और भी चला चलूँ तब दूसरी दिशा लूँगा। कैसी उम्दा जगह है। इसे हाथ से जाने देना हिमाकत है। लेकिन क्या अजब बात है कि जितना आगे बढो उतनी जमीन एक-से-एक बढ़कर मिलती जाती है।'

कुछ देर वह सीधा बढ़ा चला फिर पीछे मुडकर देखा तो टेकडी मुश्किल से दीख पडती थी और उस पर के आदमी रेंगती चींटी-से मालूम होते थे और वहाँ धूप मे जाने क्या कुछ चिलकता हुआ-सा दीख पडता था।

दीना ने सोचा, 'ओह, मैं इधर काफी बढ आया हूँ। अब लौटना चाहिए।' पसीना बेहद आ रहा था और प्यास भी लग आई थी।

यहाँ ठहरकर उसने गड्ढा किया, ऊपर घास का ढेर चिन दिया। उसके बाद पानी पीकर सीधा बाईं तरफ मुड गया। चला चलता गया, चला चलता गया। घास ऊँची थी और गरमी बढ रही थी। वह

थकने लगा। उसने सूरज की तरफ देखा। सिर पर दोपहरी आई थी।

सोचा, अब जरा आराम ले लेना चाहिए। वह बैठ गया। रोटी निकालकर खाई और कुछ पानी पिया लेटा नही कि कही नीद न आ जाय। इस तरह कुछ देर बैठ आगे बढ चला।

पहले तो चलना आसान हुआ। खाने से उसमे दम आ गया था। लेकिन गरमी तीखी हो चली और आँखो मे उसके ऊँघ सी आने लगी। तो भी वह चलता ही चला गया। सोचा कि तकलीफ घडी-दो-घडी की है, आराम जिन्दगी भर का हो जायगा।

इस तरफ भी उसने काफी लम्बी राह नापी। वह बाईं तरफ मुडने ही वाला था कि आगे जमीन नशेब की दिखाई दी उसने सोचा कि इस टुकड़े को छोडना तो मूर्खता होगी। यहाँ सनी की बडी ऐसी उगेगी कि क्या कहना! यह सोच उस टुकडे को भी नाप डाला और पार आकर गड्ढे का निशान बना दिया। फिर दूसरी तरफ मुड़ा। जो टेकडी की तरफ देखा तो ताप के मारे हवा कांपती मालूम हुई। उस कँपकँपी के धुँधकारे मे से यह टेकडी की जगह मुश्किल से चीन्ह पडती थी।

दीना ने सोचा कि क्षेत्र की ये दो भुजाये मैंने ज्यादा नाप डाली है। अब इधर कुछ कम ही रहने दूं। वह तेज कदमो से तीसरी तरफ बढा। उसने सूरज को देखा। सूरज कोई दो तिहाई अपना चक्कर काट चुका था और दीना अपने रकबे की तीसरी दिशा मे दो मील मुश्किल से तय कर पाया था। मुकाम से अभी वह दस मील दूर था उसने सोचा कि छोडो, जाने भी दो। मेरी जमीन की एक बाजू छोटी रह जायेगी तो छोटी सही। लेकिन अब सीधी लकीर मे मुझे वापस चलना चाहिए। जो ऐसे कही मैं दूर निकल गया तो बाजी गई। अरे, इतनी ही जमीन क्या थोड़ी है?

यह सोच दीना ने वहाँ तीसरे गड्ढे का निशान डाल दिया और टेकड़ी की तरफ मुँहकर ठीक उसी सीध मे चल दिया।

(६)

नाक की सीध बांधकर वह टेकड़ी की तरफ चला लेकिन अब चलते मुश्किल होती थी। धूप उसका सत ले चुकी थी। नगे पैर

जगह-जगह कट और छिल गये थे और टाँगे जबाब दे रही थी। जरा आराम करने का उसका जी हुआ, लेकिन यह कैसे हो सकता था ? सूरज छिपने से पहले उसे पहुँच जाना था और सूरज किसी की बाट देखता बैठा नही रहता। वह पल-पल नीचे ढल रहा था।

उसके मन मे सोच होने लगा कि यह मुझसे बडी भूल हुई। मैंने इतने पैर पसारे क्यो ? अगर कही वक्त तक न पहुँचा तो ?

उसने फिर टेकडी की तरफ देखा। फिर सूरज की तरफ। मुकाम से अभी वह दूर था और सूरज धरती के पास झुक रहा था।

दीना जी तोड चलने लगा। चलने मे साँस फूलती और कठिनाई होती थी, पर तज-पर-तेज कदम रखता गया। बढा चला, लेकिन जगह अब भी दूर बनी थी। यह देख उसने भागना शुरू किया। कन्धे से वास्कट फेक दी, जूते दूर हटाये, टोपी अलग की, बस साथ मे टेकने के तौर पर वह हल्का फावडा रहने दिया।

रह-रह कर सोच होता कि मैं क्या करूँ ? मैंने बिते से बाहर चीज हथियानी चाही। उसमे बना काम बिगडा जा रहा है। अब सूरज छिपने से पहले मैं वहाँ कैसे पहुँचूंगा ?

इस सोच और डर मे वह और हाँपने लगा। वह पसीना-पसीना हो रहा था, धोती गीली होकर चिपकी जा रही थी और मुँह सूख गया था लेकिन फिर भी वह भागता ही जाता था। छाती उसकी लुहार की धोंकनी की तरह चल उठी, दिल भीतर हथौड़े की चोट-सा धडकने लगा। उधर टाँगे बेबस हुई जा रही थी। दीना को डर हुआ कि इस थकान के मारे कही गिरकर ढेर न हो जाय।

यह हाल था, पर रुक वह नही सका। इतना भागकर भी अगर मैं अब रुकूँगा तो वे सब लोग मुझ पर हँसेंगे और बेवकूफ बनायेंगे, इसलिए उसने दौडना न छोड़ा, दौडे ही गया। आगे कोल लोगो की आवाज सुन पडती थी। वे उसको जोर-जोर से कहकर बुला रहे थे। इन आवाजो पर उसका दिल और सुलग उठा। अपनी आखिरी ताकत समेट वह दौड़ा।

सूरज धरती से लगा जा रहा था तिरछी रोशनी के कारण वह खूब बड़ा और लहू-सा लाल दीख रहा था। वह अब डूबा, अब डूबा। सूरज बहुत नीचे पहुँच गया था। लेकिन दीना भी जगह के बिल्कुल किनारे आ लगा था। टेकडी पर हाथ हिला-हिलाकर बढ़ावा देते

हुए कोल लोग उसे सामने दिखाई देते थे । अब तो जमीन पर रक्खी वह टोपी भी दीखने लगी, जिस पर उसकी रकम भी रक्खी थी । वही बैठा सरदार भी दिखाई दिया—वह पेट पकडे हँस रहा था ।

दीना को अपने सपने की याद हो आई ।

उसने सोचा कि हाय, जमीन तो काफी नाप डाली है, लेकिन क्या ईश्वर मुझे उसके भोगो के लिए बचने देगा ? मेरी जान तो गई दीखती है । मैं मुकाम तक अब नही पहुँच सकूँगा ।

दीना ने हसरत-भरी निगाह से सूरज की तरफ देखा । सूरज धरती को छू चुका था । कुछ हिस्सा डूब भी चुका था । वह बची-खुची अपनी शक्ति से आगे बढा । कमर झुकाकर भागा, जैसे कि टांगे साथ न देती हो । टेकडी पर पहुँचते-पहुँचते अँधेरा हो आया था । उसके मुह से एक चीख-सी निकल गई । ओह, मेरी सारी मेहनत व्यर्थ गई !'—यह सोचकर वह थमने को हुआ, लेकिन उसे सुन पडा कि कोल लोग अब भी उसे पुकार रहे है । उसे सहसा याद आया कि वे लोग ऊँचाई पर खडे हैं और उन्हे सूरज अब भी दीख रहा होगा । सूरज छिपा नही है, अगर्चे मुझको नही दीखता । यह सोचकर उसने लम्बी साँस खींची और टेकड़ी पर आँख मूँदकर दौडा । चोटी पर अभी धूप थी । पास पहुँचा और सामने टोपी देखी । बराबर सरदार बैठा वही पेट पकडे हँस रहा था । दीना को फिर अपना सपना याद आया और उसके मुँह से चीख निकल पडी । टाँगो ने जवाब दे दिया । वह मुँह के बल आगे को गिरा और उसके हाथ टोपी तक जा पहुँचे ।

'खूब ! खूब !' सरदार ने कहा, देखो, उसने कितनी जमीन ले डाली !'

दीना का नौकर दौड़ा आया और उसने मालिक को उठाना चाहा । लेकिन देखना क्या है कि मालिक के मुंह से खून निकल रहा है ।

दीना मर चुका था । कोल लोग दया से और व्यङ्ग से हँसने लगे ।

नौकर ने फावडा लिया और दीना के लिए कब्र खोदी और उसमे लिटा दिया । सिर से पाँव तक कुल छ फुट जमीन उसे काफी हुई ।